# लसतम पुख़

रूहानियों के आलमी पाया तखत इसतानबुल मे 11 दिन

राशिद शाज़

कभी वह दिन थे जब हम ध्रुव तारे से सूरज की कक्षा का कोण मालूम करते। तब रात और दिन के हर आने–जाने पर हमें अपनी पकड़ महसूस होती। आज हम कुतुब और अबदाल के जाल में फँसे अपने आप को परिस्थितियों के उथल–पुथल की दया पर पडा हुआ पाते हैं। आध्यात्मिक लोगों ने धीरे–धीरे हमारे खोजी मस्तिश्क को कुछ इस तरह प्रभावित किया कि हमने कुरआन की 'खोज की दावत' से मुँह मोड़कर कश्फ और मुजाहिदे को अपना उद्देश्य घोशित कर डाला। धर्म के नाम पर एक मृग–मरीचिका हमारा पीछा करती रही। परिणाम यह हुआ कि वास्तविक दुनिया में हम दुनिया की क़ौमों पर अपनी बढ़त जारी न रख पाए। नेतृत्व करने वाली उम्मत के पद से हम पदमुक्त हो गए।

जब तक सामान्य मुसलमानों पर यह वास्तविकता नहीं खुलती कि धार्मिक जीवन के प्रचलित प्रदर्शन, आध्यात्मिक लोगों की बैअत और चमत्कार के सिलसिले वास्तव में इस्लाम नहीं बल्कि इस्लाम के इन्कार की पक्की व्यवस्थाएँ हैं, जब तक मुहम्मदी मिशन की खोज के लिए एक सामान्य बेचैनी पैदा नहीं होती, एक नयी शुरुआत की व्यवस्था कैसे हो सकती है?

ISBN 978-93-81461-14-3
9 789381 461143

milli publications

कहने को तो यह एक सफरनामा है। हाँ, एक सच्चे जिज्ञासु के इस सफर में दीन (धर्म) और दीन की व्याख्या पर जिस तरह से विस्तृत चर्चा हुई है। उसने इस सफर की कहानी को बहुत महत्वपूर्ण बना दिया है। सूफीवाद पर अब तब जो आलोचनात्मक किताबें लिखी गयी हैं, उनकी हैसियत बाहर से अवलोकन करने की रही है और चूँकि सूफी लोग कहते हैं कि सूफीवाद समझ कर बरतने की चीज़ नहीं बल्कि बरत कर समझने की चीज़ है। इसलिए बाहर से की जाने वाली आलोचना को वह कोई महत्व नहीं देते। इस सफरनामें को यह विशेशता प्राप्त है कि यहाँ बोलने वाला आपको सुलूक वालों की उन मजलिसों और समय के महान औलिया के उन दरबारों में लेकर जाता है जहाँ सामान्य सालिकों के पर जलते हैं और स्वयं बोलने वाले के लिए भी यह सब कुछ इसलिए संभव हो सका है कि उसने सुलूक के मार्ग की कठिनाईयों में अपनी प्यारी उम्र का एक बड़ा हिस्सा खर्च किया है, विशेश रूप से जवानी के दिनों में अरब और ग़ैर अरब दुनिया के कुछ बड़े शेखों की जूतियाँ सीधी की हैं। इस तरह वह एक अन्दर का आदमी है, उसने सूफीवाद के रहस्यों को बरत कर समझने की कोशिश की है।

मुजाहिदा किसे कहते हैं? कश्फ क्या है? शेख से सम्पर्क, तवस्सुल और मुशाहिद–ए हक की वास्तविकता क्या है? सूफीवाद के मार्ग के विभिन्न सिलसिलों की दीनी हैसियत क्या है? और इन जैसे दसियों गहरे और चिन्तन भरे सवालों पर आधारित है। इस विवरण से पाठक को कभी कभी ऐसा लगता है कि खोज की इस प्रक्रिया में वह स्वयं भी भागीदार हो गया है।

इस्लाम क्या है और उसे क्या से क्या बना दिया गया है। यदि किसी को इस दुर्घटना के बारे में जानना हो तो उसके लिए केवल इसी किताब का अध्ययन पर्याप्त होगा। ऐसा इसलिए कि सूफियों की इस दिलचस्प कहानी में सूफीवाद के प्रत्यक्ष रूप के साथ–साथ उसके आन्तरिक रूप बल्कि आन्तरिक बुराईयाँ भी बाहर आ गयी हैं।

राशिद साज़ उन गिने–चुने चिन्तकों में से हैं जिन्हें पूरबी और पश्चिमी विद्याओं का सीधे अध्ययन करने का सौभाग्य और विभिन्न संस्कृतियों से मेल–जोल का पर्याप्त अवसर मिला है। इन्होंने मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़ से अंग्रेजी साहित्य में पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त की। अरबी और इस्लामी विद्या के अध्ययन के लिए वह सूडान गए जहाँ उन्होंने मरकज़–ए इस्लामी अफ्रीकी (वर्तमान अन्तर्राश्ट्रीय अफ्रीकी विश्वविद्यालय) और अरबी भाशा और साहित्य की शिक्षा की विश्वस्तरीय संस्था अल–मअहदुल आली, खरतूम से शिक्षा प्राप्त की।

सन् 1987 में अपने छात्र जीवन के दौरान आपने भारत में इस्लाम के पुनर्जागरण का घोशणापत्र प्रकाशित किया जिसने भारतीय मुसलमानों के शिथिल चिन्तन के समुद्र में हलचल की स्थिति पैदा कर दी। सन् 1991 में व्यावहारिक क़दम के रूप में नई दिल्ली में भारतीय मुसलमानों का एक देशव्यापी सम्मेलन आयोजित हुआ। सन् 1993 में आपने मिल्ली पार्लियामेन्ट की बुनियाद डाली जिसके विभिन्न सत्रों और कॉन्फ्रेन्सों ने भारतीय मुसलमानों को एक नया राजनैतिक रवैया और आत्मविश्वास प्रदान किया। सन् 1994 में नई दिल्ली से ''मिल्ली टाइम्स इण्टरनेशनल'' को प्रकाशित करने के बाद आप निरन्तर इसकी निगरानी करते रहे। सन् 2004 ई0 में इस्लामी चिन्तन को जगाने के लिए आप ने द्विमासिक पत्रिका 'फ्यूचर इस्लाम' प्रकाशित किया जो एक साथ उर्दू अंग्रेजी और अरबी भाशाओं में इण्टरनेट पर प्रकाशित होता है। सन् 2005 में आपने बदलते अन्तर्राश्ट्रीय परिदृश्य पर विचार विमर्श के लिए लंदन में एक कान्फ्रेन्स आयोजित की जिसमें क्रान्तिकारी समूहों को आत्म–अवलोकन और एक नये आरम्भ का आह्वान किया।

न्याय पर आधारित एक नयी दुनिया की स्थापना के लिए विश्व स्तर पर होने वाली विभिन्न गतिविधियाँ और विभिन्न क़ौमों के मंचों पर भी आप सक्रिय रहे हैं। इस सम्बन्ध में आपने संसार के अधिकतर देशों की यात्रा भी की है।

मुस्लिम चिन्तन और मुस्लिम उम्मत की समस्याओं पर आपकी क़लम से उर्दू, अरबी और अंग्रेजी में सैकड़ों छोटे–बड़े लेख और लगभग तीन दर्जन से अधिक छोटी–बड़ी किताबें दिल्ली, बेरुत, लंदन और रियाज़ से प्रकाशित हो चुकी हैं।

www.barizmedia.com

# लस्तम पोख़

रूहानियों (आध्यात्मिक लोगों) के अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र इस्ताम्बूल में ग्यारह दिन

# लस्तम पोख़

रूहानियों (आध्यात्मिक लोगों) के अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र इस्ताम्बूल में ग्यारह दिन

राशिद शाज़

मिल्ली पब्लिकेशन्ज़
नई दिल्ली

प्रकाशन वर्ष 2013 ई0


| | |
|---|---|
| किताब का नाम | लस्तम पोख़ |
| लेखक | राशिद शाज़ |
| मूल्य | 300 रूपये |
| मुद्रक | बोस्को सोसाइटी फॉर प्रिन्टिंग |
| | नई दिल्ली |

प्रकाशक
मिल्ली पब्लिकेशन्ज़
मिल्ली टाइम्ज़ बिल्डिंग
अबुल फ़ज़्ल एन्कलेव, जामिया नगर, नई दिल्ली–25

Milli Publications
Milli Times Building, Abul Fazl Enclave, Jamia Nagar, New Delhi-25
E-mail: millitimes@gmail.com, URL: www.barizmedia.com
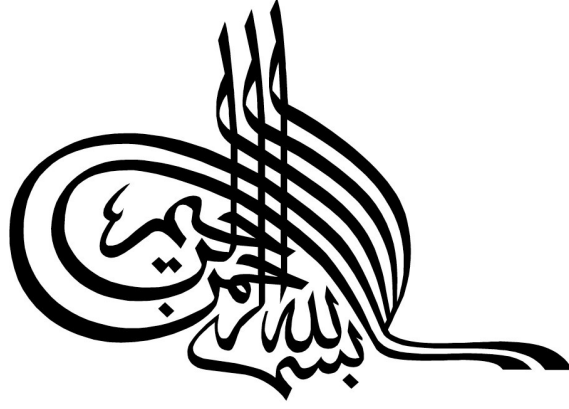
## ताकि सनद रहे

यह किताब वास्तविक अवलोकन पर आधारित है, हाँ अधिक विस्तार से बचने के लिए कुछ चरित्रों को कुछ दूसरे चरित्रों में मिला दिया गया है ताकि एक लम्बे बयान में पाठक का ध्यान वार्ता की धुरी पर केंद्रित रह सके, और इस तरह कुछ वास्तविक व्यक्तियों की मूल पहचान को गुप्त रखने का रास्ता भी निकल आए। इसके बावजूद यदि किसी व्यक्तिगत, सामयिक अथवा स्थानीय समानता के कारण किसी को ऐसा महसूस हो कि उसका व्यक्तित्व यहाँ बहस में आ गया है तो उसे मात्र संयोग समझ लेना चाहिए। मैंने यथाशक्ति इस बात की पूरी कोशिश की है कि अपने अवलोकन। का निचोड़ कुछ इस तरह बिना किसी कमी-बेशी के आपके सामने रख दूँ कि न तो वास्तविकता पर आँच आए और न किसी दिल को ठेस पहुँचे।

# विषय सूची

# اللهم ارنى الأشياء كما هى

मेरे अल्लाह! चीज़ों को मुझे वैसा ही दिखा जैसी कि वे हैं।
(हदीस)

# 1
# बुलावा

इस्ताम्बोल में मेरे ठहरने का यह तीसरा दिन था। ग्राण्ड जवाहर होटल की लॉबी में अच्छी-खासी चहल-पहल थी। अभी कॉन्फ्रेन्स को शुरू होने में काफी समय बाक़ी था। उलमा की अन्तर्राष्ट्रीय सभा में भाग लेने वाले छोटी-छोटी टोलियों में परस्पर अनौपचारिक मुलाकातों और विचार-विमर्श में व्यस्त थे। कहीं तरबूश (तुर्की टोपियों) के जलवे दिखते, कहीं सफेद पगड़ियों की सज-धज, कहीं तिरछी टोपियों की भरमार, साधु वस्त्रों की इस भीड़ में सूट और टाई की शानो-शौकत भी कभी-कभी अपनी मौजूदगी का एहसास दिला जाती थी। उलमा के लिबासों के इस दृश्य को देखकर ऐसा लगता था, जैसे दिव्य आत्माओं का कोई समूह ज़मीन पर उतर आया हो।

अभी मैंने लॉबी की ओर क़दम बढ़ाया ही था कि एक अधेड़ उम्र के दुबले-पतले व्यक्ति ने मेरा रास्ता रोका।

अस्सलामु अलैकुम! मेरे पास आपके लिए एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सन्देश है बल्कि इसे निमन्त्रण पत्र कह लीजिए।

मैंने थोड़ा हैरत और आश्चर्य से उसकी तरफ देखा। नस्ली तौर पर तो वह कोई सामान्य तुर्क मालूम हो रहा था लेकिन उसके चेहरे पर शान्ति की जो आभा दिखाई दे रही थी, उससे ऐसा लगता था, मानो वह किसी और दुनिया का वासी हो। कहने लगा कि मैं आपके लिए पैग़म्बर (सल्ल०) के मेज़बान अबू अय्यूब अंसारी का एक सन्देश लेकर हाज़िर हुआ हूँ। मैं उनका सन्देशवाहक हूँ। उन्होंने आपको बुलाया है। अभी और इसी समय। क्या आप मेरे साथ चलना चाहेंगे?

अभी मैं कुछ समझने की ही कोशिश कर रहा था कि वह कहने लगा कि यहाँ दुनिया भर से कोई 400 उलमा आए हुए हैं लेकिन बुलावे का पाँसा केवल आपके नाम निकला है। अभी यह बात-चीत चल ही रही थी कि एक स्थानीय तुर्क जो परिचित थे, हमारे पास आ गए। शायद उन्होंने मेरे संकोच को भाँप लिया हो, इशारों-इशारों में उन्होंने अपनी सहमति की मुहर लगा दी और मैंने उस अजनबी सन्देशवाहक के साथ चलने की हामी भर ली।

बाहर पोर्टिको में एक नौजवान जोड़ा टैक्सी में हमारी प्रतीक्षा कर रहा था। हम लोगों को देखते ही दोनों आदर भाव से बाहर निकल आए। सैय्यदी अमीन ने उन लोगों से मेरा परिचय विशिष्ट अतिथि की हैसियत से कराया और हमारी टैक्सी आगे चल पड़ी।

अब जो सफर में बात-चीत का सिलसिला चला तो सैय्यदी अमीन के रहस्यपूर्ण व्यक्तित्व से परतें उठने लगीं। यह अजनबी सन्देशवाहक मरमरा विश्वविद्यालय में इतिहास का प्रोफेसर था। कोई 15—20 मिनट के बाद हमारी टैक्सी एक घनी आबादी वाले क्षेत्र में जा रुकी। सैय्यदी अमीन बिजली जैसी तेज़ी के साथ कहीं गायब हो गए। कुछ क्षणों बाद एक पुरानी सी छोटी कार में आ गए। नौजवान जोड़े ने यहीं उनसे विदाई ली। सैय्यदी अमीन ने उन दोनों के माथे पर स्नेहपूर्ण चुम्बन लिया। उन लोगों ने उनके हाथ को चूमना चाहा, लेकिन वह बड़े अच्छे ढंग से टाल गए। ऐसा लगता था कि सैय्यदी अमीन के साथ उन दोनों का सम्बन्ध श्रद्धा और प्रेम का है। तो क्या सैय्यदी अमीन वास्तव में कोई आध्यात्मिक (रुहानी) गुरु हैं जिन्होंने प्रोफेसरी का लबादा ओढ़ रखा है? अभी मैं इसी सन्देह में पड़ा हुआ था कि उन्होंने स्टेरिंग को जल्दी से झटका दिया और हमारी कार अपनी मंजिल की ओर चल पड़ी।

हज़रत अबू अय्यूब अंसारी के मक़बरे के परिसर में जब हमने प्रवेश किया तो उस समय वहाँ कुछ अधिक चहल-पहल न थी। व्यापक क्षेत्र में फैला हुआ प्राचीरों और कब्रों का यह सिलसिला, जैसा कि व्यवस्था और प्रबन्धन से स्पष्ट हो रहा था, दिन ढलने के बाद तीर्थ यात्रियों की भीड़ यहाँ लग जाती होगी। अन्दर ज़ियारत करने वाले दूर तक व्यवस्थित पंक्तियों में अपनी बारी की प्रतीक्षा कर रहे थे। अभी मैं उस पंक्ति की ओर बढ़ने ही वाला था कि उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा, जेब से पिछले दरवाज़े की चाभी निकाली, अपने हाथों से दरवाज़ा खोला, चौखट पर अपने माथे को कुछ दायीं और कुछ बायीं ओर से स्पर्श किया और फिर मेरा हाथ पकड़े हुए अन्दर दाख़िल हो गए। व्यवस्था सँभालने वालों को स्थानीय भाषा में कुछ निर्देश दिए और फिर दूसरी चाभी से हज़रत अबू अय्यूब की क़ब्र के पास विशेष कमरे का दरवाज़ा भी खोल दिया। इस विशेष कृपा पर अभी मैं चकित ही था कि उन्होंने अपनी कोट की जेब से कैमरा निकाला और एक व्यक्ति को आदेश दिया कि वह हम दोनों की इस हाज़िरी को उनके कैमरे में सुरक्षित कर ले। कब्र के आस-पास ज़ियारत करने वालों की सुविधा के लिए क़ालीनें भी बिछी थीं। ज़ियारत करने वालों के छोटे-छोटे समूह विभिन्न जगहों पर गुणगान और वजीफ़े के अमल में व्यस्त थे। हाँ, भीड़ उस स्थान पर अधिक थी जहाँ शीशे के फ्रेम में हज़रत अबू अय्यूब के क़दम के निशान लटकाये गए थे। क़दम के निशान के आस-पास दुआ पढ़ने या माँगने वालों की इस भीड़ को देखकर मैंने अपने मेज़बान से पूछा, ये लोग यहाँ क्या पढ़ रहे हैं? क्या तुम्हारे यहाँ कोई क़दम की दुआ भी होती है? मेरे इस सवाल पर सैय्यदी अमीन ने रहस्यपूर्ण खामोशी अपना ली।

मज़ार की इमारत से बाहर पानी की सबील (प्याऊ) पर कुछ लोग पानी पी रहे थे, कुछ वुज़ू करने में व्यस्त थे और कुछ सबील की जालियों को श्रद्धापूर्वक पकड़े हुए धीमी आवाज़ में दुआओं में मग्न थे। इसी मस्जिद की छाया में सैय्यदी अमीन का कार्यालय भी

स्थित था जहाँ हम लोगों ने चाय पी। मेज़ की दराज़ से सैय्यदी अमीन ने रोटी का एक टुकड़ा निकाला। फिर उसके दो टुकड़े किए। एक टुकड़ा मेरी ओर बढ़ाते हुए कहा, 'तबर्रुक तबर्रुक' (प्रसाद)! अर्थात यह इस विशेष आतिथ्य के अवसर पर मिल रहा है, इसे खा लो। चाय के साथ सूखी रोटी का यह टुकड़ा खाया गया। चलते हुए उन्होंने मुझे पत्थर का एक टुकड़ा दिया जिसपर विभिन्न रंगों से बचकाना निरीह हाथों ने अबू अय्यूब की कब्र और आस-पास के निशानात का चित्र बना रखा था। कहने लगे रख लो फ़क़ीर का यह उपहार, इस सफर की यादगार रहेगा। वैसे तो यह कला का नमूना है लेकिन यह पैग़म्बर के मेज़बान की कब्र से सम्बद्ध है। इसी बीच सैय्यदी अमीन का फोन बजा। बात कर चुके तो कहने लगे कि मेरी बीवी और बेटी हज़रत अबू अय्यूब के भारतीय मेहमान से मिलने की इच्छुक थीं। वह दोनों यहाँ आना चाहती थीं लेकिन अभी-अभी फोन आया कि उन्हें एक आपातकालीन परिस्थिति के कारण अपने कार्यक्रम में परिवर्तन करना पड़ा है।

ज़ियारतिक मबरूक या राशिद زیارتک مبروک یا راشد (तुम्हारी ज़ियारत बरकत वाली है ऐ राशिद !) सैय्यदी अमीन ने ज़ोर से मस्ताना नारा लगाया। उनकी आँखों में वह चमक पैदा हुई जो किसी महत्वपूर्ण मुठभेड़ में सफलता पर होती है। मैंने उत्तर में आभार प्रकट किया। होटल के मुख्य द्वार तक वह मुझे अपनी कार में लेकर आए, भीगी आँखों के साथ विदाई के लिए गले मिले। फिर زیارتک انتہیٰ ज़ियारतिक इन्तिहा! (तुम्हारी ज़ियारत पूरी हो गई) कहते हुए उनकी आँखों में वही पुरानी चमक पैदा हुई और कुछ ही क्षणों में पैग़म्बर के मेज़बान का अजनबी सन्देशवाहक अपनी पुरानी सी कार में उस जगह से चला गया। यह पत्थर यदि मेरी जेब में न होता तो मैं इसे मात्र एक सपना समझता, लेकिन अभी तो मुँह में तबर्रुक वाली रोटी का स्वाद भी बाक़ी था।

# 2
# दिव्य सृष्टि

अन्दर कान्फ्रेन्स हॉल का दृश्य आज काफी भिन्न था। इमसें भाग लेने वालों के बीच बैलेट पेपर बंट रहे थे। उन्हें नये सत्र के लिए नये अध्यक्ष और नये पदाधिकारियों का चुनाव करना था। लेकिन यह बात समझ में न आती थी कि उलमा और बुद्धिजीवियों की इस विशाल भीड़ से कुछ नामों का चुनाव कैसे किया जाए, इसलिए प्रबन्धकों ने इसका समाधान यह निकाला था कि वह स्वयं ही कुछ लोगों को संभावित उम्मीदवार के रूप में प्रस्तुत कर दें। लेकिन उनमें बहुत से लोग ऐसे भी थे जिनका प्रभाव-क्षेत्र स्थानीय था जो अपने-अपने शहरों में किसी मस्जिद के खतीब (उपदेशक) या स्थानीय मुफ्ती होने के कारण काफी प्रसिद्ध और प्रभावशाली थे। हाँ बाहर की दुनिया उनके स्तर और उनके पद से अपरिचित थी। सामान्य भागीदारों के लिए उम्मीदवारों की यह सूची केवल नामों का समूह था, वह इसके पीछे स्थित व्यक्तित्व से पूर्णतः अपरिचित थे। फिर किसी विशेष नाम को वरीयता देने का कोई आधार समझ में नहीं आता था। अभी मैं इसी उधेड़बुन में नामों की इस भावहीन सूची के पन्ने उलट रहा था कि माइक पर यह आवाज़ दी गई कि जिन लोगों के नाम सूची में सम्मिलित हैं वह बारी-बारी से स्टेज पर सामने आएँ और अपने आप को इस सभा में परिचित कराएँ। कुछ लोगों के लिए यह काम कठिन था, कुछ उसे हँसी-खुशी झेल गए। अच्छी-खासी दौड़-धूप के बाद भी यह गुत्थी न सुलझ सकी कि उम्मीदवारों की इस लम्बी नामित सूची में वोट का हक़दार कौन है। हाँ उपाध्यक्षों के लिए यह बात पहले से ही तय कर ली गयी थी कि पहले की तरह उनमें एक शिया लोगों में से होगा और एक पद पर इबाज़ी सम्प्रदाय के आलिम को जगह दी जाएगी क्योंकि अध्यक्ष के पद पर सुन्नी आलिम को प्रामाणिकता इसी तरह मिल सकती थी। हॉल के एक कोने से जहाँ महिलाओं का जमघट था। विरोधस्वरूप मुरश्शहात मुरश्शहात की आवाज़ उठ रही थी। उन्हें इस बात की शिकायत थी कि उम्मीदवारों की सूची में उनकी क़ौम की जानबूझ कर अनदेखी की गयी है। आयोजक लोकतन्त्र की कला में पर्याप्त रूप से निपुण मालूम हो रहे थे। वह संभवतः इस बात से अवगत थे कि विभिन्न विचारों के लोगों की आवाज़ों की यह गूँज, जिसपर विचार स्वतन्त्रता का धोखा होता है, यह सब कुछ कुछ की क्षणों में ठण्डा पड़ जाएगा और अन्त में लोकतन्त्र के सन्दूक़ से वही कुछ निकलेगा जो वह चाहते हैं।

कॉन्फ्रेन्स हॉल के ठीक पीछे जहाँ चाय की व्यवस्था थी, अब लोग गोल मेज़ों के बीच घेरा बनाकर बैठने लगे थे। क्या देखता हूँ कि एक अत्यन्त सजा-धजा आध्यात्मिक

व्यक्तित्व जिसके एक हाथ में एक सुन्दर सी कोमल छड़ी और दूसरे हाथ में एक क़लम है, कुछ किताबें लिए एक मेज़ पर बैठे हैं। कभी आसमान में घूरते हैं और कभी अपनी डायरी में कुछ लिखते जाते हैं। ऐसा लगा जैसे देखे-दिखाए से हों, शायद उनसे कहीं पहले भी मुलाक़ात रही हो। अच्छा तो यह वही हज़रत हैं जिन्हें इस बात की शिकायत है कि उलमा की इस अंतर्राष्ट्रीय संगठन में सूफ़ियों को प्रतिनिधित्व से वंचित रखा गया है। शैख़ अहमद जीलानी इस्ताम्बोल में एक व्यापक प्रभाव क्षेत्र रखते हैं। कल शाम जब वह मिले थे तो उन्होंने मुझे बताया था कि वह जीलानी समूह के नेता ही नहीं बल्कि अब्दुल क़ादिर जीलानी के वंशज भी हैं और उन्होंने अभी पिछले दिनों अब्दुल क़ादिर जीलानी की क़ुरआन की व्याख्या छह खण्डों में प्रकाशित करने का सौभाग्य प्राप्त किया है। लेकिन कल जब उनसे मुलाकात हुई थी तो वह सूट और टाई पहने हुए थे, आज जो सूफ़ी टोपी के साथ पूरबी लिबास में प्रकट हुए और हाथ में छड़ी थाम ली तो उनके आस-पास पवित्रता की प्रतिच्छाया का एक बाह्य छद्म प्रकट हो गया, इसलिए पहली नज़र में मुझे पहचानने में कठिनाई हुई।

कुछ अधिक समय नहीं गुज़रा जब उलमा का लिबास पहने हुए लोगों का यह दृश्य मुझे भय और संशय में डाल देता था। तब उलमा और सूफ़ियों के बारे में मेरा विचार दूर के जलवे पर आधारित था। अब जो निकट से उन्हें देखने का अवसर मिला तो वह डर समाप्त हो गया जो अजनबी होने के कारण पैदा होता है और वह भय भी दूर हो गया जिसका कारण ज्ञान और ईश-परायणता का काल्पनिक छद्म था। करीब से देखने पर पता चला कि इस जुब्बा और पगड़ी के पीछे जिसका तक़द्दुस दिल और दिमाग़ पर रौब डाल रहा था, उस लिबास में तो सामान्य लोग रहते हैं और कभी-कभी तो बहुत ही सामान्य लोग। उलमा की इस कॉन्फ्रेन्स में तुर्की टोपियों और पगड़ियों के इस असाधारण प्रदर्शन का एक कारण यह भी था कि आयोजकों ने इसमें भाग लेने वालों से यह विशेष अपील कर रखी थी कि वह इस अवसर पर अपने-अपने देशों में प्रचलित उलमा के लिबास को पहनकर आने का विशेष रूप से प्रबन्ध करें। इसलिए उलमा के पहनावे धारण करने वालों की इस बहार पर कभी-कभी मौलवियाना फैशन शो का गुमान होता था। उद्घाटन सभा में जहाँ प्रेस के कैमरे कहीं अधिक सक्रिय होते हैं, पहली क़तार में तरबूश या तुर्की टोपी वालों ने कुछ इस शान से अपनी जगह सँभाली कि कैमरे की क्लिक उन्हीं के आसपास केन्द्रित रही। प्रेस वालों की भी बहरहाल अपनी मजबूरी थी। उलमा की इस बैठक का प्रतिनिधित्व जुब्बा और पगड़ी के अतिरिक्त भला और किस चीज़ से हो सकता था।

तो क्या उलमा का यह विशिष्ट लिबास, यह टोपी और पगड़ी का प्रदर्शन, शरीअत की ओर से लागू किए हुए किसी विशिष्ट प्रतिबन्ध का अंग हैं? मैंने तुर्की टोपी पहने एक नौजवान मिस्री व्यक्ति से पूछा। पहले तो वह इस सवाल पर ही परेशान हुए, फिर किसी

क़दर गंभीरतापूर्वक कहने लगे : हमारे विचार में इसका सम्बन्ध धर्म से कम और संस्कृति से अधिक है।

कौन सी संस्कृति? वह जो दूसरों की अजनबी संस्कृति से प्रभावित हुई या वह संस्कृति जिसकी बुनियादें क़ुरआन मजीद और पैग़म्बर के आदर्श जीवन में पायी जाती हैं।

फ़रमायाः हर क़ौम की एक प्रतीत होती है जो उसके पहनावे, रहन-सहन और जीवनशैली से प्रदर्शित होती है। इसलिए इस्लामी उलमा का भी एक लिबास है जिससे वह दूर ही से पहचाने जाते हैं। सामान्य लोग उनसे उच्च्व नैतिकता और चरित्र की आशा रखते हैं और वह अपने इस उच्च्व पद के कारण लोगों के बीच अपने आप को एक बेहतरीन आदर्श के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

लेकिन मिस्र हो या लेबनान, जार्डन हो या सीरिया, इन सभी देशों में ईसाई, यहूदी और मुस्लिम उलमा के जुब्बा और पगड़ी में कुछ अधिक अन्तर नहीं, सिवाय इसके कि ईसाइयों और यहूदियों की टोपियाँ भिन्न होती हैं और वह सलीब (क्रॉस) के निशान और दूसरी निशानियों से पहचाने जाते हैं, बल्कि ईसाई उलमा तो कभी-कभी मुस्लिम उलमा से इतनी समानता रखते हैं कि अगर उनके गले में सलीब लटकी हुई न हो तो उनके शैख़ुल इस्लाम होने का धोखा होता है ।

मैं जार्डन और सीरिया के बारे में तो नहीं कहता लेकिन हमारे यहाँ मिस्र में अज़हर विश्वविद्यालय के उलमा अपनी विशेष तुर्की टोपी के कारण पहचाने जाते हैं और अब इसे इतनी लोकप्रियता मिल गयी है कि तुर्क ख़िलाफत के पतन के बाद इस तरबूश (तुर्की टोपी) ने लाल रंग की उस्मानी टोपी की जगह ले ली है।

अच्छा यह बताइये कि पहनावे की तराश-ख़राश तो समय के साथ बदलती रहती है। कभी लम्बी टोपी की बजाए तुर्की टोपी फैशन में आ गयी और कभी इमामों ने अपनी सज-धज के नये-नये तरीक़े पैदा किए। हाँ, यह प्रश्न महत्वपूर्ण है कि उलमा का पहनावा सामान्य लोगों से अलग कब से होने लगा, क्योंकि पैग़म्बर (सल्ल०) या सहाबा के ज़माने में तो इसकी कोई मिसाल नहीं मिलती ।

मेरे इस सवाल पर शेख यासिर ने कुछ परेशानी महसूस की। देखिए मैं इतिहास का आदमी नहीं हूँ, हाँ, इतना अवश्य जानता हूँ कि सदियों से इस्लाम धर्म के उलमा का एक विशिष्ट पहनावा, विशिष्ट रहन-सहन और ज्ञान और तक्वा (ईश-परायणता) का स्तर सामान्य लोगों से अलग और ऊँचा रहा है। यदि प्रत्येक व्यक्ति को इस बात की आज़ादी मिली हुई है कि वह जैसा लिबास चाहे पहने, चाहे तो पतलून पहने और चाहे तो जलाबिया अपनाये, तो यदि उलमा ने अपने लिए कोई विशेष लिबास अपना लिया है तो उन्हें आप इस अधिकार से क्यों वंचित रखना चाहते हैं?

बात लिबास की आज़ादी की नहीं बल्कि आपत्ति तो विशिष्ट पहनावे पर ज़िद करने पर है। क्या आपने सम्मेलन के आयोजकों की यह हिदायतें नहीं पढ़ीं जिसमें प्रतिभागियों

से निवेदन किया गया है कि वह उद्घाटन समारोह में अपने-अपने देशों में प्रचलित उलमा वर्ग का लिबास पहनकर सम्मिलित हों। क्या यह इस बात की ओर इशारा नहीं करता कि हम एक तरह की सतही मानसिकता के शिकार हो गए हैं? हम संभवतः बेलबूटे वाली टोपी के माध्यम से अपनी तिरछी टोपी की कमी पूरा करना चाहते हैं। हमारा पूरा ध्यान तुर्की टोपी के सँवारने और उसकी तराश-खराश पर केन्द्रित होकर रह गया है। इस परिस्थिति ने हमारे सिरों को व्यवहारिक रूप से कैप स्टैण्ड बना दिया है। यह बात हमारी निगाहों से ओझल हो गयी है कि सिर का असली काम चिन्तन और नये विचारों का पोषण है, टोपी तरबूश या ग़र्रा (घमंड) रखना नहीं।

मेरी बात-चीत यद्यपि शेख यासिर की तबीयत पर भारी लग रही थी लेकिन वह दिलचस्पी से मेरी बातों को सुन रहे थे। कहने लगे, अच्छा यह बताइये, उलमा यदि अपने लिबास को छोड़ दें तो सामान्य लोग मार्गदर्शन के लिए किसके पास जायेंगे? और फिर उलमा का वर्ग ही आखिर आलोचना का विषय क्यों बना रहता है। डाक्टर, वकील, न्यायाधीश, अधिकारी हर कोई अपने विशिष्ट लिबास से पहचाना जाता है।

तो क्या उलमा भी दूसरे व्यवसायों के विशेषज्ञों की तरह फनकार का एक वर्ग हैं, जो मुक्ति के आध्यात्मिक कारोबार में विशेष योग्यता रखते हैं? मैंने वार्ता को तार्किक नतीजे तक पहुँचाने की कोशिश की। मैंने कहा कि यदि ऐसा है तो इस्लाम इसी स्थिति को मिटाने के लिए आया था। फिर यह कैसे हुआ कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की मृत्यु के 3—4 सदियों बाद ही विचारों की स्वतन्त्रता वाले इस धर्म में उलमा और सूफियों के माध्यम से पुरोहितवाद ने अपनी जगह बना ली?

शेख यासिर की कॉफी समाप्त हो चुकी थी और मेरे स्थानीय मेज़बान भी मुझे लेने के लिए आ गए थे जिनके साथ आज शाम मुझे कुछ दोस्तों से मुलाक़ात और कुछ जगहों की सैर के लिए जाना था।

# 3
# वह आने वाले हैं

बाहर का मौसम ऐसा था कि आसमान पर छिटफुट बादल छा रहे थे। हल्की-फुल्की खुशगवार बूँदाबांदी हो रही थी। आमिर मुझे अपने साथ लेकर समुद्र के तट पर स्थित एक मनोरम कहवाख़ाने में आए। गोल्डन हार्न का यह कहवाख़ाना शाम ढलने पर बुद्धिजीवियों और कलाकारों का मेला बन जाता है। चाय की प्याली में तूफान उठाने का मुहावरा संभवतः ऐसी ही जगहों के लिए बनाया गया है। कुछ साल पहले तक एक ही तरह के बुद्धिजीवी यहाँ दिखायी देते थे, लेकिन अब नये राजनीतिक परिवर्तन के बाद कभी स्कार्फ और कभी बिना दाढ़ी के तरबूश (तुर्की टोपी) की झलक भी दिखायी दे जाती है। खानदानी तौर पर आमिर का सम्बन्ध सईद नूरसी के एक समूह से है लेकिन वह इधर कुछ वर्षों से तुर्की के एक नये उभरते हुए व्यक्तित्व हारून यह्या के शिष्यों में सम्मिलित हो गए हैं। चाय के दौरान उनका मोबाइल लगातार बजता रहा। पता चला कि आधी रात को बारह बजे स्टूडियो में हारून यह्या के साथ मेरी दो घंटे की मुलाकात और बातचीत की व्यवस्था पूरी हो चुकी है। उसने बताया कि यह बातचीत स्टूडियों में इसलिए आयोजित की जा रही है ताकि उसे टेलीविजन के दर्शक बड़े पैमाने पर देख सकें। निर्धारित समय पर हम लोग स्टूडियो पहुँचे। रात के समय पहाड़ी से नीचे समुद्र का दृश्य आधी रात की झिलमिलाती रौशनी में माहौल पर एक रहस्यमता का वातावरण आच्छादित कर रहा था। ऊँचे-नीचे रास्तों और विभिन्न सीढ़ियों को पार करते हुए जब हम भवन में दाख़िल हुए तो कार्यकर्ताओं की सक्रियता से ऐसा महसूस हुआ कि रात को काम करने वालों की ताज़ादम टीम ने अपनी ज़िम्मेदारी सँभाल ली हो। सामने के कमरे से नीले रंग के सूट में हारून यह्या बरामद हुए। आधी रात का समय था और उनके चेहरे पर थकावट का कोई निशान न था। जबकि मैं किसी हद तक थका हुआ रात-दिन की दिनचर्या का गुलाम, अपने आप को अपनी इस आराम पसन्दी पर दिल ही दिल कोस रहा था। गर्मजोशी के साथ स्वागत और इससे कहीं गर्मजोशी के साथ गले मिलने के बाद उन्होंने मेरी दाढ़ी को चूम लिया। छूटते ही कहने लगे कि इन्शा अल्लाह अगले 10 वर्षों के अन्दर हमारे बीच महदी प्रकट हो जाएगा। अभी मैं इस अचानक हमले से सँभलने भी न पाया था कि उन्होंने अपनी इस शुभ-सूचना पर एक बार फिर ज़ोर दिया। हाँ, विश्वास करो वह बस आने ही वाले हैं। 10 वर्ष के अन्दर, इन्शा अल्लाह तुम देख लेना।

जी वह तो आ चुके हैं, मैने मज़ाक करते हुए धीरे से कहा। अनुवादक ने संभवतः मसलेहत या ग़लती से मेरी शुभ-सूचना के उत्तर की सुनी-अनसुनी कर दी।

आशा थी कि विद्वान लेखक के साथ 2 घंटे के दौरान इस्लाम और मुसलमानों के बारे में बहुत से महत्वपूर्ण मामलों पर विचार-विमर्श होगा। लेकिन आरम्भ ही मैं महदी के प्रकट की शुभ-सूचना से कुछ अनुमान होने लगा कि ऊँट किस करवट बैठेगा। पिछली रात विद्वान लेखक की ताजा-तरीन किताब *"तुर्क इस्लामी यूनियन की स्थापना का निमन्त्रण"* मुझे देखने को मिली थी। इस किताब में लेखक ने तुर्क क़ौम और इस्लाम के पुनर्जागरण के लिए तुर्कों के नेतृत्व में एक बार फिर इस्लामी दुनिया के नये सिरे से गठन की योजना प्रस्तुत की गयी थी। इसलिए बात इसी हवाले से शुरु हुई। इसमें सन्देह नहीं कि तुर्क क़ौम का ऐतिहासिक महत्व और उस्मानी तुर्कों के हाथों में कोई पाँच सौ वर्षों तक इस्लामी दुनिया के नेतृत्व के कारण किसी भी नयी योजना में उनका दावा काफी मज़बूत है। लेकिन इस्लामी दुनिया की इस नयी एकता का आधार तुर्क राष्ट्रवाद होगा या इस्लाम या दोनों? फिर दूसरी क़ौमों को चाहे वह हिन्दी हों, या ईरानी, अरब हो या अफ़्रीकी, उन्हें केन्द्रीय और प्रभावी भूमिका से किस तरह वंचित किया जा सकता है और सबसे बढ़कर यह कि इस्लामी दुनिया की फ़िक़्ही और मसलकी गिरोहबन्दियाँ, शीया-सुन्नी और हनफ़ी, वहाबी का बँटवारा किसी भी नयी पुनरुत्थान योजना को आगे बढ़ने से रोक देता है। यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है कि भविष्य की इस्लामी दुनिया में किस फ़िक़्ह, मसलक या समूह को स्पष्ट दीन के सरकारी साँचे की हैसियत से स्वीकार किया जायेगा। हारून यह्या ने इस प्रश्न का अपने आप में कोई समाधान प्रस्तुत करने की बजाए उसे भविष्य के महदी के हवाले कर दिया। कहने लगे, महदी के प्रकट होने के बाद यह सभी प्रश्न अपना महत्व खो देंगे।

अल्लाह करे ऐसा ही हो लेकिन हमारा समकालीन इतिहास आपसी फ़िक़्ही झगड़ों से रक्तरंजित हैं। लगभग 1000 वर्ष हुए जबसे हम विभिन्न तरीक़ों और फ़िक़्ही खेमों में बँटे हैं हमारे बौद्धिक और राजनीतिक पतन रोकने से नहीं रुका। अभी जल्द ही की बात है अफग़ानिस्तान में हमने ज़माने की सबसे बड़ी सैनिक शक्ति को पराजित किया लेकिन रूसी सेनाओं की वापसी के बाद हमारी तलवारें आपस में उलझ कर रह गयीं। हज़ारा शीयों के लिए सुन्नी इस्लाम का प्रभुत्व अस्वीकार्य रहा और स्वयं सुन्नियों के विभिन्न समूहों के लिए तालिबान का देवबन्दी इस्लाम दण्ड और यातना बनकर रह गया। मैंने सवाल की धार कुछ और तेज़ करने की कोशिश की, उनसे यह पूछना चाहा कि वह इन समस्याओं से किस तरह जूझेंगे?

उत्तर दियाः महदी का प्रकटिकरण ही इन सभी समस्याओं का समाधान है और बस अब वह क्षण आने को है। मैं तुमसे एक बार फिर कहता हूँ कि इन्शा अल्लाह अगले 10 वर्षों के अन्दर उनका प्रकटीकरण हो जाएगा।

लेकिन इस शुभसूचना के लिए आपके पास क्या दलील है? ''अल्लाह की किताब और अल्लाह के पैग़म्बर की हदीसें'' उन्होंने विश्वासपूर्वक कहा।

क्या क़ुरआन मजीद हमें महदी के प्रकट होने के बारे में सूचना देता है? मैंने विशेष रूप से जानना चाहा। कहने लगे कि क़ुरआन मजीद में तो केवल इशारे मौजूद हैं, स्पष्टीकरण नहीं, हाँ, हदीसों में विस्तार के साथ उनके प्रकट होने का विवरण मौजूद है। मैंने ऐसी सैकड़ों हदीसों को अपनी वेबसाइट पर एकत्र कर दिया है।

अच्छा यह बताइए कि 10 वर्षों में महदी के प्रकट होने के बारे में आपके पास क्या प्रमाण है?

बोलेः सुयूति ने एक हदीस के माध्यम से दुनिया की उम्र 7000 वर्ष लिखी है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) के आगमन से लेकर अब तक जो समय बीता है और जो आगे व्यतीत होने वाला है, उसके गहन विश्लेषण के बाद मैंने यह समय निर्धारित किया है, लेकिन आप जिस तरह के प्रमाण चाहते हैं और जिस स्तर का विश्वास आपको चाहिए उसके लिए मुझे लगभग 10—12 घंटों का समय चाहिए ताकि मैं उन सभी साक्ष्यों और प्रमाणों को व्यवस्थित ढंग से आपके सामने रख सकूँ। यह कहते हुए उन्होंने कुछ उकताहट महसूस किया और अपने साथियों को इस बात का इशारा दिया कि यह मुलाकात अब कभी और होगी।

मुझे जल्द ही अपनी ग़लती का एहसास हो गया। संभवतः मैंने प्रारम्भ में ही महदी के सवाल में उलझकर मूल वार्ता का दरवाज़ा बन्द कर दिया था। लेकिन जब पूरी तान महदी के प्रकट होने के सवाल पर टूटती हो तो फिर मैं करता भी क्या? स्थिति को पटरी पर लाने के लिए मैंने कहा कि मेरे इन सवालों से आप यह न समझें कि मैं आपका विरोधी हूँ या आपको हराना मेरा उद्देश्य है, मैं तो आपके इन कामों की सराहना करता हूँ जो डार्विन के विरोध में आपने किया है और जिनके माध्यम से नयी पीढ़ी में इस्लाम की ओर वापसी की प्रेरणा जगी है। हाँ, जब मामला इमाम महदी से संबन्धित रिवायतों का आएगा तो वह्य और बुद्धि की रौशनी में उसकी छानबीन आवश्यक होगी। क्योंकि हम अपने भविष्य को सुनी-सुनायी निर्मूल गल्प के हवाले नहीं कर सकते। लेकिन इस सफाई से अब बात कहाँ बनने वाली थी। हारून यह्या ने वार्ता को स्थगित करने का दृढ़ संकल्प कर लिया था।

इन्शा अल्लाह फिर कभी अगली यात्रा में अच्छी तरह विस्तारपूर्वक बात होगी। चाय पीने और हल्के-फुल्के आतिथ्य के बाद मित्रतापूर्ण मुस्कराहट के साथ वह मुझे अलविदा कहने के लिए दरवाज़े तक आए और महदी का प्रकटीकरण अगली यात्रा तक के लिए स्थगित हो गया।

रात 1.30 बजे इस्ताबूल की वीरान सड़कों पर हमारी कार होटल की ओर जा रही थी। मैं सोच रहा था, महदी के प्रकट होने की बेबुनियाद रिवायतों ने लगभग 1000 वर्षों

से किस तरह हमारे बेहतरीन दिलों और दिमाग़ों को विषाक्त कर रखा है। महदी, दज्जाल, समय का इमाम, मुजद्दिद और मसीह के पुनः आगमन की प्रतीक्षा में न जाने कितनी नस्लें इस दुनिया से चली गयीं लेकिन इन बेबुनियाद किस्से कहानियों से अब तक हमारा पीछा न छूट सका। मुहम्मद बिन हनफिया से लेकर आज तक न जाने कितने महदी हमारे बीच प्रकट होते रहे लेकिन एक ऐसा महदी जो हमारी अभिलाषाओं की पूर्ति कर सके, जो हमारी खुशफहमियों और आशाओं को सींच सके, उस व्यक्तित्व की प्रतीक्षा आज भी बाक़ी है। क़ुरआन मजीद में इन किस्से कहानियों के लिए कोई बुनियाद नहीं, लेकिन सदियों से उम्मत इन ग़लत विचारों की क़ैदी बनकर एक आने वाले की राह देख रही है जो उसे सभी समस्याओं से मुक्ति दिलाकर फिर उसकी कीर्ति और शान को वापस दिलाएगा।

आमिर ने मुझे सोच-विचार में डूबा हुआ देखकर मेरा कन्धा थपथपाया। हमारी गाड़ी एक ट्रैफिक लाइट पर रुक गयी थी। उसने बटुए से अपना कार्ड निकाला और मेरी तरफ बढ़ाते हुए कहने लगा, क्या ही अच्छा होता जो महदी के प्रकटीकरण के सम्बन्ध में आपके विस्तृत विचारों को सुनने का अवसर मिलता। हमारा टेलीविज़न नौजवान लड़के लड़कियों में काफी लोकप्रिय है और वह उसे बहुत दिलचस्पी से देखते हैं। हम लोग बड़ी बेचैनी से महदी के आने की प्रतीक्षा में हैं जिसके बारे में हमारी धार्मिक किताबों में विस्तृत जानकारी मौजूद है और जिनके प्रकट होने का समय, ऐसा लगता है, अब निकट आ पहुँचा है ।

आमिर के परेशान अन्दाज़ से स्पष्ट हो रहा था कि वह मुझे इस विचार को समझा नहीं रहा है बल्कि सच्चे दिल से यह समझता है कि वह महदी के प्रकटीकरण के सौभाग्यपूर्ण क्षणों में इस महान घटना के गवाह के रूप में इस्ताम्बोल में मौजूद है जिसे संभवतः अल्लाह की योजना में महदी का शहर होने का सौभाग्य प्राप्त होने वाला है। बातचीत का सिलसिला जब थोड़ा और आगे बढ़ा तो आमिर को यह मालूम करके बड़ा आश्चर्य हुआ कि क़ुरआन मजीद महदी, मुजद्दिद, इमाम-ए ग़ायब या मसीह के पुनः आगमन के उल्लेख से पूर्णतः रिक्त है।

लेकिन हदीस में यह शुभ-सूचनाएँ तो मौजूद हैं न! उसने अपने विचार के सच होने पर कुछ आग्रह करते हुए कहा।

हदीस में न कहो, हाँ, यह कह सकते हो कि रिवायतों और कथनों और कहानियों और इतिहास की किताबों में इस तरह के परस्पर विरोधी और निरर्थक क़िस्से पाये जाते हैं लेकिन इसके बावजूद यह भी सच्चाई है कि महदी का प्रकटीकरण या मसीह के पुनः आने का मामला कभी भी मुसलमानों में अक़ीदे का मामला नहीं रहा है। और यह आरम्भ ही से इस्लाम के उलमा के बीच विवादित चला आया है। यहाँ तक कि जो लोग इस कल्पित आगमन के समर्थक रहे हैं, उनका मन भी इस बारे में स्पष्ट नहीं रहा है कि

आने वाला महदी होगा या मसीह या समय का इमाम या मात्र मुजद्दिद? बस एक प्रतीक्षा है जिससे उनको कुछ न करने के लिए किसी हद तक संतुष्टि मिल जाती है कि आने वाला आएगा और उनके सारे दुर्भाग्य दूर कर देगा। उमय्या वंश के शासनकाल में पैग़म्बर (सल्ल०) के परिवारजनों के बीच से जो विद्रोह हुए या फातिमी और अब्बासी अधिकार का प्रचार आरम्भ में जिस तरह भूमिगत रूप से आगे बढ़ी, उन सबने महदी के प्रकट होने की कहानियों से लाभ उठाने की कोशिश की। अभी समकालीन इतिहास में महदी सूडानी ने इसी कहानी के सहारे नियमित रूप से एक राज्य का गठन भी कर डाला। उपमहाद्वीप भारत और पाकिस्तान में एक कदम आगे बढ़ाते हुए मिर्ज़ा गुलाम अहमद ने पहले तो अपने मुजद्दिद होने पर ज़ोर दिया और फिर मसीह-ए मौऊद (लौटे हुए मसीह) होने का दावा भी कर डाला। लेकिन 1200 वर्षों के इस इतिहास में छोटे-बड़े सैकड़ों महदी मुजद्दिद, मुहद्दिस, प्रबोधक और नबियों की छाया के कभी-कभी प्रकटीकरण के बावजूद दशा के सुधार की उम्मीदें पूरी न हुईं और उन सबके दुनिया से चले जाने के बाद इतिहास ने यह फैसला कर दिया कि उनमें से कोई अपने दावे में सच्चा नहीं था।

तो क्या आपके विचार में महदी के प्रकट होने की बातें मात्र किस्से कहानियाँ हैं?

जी हाँ, गढ़े हुए मिथक, मैंने स्पष्ट किया।

यह मिथक क्या होता है ?

इन्सानों के सामूहिक स्मरण में कुछ अपूर्ण अभिलाषाएँ वास्तविक दुनिया से परे काल्पनिक दुनिया में अपनी जगह बना लेती हैं। यह काल्पनिक दुनिया भी बड़ी अजीब चीज़ है। हर तरह के रचनात्मक कार्य, मन में उपजे हुए विचार, क्रान्ति सम्मत बातें और आह्लादपूर्ण भविष्य का आरम्भिक रूप भी यहीं जन्म लेता है। यदि इन विचारों के पीछे क्रियाशील शक्ति मौजूद हो और उन्हें संभव कर दिखाने का उत्साह पाया जाता हो तो यही काल्पनिक दुनिया एक ठोस और अकाट्य वास्तविकता का रूप धारणा कर लेती है लेकिन यदि कर्म का आधार बेबुनियाद मिथकों पर सजाया जाए और यह समझा जाए कि योजना का एक बड़ा भाग चकित कर देने वाली चमत्कारी ताक़त के सहारे पूरा हो जाएगा तो यह मिथक या तो हमें प्रतीक्षा जैसे बेकार काम में डाल देता है या फिर ठीक नाज़ुक क्षणों में संभावित चमत्कार के प्रकट न होने के कारण हम भारी निराशा के शिकार हो जाते हैं। आने वाला आ चुका। अन्तिम पैग़म्बर के बाद अब कोई न आएगा। अब इतिहास के अन्तिम क्षण तक दुनिया की क़ौमों के मार्गदर्शन का पूरा काम अन्तिम पैग़म्बर के अनुयायियों को करना है ।

लेकिन एक आने वाले की प्रतीक्षा तो यहूदियों को भी है।

जी हाँ, यह अक़ीदा भी वास्तव में हमारे यहाँ उन्हीं के पास से आया है। यहूदी आज भी अपनी दुआओं में मसीह के आने की तमन्ना करते हैं। वह दाऊद और सुलेमान के परिवार से एक ऐसे चमत्कारी नेतृत्व के प्रकट होने के लिए प्रतीक्षारत हैं जो

उनकी खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः उन्हें लौटा देगा। ''बस अगले वर्ष यरुशलम में'' जैसे दुआ के वाक्य उनके यहाँ हर आदमी की जुबान पर हैं। यह वह मिथक (कहानी) है जो उन्होंने काल्पनिक दुनिया में रचा है और जिसपर गुज़रते हुए ज़मानों के साथ उम्मीदों की धुंध गाढ़ी होती गई है। वह इस वास्तविकता को मानने के लिए तैयार नहीं कि हज़रत ईसा (अलै०) के रूप में वह आने वाला कब का प्रकट हो चुका, जिसे यहूदियों के कुछ लोगों ने सच्चे दिल से स्वीकार किया और कुछ उसका इन्कार करने वाले हो गए। वह, जिन्होंने इन्कार किया, आज तक मसीह का रास्ता देखते रहते हैं। यह मिथक की वह ताक़त है जो इन्सानों को सच्चाइयों से बेख़बर, उम्मीदों का क़ैदी बना देती है। जब एक बार क़ौमें मिथक (किस्से, कहानियों) में गिरफ्तार हो जाती हैं तो उन्हें उस मिथक के पीछे चलना स्वाभाविक दिनचर्या जैसा मालूम होता है। दूसरी सदी ईसवीं में बारकोखबा के नेतृत्व में पूरी यहूदी क़ौम रोमन साम्राज्य से सीधे टक्कर लेने के लिए तैयार हो गयी, यहाँ तक कि रब्बी अकीबा जैसे विश्वसनीय आलिम ने उसकी काल्पनिक चमत्कारी आह्वान को स्वीकार कर लिया। लेकिन कहाँ रोमियों की संगठित सेना और कहाँ बारकोखबा की कहानियों पर आधारित काल्पनिक विचार और खाली कोरी नारेबाज़ियाँ। पूरी यहूदी क़ौम एक ऐसी अविस्मरणीय पराजय का शिकार हुई कि युगों तक किसी ने दोबारा मसीहाई का दावा करने की हिम्मत न की। 17वीं शताब्दी में सबाताई ज़ी.वी. ने पूरे जोश-ख़रोश के साथ इस मिथक को गतिशील करने का प्रयास किया। एक बार फिर मिथकों और अभिलाषाओं की गुलाम यहूदी क़ौम का एक बड़ा वर्ग सबाताई ज़ी.वी. की पुकार में सम्मिलित हो गया। ज़ी.वी. का दावा था कि वह दिव्य सन्देशवाहक है, वह वही है जिसकी प्रतीक्षा लम्बे समय से यहूदियों को है। उसने अपने अनुयायियों को विश्वास दिला रखा था कि जब ख़लीफा उसे देखेगा तो वह पिघलता जायेगा। ज़ी.वी. गिरफ़्तार होकर ख़लीफा के दरबार में लाये गए। ख़लीफा तो उन्हें देखकर न पिघला। हाँ, वह स्वयं इतने अवश्य पिघल गए कि उन्होंने सज़ा के रूप में इन विचारों से तौबा की और संभवतः अपनी जान बचाने के लिए अपने मुसलमान होने की घोषणा कर दी।

लेकिन यह बातें तो हमारी धार्मिक किताबों और विशेष रूप से हदीस के संग्रहों में विस्तारपूर्वक बयान हुई हैं। हमारे यहाँ विशेष रूप से महदी के प्रकट होने के सिलसिले में अनेक जानकारी बढ़ाने वाली साईटें मौजूद हैं जिसमें सैकड़ों रिवायतें अनगिनत स्रोतों से एकत्र कर दी गयी हैं। कभी समय मिले तो आप उसे अवश्य देखिएगा। आमिर ने कुछ जिज्ञासा और कुछ आपत्ति के लहजे में बातचीत का सिलसिला जारी रखने की कोशिश की।

आपकी आपत्ति उचित है लेकिन यह सारी ग़लतफ़हमी वास्तव में रिवायतों और कथनों की किताबों को हदीस घोषित कर देने के कारण पैदा हुई है। हदीस अर्थात अल्लाह के पैग़म्बर का कथन यदि किसी बात से हमें अवगत कराए तो उसे स्वीकार न

करने का प्रश्न ही कब उठता है क्योंकि मुसलमान की हैसियत से आपकी हर बात पर ईमान लाना और उसे किसी सन्देह से ऊपर समझना हमारे ईमान के लिए अनिवार्य है। लेकिन जब तक पैग़म्बर के किसी कथन के बारे में यह बात प्रामाणिकता तक न पहुँचे कि वह वास्तव में आपका कथन है, उसके पीछे किसी झूठे रिवायत करने वाले के फितने नहीं हैं, तब तक उसके बारे में विश्वास के साथ अल्लाह के पैग़म्बर का कथन होने का दावा नहीं किया जा सकता। ज़रा सोचिए! महदी के प्रकट होने, दज्जाल के आने, मसीह के वापस दोबारा आने की बातें यदि वास्तव में दीन (धर्म) के लिए अनिवार्य होतीं तो इतनी महत्वपूर्ण सूचना से क़ुरआन मजीद के पन्ने क्यों ख़ाली होते। मुसलमानों चिन्तन और व्यवहार के बिगाड़ का कारण यही तो हुआ कि उन्होंने क़ुरआन मजीद जैसी स्पष्ट, तर्कपूर्ण और अन्तिम किताब को छोड़कर किस्से कहानियों को अपना धर्म बना डाला। क़ुरआन मजीद अन्तिम उम्मत की हैसियत से हमसे कर्म करने की माँग करता है। वह चाहता है कि अन्तिम पैग़म्बर के अनुयायी दुनिया की क़ौमों के मार्गदर्शन के लिए पूर्णतः सक्रिय रहें। इसके विपरीत हमारा द्वितीय स्तर का धार्मिक साहित्य जो विभिन्न युगों में इतिहास और कथन और राजनैतिक और सामाजिक घटनाक्रमों के प्रभाव में संकलित होता रहा है, जिसमें प्रामाणिक रावियों के साथ झूठे और चालबाज़ दिमाग़ों की कार फरमाइयाँ भी कम नहीं, वह हमें इन गढ़े हुए मिथकों का वाहक बनाती हैं जिसके अनुसार परोक्ष से कोई प्रकट होकर हमारे हर तरह के दुखों की दवा उपलब्ध करा देगा। हमारे बेहतरीन दिमाग़ क़ुरआन मजीद के सर्वमान्य और विशुद्ध सन्देश को अपना मार्गदर्शक बनाने के बजाए सदियों से पूरी ताकत इस बहस में लगाते रहे हैं कि आने वाला कब और कहाँ आएगा, उसकी निशानियाँ क्या होंगी, वह महदी होगा या मसीह की पैग़म्बराना हैसियत के बजाए मुजद्दिद की मानवीय हैसियत से आएगा? मुसलमानों के कुछ फ़िक़्ही सम्प्रदाय तो यहाँ तक समझते हैं कि हज़रत मसीह दूसरी बार आने के अपने ज़माने में उनके सम्प्रदाय के इमाम के नेतृत्व में नमाज़ पढ़ेंगे, दज्जाल मारा जाएगा और सारी दुनिया में यहूदियों को शरण न मिलेगी। बल्कि कुछ रिवायतों के अनुसार किसी पेड़ या पत्थर के पीछे कोई यहूदी छिपा होगा तो पेड़ और पत्थर स्वयं ही पुकार उठेंगे कि देखो एक यहूदी इधर छिपा है, इसे क़त्ल कर डालो। स्पष्ट है इस तरह की बेबुनियाद बातों का इस्लाम और इस्लाम के पैग़म्बर से क्या सम्बन्ध हो सकता है? जब यह कहानियाँ और किस्से रिवायत की किताबों में एकत्र हो रही थीं तो किसी की कल्पना में भी यह बात न आती थी कि उन्हें विशेष युग के सामाजिक दस्तावेज़ की बजाए पूर्ण रूप से हदीस की किताबों की हैसियत प्राप्त हो जाएगी और लोग इन अप्रामाणिक बातों को पैग़म्बर के कथनों की पवित्र हैसियत दे डालेंगे।

हमारी कार अब होटल के पोर्टिको में प्रवेश कर रही थी। आमिर के चेहरे पर शौक और हैरत के मिले-जुले भाव स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। उनके प्रश्न अभी शेष थे और वह

चाहते थे कि वार्ता का यह सिलसिला अभी चलता रहे लेकिन रात बहुत हो चुकी थी और सवेरे मुझे इस्ताम्बोल के निकटवर्ती क्षेत्रों के दर्शन के लिए यात्रा करनी थी।

'टेक केयर' अर्थात अपने आप को सँभाल कर रखो, भविष्य का महदी तुम्हारा पीछा कर रहा है। मैंने उसके कन्धे पर थपथपाते हुए उससे विदाई ली ।

# 4
# हरम सारा

सम्मेलन समाप्त हो चुका था। अब मैं सुल्तान अहमद के क्षेत्र में उठकर आ गया था। इस्ताम्बोल का यह क्षेत्र अपने ऐतिहासिक भवनों और निशानियों की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। अबा सोफिया का भव्य गिरिजाघर और जामे सुल्तान अहमद का भव्य भवन एक साथ दो सभ्याताओं के टकराव और उनके आपसी मेल-जोल का घोषणा-पत्र बन गए हैं। इसी से मिला हुआ तोपकापी सराय का विस्तृत महल है जिसके मुख्य द्वार पर अस्ससुल्तानु ज़िल्लुल्लाह (सत्ता अल्लाह की छाया है) का वाक्य विद्वानों को सबक लेने का निमन्त्रण दे रहा है।

एक दिन मैं शाम के समय सैर के लिए निकला, मौसम सुहाना था, सोचा था कि समुद्र के किनारे कुछ देर चहल-कदमी करूँगा। अया सोफिया के पीछे से निकलते हुए समुद्र के तट की ओर मुड़ने वाला था कि अचानक मेरी नज़र तोपकापी सराय के मुख्य दरवाज़े पर पड़ी। दरवाज़े का एक पट बन्द और दूसरा थोड़ा खुला था। एक पहरेदार मशीनगन सँभाले अपनी ड्यूटी पर तैनात था। मैंने जब दरवाज़ा खुला देखा तो सोचा कि क्यों न तोपकापी की हरियाली की सैर की जाए। यद्यपि मेरा पहले भी कई बार यहाँ आना हुआ था, लेकिन हर बार समय की कमी, यात्रा की भाग-दौड़ और अनेक तरह की व्यस्तताओं के कारण अतृप्तता का अहसास लिए वापस चला गया था। पूछने पर पता चला कि यात्रियों के प्रवेश का समय समाप्त हो चुका है। अब जो लोग पहले से अन्दर मौजूद हैं। उनके बाहर आने की प्रतीक्षा है। वैसे भी 6 बजने में अब 15–20 मिनट रह गए हैं। इतनी देर में भला तुम क्या देख पाओगे? पहरेदार ने कुछ हमदर्दी और कुछ अच्छे व्यवहार का प्रदर्शन करते हुए क्षमा माँगी।

मैं आया तो कई बार हूँ। लेकिन अब तक हरमसरा (अन्तःपुर) का हिस्सा देखने का अवसर न मिल सका।

हरम का नाम सुनकर वह मन ही मन मुस्कराया। कहने लगा मेरे दोस्त! अब वहाँ कुछ भी नहीं। तुमने वास्तव में आने में देर की। केवल कुछ घंटे ही नहीं बल्कि लगभग 200 वर्ष देर से पहुँचे हो। अब हरम वीरान है और चन्द्रमुखियों के जलवे गलियों, बाज़ारों और सैरगाहों, हर तरफ बिखरे हैं। इस लोकतन्त्र के युग में अब दिलरुबाई पर केवल ख़लीफाओं और शासकों का एकाधिकार नहीं रहा।

तोपकापी सराय में पहले-पहल मेरा आना छात्र जीवन में हुआ था। वह भी क्या दिन थे जब यात्रा के लिए निकलिए तो ऐसा लगता था कि पूरी कायनात आपके मार्ग में अपनी आँखें और दिल बिछा देती है। न यात्रा के सामान की तैयारी की आवश्यकता और न सफर खर्च का ख़याल। न खाने पीने की चिन्ता और न ही रास्ते की परेशानियों की कोई परवाह। वर्षों गुज़र गए। छोटा-सा पोटली नुमा बैग उठाए देश-विदेश की खाक छानता फिरा। कभी किसी सम्मेलन में उपस्थिति, कभी शान्ति की स्थापना की बैठकें, कभी युवा आन्दोलनों के जलसे-जुलूस और कभी इस्लामियों की सभाएँ। तब घर से निकलते हुए वास्तव में ऐसा लगता था कि

हज़ारों छायादार वृक्ष रास्ते में हैं।

कभी ऐसा भी हुआ कि जेब में फूटी कौड़ी नहीं और मन में विश्व यात्रा की ललक। आत्मविश्वास की यह हालत कि मुड़े-तुड़े कपड़े बैग में ठूँसे, जो अधिक प्रयोग में आने के कारण पोटली जैसा हो गया था, और अधूरी तैयारी और उससे भी कहीं कम यात्री-सामग्री के साथ निकल खड़ा हुआ। तब एक ज़िन्दा जावेद खुदा के साथ होने का हर पल एहसास होता। ऐसा लगता जैसे कोई परोक्ष के पर्दे से मेरी यात्रा की तालिका बना देता हो और उसने मुझे विभिन्न देशों और क़ौमों के अवलोकन पर नियुक्त कर रखा हो। तब अनुभव कम और अवलोकन अत्यन्त संवेदनशील और तीव्र हुआ करता था। बल्कि कह लीजिए कि अनुभव ने अवलोकन की धार को मलिन नहीं किया था। चीज़ें अपने मूल रूप में तुरन्त स्पष्ट हो जाती थीं। मानो परोक्ष से प्रकाश की कोई चमक हो जो अनायास चीज़ों के वास्तविकता प्रकट कर देती हो। किसी अटपटी चीज़ पर नज़र पड़ते ही तुरन्त उसके अटपटे होने का एहसास हो जाता। कहते हैं कि अटपटी चीज़ को यदि बार-बार देखते रहिए या उसे लगातार सहन करते रहिए तो वह सामान्य लगने लगती है। वस्तुतः प्रत्यक्ष रूप से व्यवस्थित परन्तु वास्तव में अव्यवस्थित जीवन की ख़राबियाँ और बिगाड़ उस समय अपनी सभी पहलुओं के साथ दिखाई पड़तीं। उस समय पहली ही नज़र में तोपकापी के मुख्य द्वार पर अस्सुल्तानु ज़िल्लुल्लाह (सत्ता अल्लाह की छाया है) का वाक्य सुनहरे अक्षरों में खुदा हुआ देखकर मैं एक पल के लिए अवाक सा हो गया था। उस समय दिल और दिमाग़ में किसी अजनबी कथन को पढ़कर एक अलार्म सा बज उठता था। आज चौथाई सदी के अध्ययन और शोध के बाद केवल इतना अन्तर हुआ है कि मैं उन संदेहों और भ्रष्टताओं के निर्मूलन पर शोधपूर्ण तर्कों के ढेर लगा सकता हूँ। अतः मुख्य द्वार में प्रवेश से पहले ही इस बात का एहसास हो गया था कि उस्मानी तुर्कों की बुनियाद का पहला पत्थर ही वैचारिक भ्रष्टता से भरा हुआ था। भला कहाँ खुदाए बुज़ुर्ग बरतर और कहाँ गुनाहों और भूलों का पुतला इन्सान। उसे कब यह शोभा देता है कि वह अपने आप को ज़मीन पर अल्लाह की छाया घोषित कर दे, और अपनी भर्त्सना को अल्लाह की भर्त्सना समझे। इस्लाम तो आया ही इसलिए था कि वह

इन्सानों की गर्दनों को धार्मिक चौधराहट के अत्याचार से मुक्ति दिलाए। एक तरफ कुरआन मजीद का यह बयान कि उसका पैग़म्बर इन्सानों की गर्दनों को अत्याचार और गुलामी से मुक्ति दिलाता है और दूसरी तरफ तत्कालीन ख़लीफा का यह आग्रह कि वह इस ज़मीन पर अल्लाह द्वारा नियुक्त किया हुआ प्रतिनिधि है जिसकी भर्त्सना या अवज्ञा मानो अल्लाह की अवज्ञा के समतुल्य है। लगभग 500 वर्षों तक उस्मानी तुर्कों और उससे पहले अब्बासी, उमय्या वंश और फातिमी ख़लीफा की सामान्य नीति (कुछ अपवाद के साथ) इस्लाम द्वारा प्रदान की हुई वैचारिक स्वतन्त्रता से लगातार टकराती रही। शैख़ुल इस्लाम का सरकारी इस्लाम वास्तविक दीन के प्रामाणिक साँचे की हैसियत से प्रचलित किया जाता रहा। इसलिए जब नादान तुर्क ने खिलाफत के आवरण की धज्जियाँ उड़ाईं तो उस बुराई से सदियों बाद एक भलाई के प्रकट होने की संभावना पैदा हो गयी। अल्लामा इकबाल के अनुसार अब तक राजशाही के अन्तर्गत इस्लाम की जो व्याख्या प्रामाणिक समझी जाती रही थी और जिसपर बड़ी हद तक तत्कालीन ख़लीफा का नियन्त्रण था, अब ख़िलाफत के पतन के बाद इन सभी राजनैतिक उद्देश्यों और विरासत में मिली हुई संदिग्धता से परे, इस्लाम को मूल रूप में समझने की संभावना पैदा हो चुकी थी।

छात्र जीवन का इस्ताम्बोल मेरे लिए एक निद्रा मग्न जैसा शहर था। जिधर जाइये मस्जिदों के गगनचुम्बी मीनारों के बगल में सजी-सजाई नगीने जड़ी हुई कब्रों की एक शृंखला और उन्हीं के बीच जगह-जगह विभिन्न गुम्बदों में अपेक्षाकृत प्रसिद्ध व्यक्तियों की कब्रों की देख-रेख के लिए सरकारी तौर पर मुजाविर नियुक्त। कहीं किसी शासक या अधिकारी या उनके घरवालों की कब्रें, पदानुक्रम से भव्यतापूर्वक सजी हैं, कहीं उनपर पगड़ियाँ रखी हैं और कहीं मखमल के ग़िलाफों पर कुरआन की आयतें खत्ताती (कलात्मक लिखावट) से उन्हें सौन्दर्य प्रदान करने का प्रयास किया गया है। आश्चर्य हुआ कि तुर्क खिलाफत की इस पूर्ववर्त्ती राजधानी में, जिसे सदियों तक वैश्वविक राजधानी की हैसियत प्राप्त रहीं, आखिर कब्रों की व्यवस्था और देख-रेख पर इतना ज़ोर क्यों है। उस समय यह रहस्य तो मालूम न हो सका। बस दिल और दिमाग में लगातार एलार्म बजते रहे।

समुद्र के तट की ओर जहाँ दूर तक चहल-कदमी के लिए विशेष रूप से रास्ते बनाए गए हैं, जगह-जगह दम मारने के लिए बेंचों का सहारा भी मौजूद है। अब जो मैं ज़रा दम लेने के लिए बैठा तो क्या देखता हूँ कि समुद्र की दूसरी तरफ इस्ताम्बोल के एशियाई भाग से थोड़ा हटकर, जहाँ समुद्र निगाहों की अंतिम सीमा तक विस्तृत हो गया है, दूर क्षितिज पर सूरज की डूबती किरणें सुनहरे तिलिस्म का ताना-बाना बुनने में व्यस्त हैं। हर डूबता सूरज जाते-जाते अपने यश और कीर्ति की विरासत से काम चलाना चाहता है। वह चाहता है कि पतन की इस प्रक्रिया पर जादुई किरणों से पर्दा डाल दे ताकि क्षणिक रूप से ही सही, दर्शकों को यह विश्वास हो जाए कि अभी चिराग़ में बहुत

कुछ तेल बचा हुआ है। अपने पतन से पहले उस्मानी तुर्कों ने भी संगठनों की सुधारवादी किरणों से मन और हृदय को आश्वस्त और मधुमय करने की कोशिश की। बाद के दिनों में जब ख़िलाफत के पतन के बाद पश्चिम हमारे लिए अंतिम मानक (कसौटी) के रूप में सामने आया तो हमारे लगातार गिरते हुए ग्राफ को पाश्चात्यकरण की किरणों में छिपाने की कोशिश की गयी। कहीं यह समझा गया कि पूर्वी लिबास के बजाए पश्चिमी लोगों जैसा रहन-सहन अपनाना, मई-जून की सख्त गर्मी में सूट, टाई में बँधे रहना, फर्श पर दस्तरख्वान बिछाने के बजाए टेबिल-कुर्सी पर छुरी-काँटे से खाना, हमारे पतन को रोक सकता है। बल्कि कुछ सुधारकों और बुद्धिजीवियों ने तो हमें यहाँ तक विश्वास दिलाया कि कसा-कसाया पश्चिमी लिबास हमें फुर्तीला रखने में मदद देता है। यहाँ तक कि दाढ़ी का मुड़वाना भी हमारी रौशन ख़याली की ज़मानत दे सकता है। उपनिवेशवाद युग के इस मृग मरीचिकामय प्रचार-प्रसार ने हमारे जीवन को इस तरह बदल डाला की देखते-देखते हमारा रहन-सहन और शक्ल-सूरत बिगड़ कर रह गयी। हमारे बुद्धिजीवियों की जुबानों से चबी-चबायी फ्राँसीसी और अंग्रेजी शब्दावलियों का सिलसिला जारी हो गया। हमारी औरतों के काले सुन्दर बालों में कृत्रिम भूरेपन और भद्दी सुनहरी लकीरें दिखायी देने लगीं। वह आँख जिसके नाज़ व अदा जीवन को सार्थकता प्रदान करते और जिनकी गहरी झील में शायर डूब जाने की तमन्ना करता, वह अजनबी तराश-खराश के हाथों विकृत हो गयीं। पिछले 150 वर्षों में हमने अपने पतन पर पर्दा डालने के लिए क्या कुछ नहीं किया। लेकिन सच्चाई तो यह है कि आने वाला हर पल हमारे पतन की गंभीरता का कहीं अधिक गहराई से एहसास दिलाता रहा है। शाम की गौधूली के समापन के साथ सुनहरी किरणों का जादुई तमाशा भी समाप्त हुआ। रात के आरंभ होने की वास्तविकता का इन्कार निश्चित रूप से कठिन है। अब इससे मुक्ति का इसके अतिरिक्त और क्या रास्ता है कि हम एक नयी सुबह लाने के लिए सक्रिय हों। लेकिन हाँ, किसी आरम्भ से पहले यह ध्यान रहे कि यह रास्ता सुबह काज़िब (झूठी सुबह) की ओर न ले जाता हो।

अगली सुबह थोड़ा पहले ही प्रकट हो गयी। अभी मैं फज्र की नमाज़ से पूरी तरह फ़ारिग़ भी न हुआ था कि टेलीफोन की घंटी बजी। नीचे लॉबी में अहमद ईर्दगान पधारे थे, कहने लगे कि रात भर मैं बैचेन सा रहा। सोचता रहा कि किसी तरह एक बार और आपसे मुलाकात का मौका मिल जाए और इस तरह मेरी बैचेनी कुछ कम हो जाए। आपसे जकार्ता की कॉन्फ्रेन्स में भाग लेने के लिए वादा भी लेना है और हम लोग यहाँ तुर्की में जो काम कर रहे हैं, उस सम्बन्ध में भी परामर्श की आवश्यकता है। अहमद के साथ उनके कुछ जोशीले साथी भी आए थे। नौजवानों का यह गिरोह इस्लामी दुनिया के संगठनों और आन्दोलनों को संगठित करने का सपना रखता है। नये बदलते विश्व परिदृश्य में उन्हें आशा है कि तुर्क नौजवान अपनी ऐतिहासिक नेतृत्व की भूमिका फिर से निभा सकते हैं।

हमारी तुलना उलमा के मंचों और अरबों के कल्याणकारी संगठनों से न करें। हम काम करने वाले लोग हैं। भाषाई और नस्ली भेदभाव से ऊपर उठकर काम करना चाहते हैं। हम यह चाहते हैं कि नील के तट से लेकर काशगर की ज़मीन तक इस उम्मत को एक हार में पिरो दें, सीसा पिलाई हुई दीवार में इसे बदल दें। कल एफ.एम. रेडियो पर इन्टरव्यू के दौरान आपने तुर्की के नये पुनर्जागरण और उसकी ऐतिहासिक भूमिका की प्रशंसा के साथ तुर्क राष्ट्रवाद पर सन्देह प्रकट किए हैं। हम चाहते हैं कि इस विषय में हमारा सैद्धान्तिक भ्रम दूर हो। क्या यह सच्चाई नहीं है कि ऐतिहासिक रूप से तुर्कों की विभिन्न नस्लों और क़बीलों ने अब्बासी ख़िलाफ़त के पतन से लेकर 1924 ई० में ख़िलाफ़त के नियमित रूप से निलम्बन तक विश्व मंच पर एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। पिछली पौन सदी के दौरान हमारे इतिहास से हमें दूर रखने की कोशिश की गयी। लेकिन धीरे-धीरे एक बार फिर हमने अपनी जड़ों को तलाश कर लिया और अब हम इस्लामी दुनिया को जोड़ने में फिर से एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाना चाहते हैं और अन्य मुसलमान क़ौमों की तुलना में संभवतः हम इस काम के लिए अधिक उपयुक्त भी हैं।

अहमद की बात अभी पूरी भी न हुई थी कि नजमुद्दीन ने अरब दुनिया की निष्क्रियता की शिकायत शुरू कर दी। उनका कहना था कि इस्लामी दुनिया का भविष्य अरब दुनिया के पुनर्जागरण के साथ कदापि जुड़ा हुआ नहीं है। अरबों की यह विशेषता अवश्य है कि वह पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) के मिशन के पहले सहभागी हैं लेकिन इस्लामी दुनिया के इतिहास में दूसरी क़ौमों का योगदान उनसे कम नहीं, बल्कि कुछ मामलों में तो बढ़-चढ़ कर है। विशेष रूप से बग़दाद की पराजय के बाद तो तुर्कों ने लगातार लगभग 500 वर्षों तक ख़िलाफ़त का झण्डा थामे रखा है। वर्तमान इतिहास तक, जबकि मुसलमानों को दुनिया पर पूर्ण अधिकार प्राप्त था, दुनिया के तीनों बड़े साम्राज्य मुसलमान थे, अर्थात उस्मानी तुर्क, सफवी ईरान और मुगल हिन्दुस्तान और तीनों शुद्ध रूप से ग़ैर अरब राज्य थे। अरबों का काम इतिहास ने उनसे आरम्भिक युग में ही ले लिया। वह आधारशिला रख गए और संभवतः इस महान मौलिक प्रक्रिया में उनकी एकत्रित शक्ति की कुल पूँजी काम आ गयी। अब इतिहास बाद की सहभागी कौमों से काम लेना चाहता है। नजमुद्दीन की बात तुर्क नौजवानों के चेहरे पर गर्व और प्रफुल्लता की मिली-जुली भावनाओं को जन्म देने का कारण बन रही थी। बौद्धिक विश्लेषण से कही अधिक जातीय और राष्ट्रीय प्रतिष्ठा की भावना काम कर रही थी। इसलिए मैंने हस्तक्षेप करने के लिए इसे अच्छा अवसर समझा।

सबसे पहले यह समझ लीजिए कि यह बात सत्य नहीं कि कोई क़ौम इतिहास के किसी चरण में महान उपलब्धि प्राप्त कर लेने के कारण अपनी रचनात्मक क्षमता या नेतृत्व की योग्यता खो देती है। अरबों की दशा चाहे कितनी ही बुरी हो लेकिन दूसरी क़ौमों के दामन भी क़ौम की हैसियत से नैतिक, आध्यात्मिक खराबियों से पाक नहीं। फिर

यह कि यदि इस्लामी दुनिया के पुनर्जागरण का काम कोई क़ौम एक राष्ट्रीय परियोजना के रूप में अपने हाथ में लेती है तो ख़तरा है कि विभिन्न जातीय, भाषाई और पंथी समूह आगे बढ़ने से पहले ही एक-दूसरे से उलझ जाएँ। जिस तरह अरबों ने तुर्कों की ख़िलाफ़त का पट्टा अपने गले से उतार फेंका और जिसकी प्रतिक्रिया में तुर्कों ने अरबी भाषा, यहाँ तक कि उसकी लिपि को त्याग देना अपना राष्ट्रीय कर्त्तव्य समझा, उसी तरह राष्ट्रीयता का नया दैत्य एक बार फिर हमारे पुनर्जागरण की योजना को खाक में मिला देगा और हम अपने आप को एक नये गृह युद्ध में लिप्त पायेंगे। न ईरान वाले अरबों का नेतृत्व स्वीकार करेंगे और न भारत-पाक उपमहाद्वीप के मुसलमानों का यह दावा स्वीकार किया जा सकेगा कि इस्लामी दुनिया के नये गठन में अपने ऐतिहासिक योगदान, भौगोलिक महत्व और संख्या की बढ़त के कारण वह दूसरों से कही अधिक इस बात के लिए योग्य हैं कि इस्लामी दुनिया का नेतृत्व उनके हाथों में सौंप दिया जाए। इसलिए मेरे विचार में इस्लाम की विश्वव्यापी सभ्यता को राष्ट्रीय ऐजेण्डे के रूप में देखना ख़तरे से खाली नहीं।

लेकिन मुझे यह बात हज़म नहीं होती कि अरबों को इस्लामी उपदेश का नेतृत्व करने या इस्लामी कार्यक्षेत्र पर प्रभुत्व प्राप्त करने की छूट केवल इसलिए दे दी जाए कि क़ुरआन उनकी भाषा में अवतरित हुआ है, करीम जिन्हें में अब तक शर्मीला कम उम्र नौजवान समझता था, उन्होंने अपनी ख़ामोशी तोड़ी।

उनकी भाषा शैली में राष्ट्रीय गर्व की बजाए संवेदना कहीं अधिक दिखायी दे रही थी। कहने लगेः इत्तेहाद-ए उलमा (उलमा की एकता) की बैठकों में आप नहीं देखते, मैं तो तीन दिनों तक वहाँ कार्यसेवक के रूप में सेवा करता रहा, मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि उलमा के विश्व मंच पर अरबों को प्रभुत्व क्यों प्राप्त है जबकि वह पूरी दुनिया के मुसलमानों की कुल आबादी का एक चौथाई भी नहीं। तुर्क, अफग़ान, ईरानी, भारतीय, मलेशियाई और इंडोनेशिया के उलमा को समुचित प्रतिनिधित्व से क्यों वंचित रखा गया है और सबसे बढ़कर यह कि केवल 25 प्रतिशत अरब अल्पसंख्यकों के लिए संगठन की परम्परागत भाषा अरबी होने के लिए क्या औचित्य है। क्या हम तुर्की के लोगों की तरह आप भी यह महसूस नहीं करते कि इस तरह की बैठकों में वार्ता की धुरी पर अरबों ने मात्र अपने अरब होने के माध्यम से अनावश्यक रूप से अधिकार जमा रखा है। अतः ग़ैर अरब क़ौमें इस्लाम से अपनी सम्पूर्ण वफ़ादारियों और कुर्बानियों के बावजूद अपने आप को हाशिए पर पड़ा पाती हैं। इस्लाम यदि मात्र अरब सभ्यता का नाम है तो तुर्की, ईरानी, हिन्दुस्तानी और दूसरी ग़ैर अरब क़ौमों को इससे क्या दिलचस्पी हो सकती है?

नजमुद्दीन की बातों में दर्द भी था और वज़न भी। वास्तविक इस्लाम तो यह है कि ईरान के सलमान की राष्ट्रीयता इस्लाम हो और समय का पैग़म्बर उसे ईरानी नस्ल के

मुसलमान की हैसियत से देखने के बजाए उसका पंजीकरण अपने परिवार के सदस्य की हैसियत से कराए। पैग़म्बर के युग की वह सभ्यता जब ईरान के सलमान, रोम के सुहैब और इथियोपिया के बिलाल ने क़ुरैशी नस्ल के मुसलमानों के साथ मिलकर एक अन्तर्राष्ट्रीय सभ्यता को जन्म दिया था, वहाँ अरबी भाषा के बड़े-बड़े सूरमा, काव्य और भाषण के विशेषज्ञ अपने कुफ़्र (इन्कार) और निफाक़ कपटाचार के कारण हाशिए पर जा पड़े थे। सभ्यता के पैग़म्बराना ढ़ाँचे ने एक ऐसी स्थिति को जन्म दिया था जहाँ एक दासता-मुक्त युवक के नेतृत्व में अरब समाज के सरदार युद्ध अभियान में भाग लेने पर अपने आप को पूरी तरह आमादा पाते। यदि अरब होना विशेषता का कारण होता तो सभ्यता का वह अन्तर्राष्ट्रीय साँचा, जिसने आने वाले दिनों में يدخلون فی دین اللہ أفواجا(अल्लाह के दीन में समूह के समूह प्रवेश कर रहे हो) की स्थिति पैदा कर दी, न रूप लेता और न ही ग़ैर अरब क़ौमे इस्लाम के दामन में शान्ति और प्रतिष्ठा का सामान पातीं। अरबीपन को इस्लाम के प्राकृतिक साँचे की हैसियत, सबसे पहले अब्दुल मलिक के शासनकाल में दी गयी जिन्हें अब्दुल्लाह बिन जुबैर की वैकल्पिक खिलाफत का सामना था। अब्दुल मलिक ने अरब व्यूरोक्रेसी बल्कि इब्ने खल्दून के शब्दों में कह लीजिए, अरब असबीयत (पक्षपात) को एक सकारात्मक तथ्य के रूप में अपनी सत्ता को मजबूत बनाने के लिए प्रयोग किया। सरकारी रजिस्टरों, आवागमन की तालिकाओं और शासन व्यवस्था की भाषा अरबी घोषित कर दी गयी। इस एक कार्यवाही से आने वाले दिनों में अरबवालों की भाषाई प्रभुत्व का साधन मिल गया। आज भी यदि अरबी भाषा और अरबीपन को इस्लामी दुनिया की आन्तरिक गिरोहबन्दी के लिए अनावश्यक महत्व दिया गया तो ख़तरा है कि इस्लाम के नाम पर एक बार फिर अरब राष्ट्रवाद अपने सम्पूर्ण बिगाड़ के साथ वापस आ जाए और समय का इब्ने तैमिया अपने आप को इस भ्रम में लिप्त पाये कि फारसी भाषा का सीखना

من تشبہ بقوم فھو منہم

(जिसने किसी क़ौम का हाव-भाव अपनाया तो वह उसी में से है) वाली हदीस के अनुसार जायज नहीं और अहमद सरहिन्दी से लेकर शाह वलीउल्लाह तक हमारे उलमा इस ग़लतफहमी में लिप्त नज़र आएँ कि अरबीपन इस्लाम का मूल साँचा है। सच्चाई तो यह है कि इस्लाम जैसे अन्तर्राष्ट्रीय धर्म का, जिसे आदि से अन्त तक, सभी जातियों और देशों का संरक्षण और नेतृत्व करना है, कोई एक सांस्कृतिक ढाँचा नहीं हो सकता। एकाग्र धर्म का मूल ढाँचा सांस्कृतिक प्रदर्शन से ऊपर है। विभिन्न सभ्यताओं पर यह प्रभावी तो अवश्य होगा लेकिन किसी एक सभ्यता में इतनी व्यापकता नहीं कि वह इसके सभी पहलुओं को पूरी तरह रूपायित कर सके। इस्लाम तो वास्तव में नाम है आह्लादपूर्ण समर्पण का, यह जुब्बा और पगड़ी में भी उसी तरह प्रकट हो सकता है जिस तरह पतलून और टाई और धोती और बनियान में। यदि एक भारतीय आलिम धोती और कुर्ते

में दाऊदी माधुर्य स्वर में कुरआन पढ़ता हो और अल्लाह के प्रति विनम्रता से उसका दिल आसिक्त हो तो उसे इस्लामी संस्कृति की व्यापकता के रूप में ही देखा जाना चाहिए। इस्लाम दिलों की दुनिया बदलता है अन्यथा यदि पहनावा, भाषा और रीति-रिवाज संस्कृति के प्रतीक होते तो अबू जहल और अबू लहब भी वही भाषा बोलते और वैसा ही पहनावा पहनते थे जो उस समय के पैग़म्बर (सल्ल०) और उनके साथियों का था लेकिन पूरी तरह अरब होने के बावजूद वे इस्लामी संस्कृति की परिधि से बाहर ही समझे गए।

बातचीत का सिलसिला शायद कुछ और देर तक चलता रहता लेकिन इस दौरान हमारे मित्र मुस्तफा ऊग्लू आ गए थे। आज हमें इस्ताम्बोल के एशियाई भाग में जाना था जहाँ पहले से निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार विद्वानों की एक सभा हमारी प्रतीक्षा कर रही थी।

# 5
# इतिहास के युद्ध

मुस्तफा ऊग्लू एक युवा विद्वान हैं। उनकी उम्र लगभग 30–35 वर्ष होगी। सूफी संगीत के शौकीन। अल्लाह, अल्लाह की धुन पर जब तुर्क संगीतकार जोशीला धमाल डालता है तो वह दुनिया और उसकी सारी चीजों से बेखबर हो जाते हैं। कार के अन्दर संगीत की लय जब समाप्त हुई तो ऐसा लगा कि उनका रोम-रोम भाव और सुरूर और मस्ती में डूब गया हो। इस्ताम्बोल में जगह-जगह पर्यटन स्थलों पर भाँति-भाँति के सोवेनियर के साथ सूफी संगीत की सीडियाँ भी बिकती दिखाई देती हैं। आखिर इसकी इतनी लोकप्रियता का रहस्य क्या है? मैने मुस्तफा ऊग्लू से जानने की कोशिश की।

बोलेः इसका एक कारण तो यह है कि लोग सेकुलरवाद और आधुनिकतावाद के जोशीले प्रचार से तंग आकर एक ऐसी दुनिया में वापस जाना चाहते हैं जहाँ उन्हें शान्ति के कुछ पल मयस्सर आ सकें। और दूसरा कारण संभवतः नयी नस्ल में अतीत की ओर पायी जाने वाली एक रोमांचक प्रवृत्ति भी हो सकती है। उन्होंने एक लम्बे समय तक सांस्कृतिक आतंकवाद का सामना किया है। इस दौरान उनका सब कुछ बदल गया लेकिन एक ऐसी तुर्क क़ौम तैयार न हो सकी जो आधुनिक संसार में अपनी अग्रसरता का झण्डा गाड़ सकती। सामान्य लोग इस परिस्थिति से असन्तुष्ट और भविष्य से निराश हैं। फिर यदि वह उस अतीत की ओर लौटना चाहते हैं जहाँ सूफी नृत्य और विह्वलता और उमंग की सभाएँ उन्हें शान्ति और खुशी के कुछ पल प्रदान कर सकती हों तो यह सब कुछ अविश्वसनीय नहीं।

मुस्तफा ऊग्लू की शैली काफ़ी विचारपूर्ण थी। पता चला कि उन्होंने इस्ताम्बोल विश्वविद्यालय से नागरिकता और पहचान के विषय पर दर्शनशास्त्र में पी.एच.डी. की है और अब एक शोध संस्थान में आधुनिक तुर्की के इतिहास पर काम कर रहे हैं।

यह आपके नाम में ऊग्लू का लाहिक़ा (प्रत्यय) क्यों है? मैं कई दिनों से सोच रहा हूँ, यह बात समझ में नहीं आती कि यहाँ कोई ऊग्लू है तो कोई इर्दगान, कोई अरबकान है तो कोई..............। हालाँकि तुर्क क़ौम के भौगोलिक, नस्लीय और ऐतिहासिक रिश्ते अरब ईरान और भारत से काफी पुराने हैं और इस्लाम इसके रग-रग में सदियों से रचा-बसा है। फिर नामों की इस विचित्रता का कारण समझ में नहीं आता।

मुस्तफा ऊग्लू रहस्यपूर्ण अंदाज में मुस्कुराए। कहने लगेः जी हाँ, यह सब कुछ उसी सांस्कृतिक आतंकवाद के हल (परिणाम) हैं जिसकी ओर अभी मैंने संकेत किया। सन् 1924 में ख़िलाफत के पतन के बाद नये तुर्क राज्य ने इस बात की कोशिश बड़ी ताकत से की कि उस्मानिया साम्राज्य के मलबे पर जो नया राज्य स्थापित हो उसमें पुरानी सभ्यता का कोई नाम व निशान शेष न रहे। यह सारा बदलाव जल्दी-जल्दी में 6—7 सालों के अन्दर आ गया। राज्य स्तर पर प्रचार के बल-बूते पर एक ऐसा हंगामा बल्कि जोश और उबाल पैदा करने वाली कैफियत पैदा की गयी कि किसी के लिए इसपर रोक लगाना संभव न रहा। 1925 ई० में पार्लियामेन्ट ने कानून पास करके तुर्की टोपी (फिज्ज) के प्रयोग पर प्रतिबन्ध लगा दिया और उसकी जगह अंग्रेजी शैली के हैट ने ले ली। मुस्तफा कमाल ने अपने भाषण में अपनी इस उपलब्धि का उल्लेख करते हुए कहा था किः

लोगों! फिज्ज़ को देशनिकाला देना आवश्यक था जो लम्बे समय से हमारी क़ौम के सिरों पर अज्ञानता, संकीर्णता और रुढ़िवाद की निशानी के रूप में विराजमान थी और यह बहुत आवश्यक था कि उसकी जगह पश्चिमी शैली के हैट को प्रचलित किया जाए जिसे आज सभ्य दुनिया प्रयोग करती है ताकि दुनिया को इस बात का पता चल सके कि तुर्क क़ौम भी सभ्यता में किसी से पीछे नहीं है।

इधर मर्दों के माथे से फिज्ज़ उतारा गया और उधर औरतों ने सभ्य बनने के उत्साह में पर्दा छोड़ने की घोषणा कर डाली। जिन औरतों ने इस मामले में ज़रा भी सुस्ती दिखायी वह बाज़ारों में और राजमार्गों पर मज़ाक, उपहास यहाँ तक कि सभ्य नागरिकों के हस्तक्षेप और जुल्म का निशाना बन गयीं। सन् 1926 ई० में इस्लामी कैलेण्डर के बदले गैरीगोरियन कैलेण्डर प्रचलित किया गया और इस तरह अचानक पूरी क़ौम पूर्वी देशों के बजाए पश्चिमी टाइम ज़ोन में साँस लेने पर मजबूर हो गयी।

फिर तो आरम्भ में कैलेण्डर और समय के परिवर्तन ने बहुत भ्रम पैदा किया होगा? मैंने पूछा।

जी हाँ! एक ज़माने तक हमारे बड़े-बूढ़ों के लिए यह परेशानी बनी रही कि आज कौन सा दिन है और घड़ी में कितने बजे हैं क्योंकि हम अचानक पश्चिमी टाइम ज़ोन में आ गए थे। तुर्क क़ौम (जाति) अभी इन हमलों से सँभलने न पायी थी कि 1928 ई० में लिपि परिवर्तन की घोषणा कर दी गयी। परम्परागत अरबी-फारसी लिपि की जगह अब रोमन लिपि को सरकारी हैसियत दे दी गयी। कहा यह गया कि इस पुरानी लिपि के कारण ही हमारे यहाँ शिक्षा की स्थिति ख़राब है। लेकिन जब लिपि-परिवर्तन के बाद भी दशा में सुधार न हुआ बल्कि भ्रम और बढ़ गया तो इसका समाधान यह निकाला गया कि तुर्की भाषा से जहाँ तक संभव हो अरबी और फारसी के शब्द निकाल दिए जाएँ। एक शुद्ध तुर्क भाषा के गठन के लिए सन् 1932 ई० में मुस्तफा कमाल ने एक राष्ट्रीय

संस्थान स्थापित किया। जिसे इस काम पर नियुक्त किया गया कि वह अनातोलिया और मध्य एशिया के क्षेत्रों से तुर्की शब्दों की छानबीन करके एक नयी भाषा का निर्माण करे। सन् 1934 ई० में 'नाम के आखिरी शब्द' (Low of last name) का क़ानून बनाया गया जिसके अनुसार नागरिकों से यह अधिकार भी छीन लिया गया कि उनके नाम का आखिरी भाग उनकी पारिवारिक प्रतिष्ठा या भौगोलिक सम्बन्ध का पता दे। देखते-देखते ख्वाजा, आगा, पाशा, बे, आफन्दी और खानम जैसी उपाधियाँ हमारे नामों से लुप्त हो गयीं और उसका स्थान बेजान कृत्रिम नामों ने ले लिया।

तो क्या ऊग्लू आपका सरकारी नाम है?

मेरे इस प्रश्न पर वह ज़ोर से हँसे। नहीं, कदापि नहीं! ऊग्लू का अर्थ है 'का पुत्र' (Son of) जैसे अरबी में कहते हैं न इब्ने फलाँ। मुस्तफा ऊग्लू के अर्थ हुए मुस्तफा का बेटा। मेरा पूरा नाम सुल्तान मुस्तफा ऊग्लू अलमास है।

ओह, आई सी! तो मानो किसी को ऊग्लू कहकर सम्बोधित करना ऐसा ही है जैसे हमारे यहाँ नादान लोग किसी को मात्र इब्न या अब्दुल कहकर पुकारते हैं। देखिए अज्ञानता क्या-क्या गुल खिलाती है।

मुझे अपनी अज्ञानता और नासमझी की एक और घटना याद आयी। इस्ताम्बोल की पिछली यात्रा में अकमलुद्दीन एहसान ऊग्लू से एक कॉन्फ्रेन्स के दौरान सामना हो गया। वह जिन दिनों आई.आर.सी.आई.सी.ए. के डारेक्टर थे। मेरा उनसे पत्राचार रह चुका था। अब वह ओ.आई.सी.के सेक्रेटरी जनरल की हैसियत से कॉन्फ्रेन्स में आए हुए थे और लोगों में घिरे थे। सोचा कि उन्हें भाई ऊग्लू कहकर सम्बोधित करूँ। वह तो अच्छा हुआ कि इसकी नौबत न आयी और उन्होंने खुद ही बढ़कर मिलाने के लिए हाथ बढ़ा दिया अन्यथा अपनी योग्यता का भ्रम बीच बाज़ार टूट जाता।

मुस्तफा ऊग्लू की बातचीत जारी थी : यह जो आप हमारे नामों में शमशीक, इर्दगान, कोर्कमाज, दआन, देकमन, ओज़गान जैसे प्रत्यय देखते हैं। यह सब उसी कमाली क़ानून का कमाल है। कभी-कभी सरकारी अधिकारियों ने नाम का आखिरी हिस्सा खुद अपनी ही इच्छा से एलाट कर दिया। इस तरह लोगों के लिए अपनी खानदानी रिवायत और अपने इतिहास से अवगत रहना भी कठिन हो गया। लिपि के परिवर्तन ने हमारा सम्बन्ध परम्परागत बौद्धिक और सांस्कृतिक स्रोतों से पूरी तरह काट दिया। हम रातों-रात जाहिल हो गए। पुरानी लिपि में पायी जाने वाली किताबों के भण्डार और भव्य लाइब्रेरियाँ हमारे लिए निरर्थक हो गयीं। इस दमन के विरुद्ध, जिसे आप सांस्कृतिक आतंकवाद कहते हैं, कोई जन-विद्रोह नहीं हुआ?

हुआ क्यों नहीं, लेकिन सफल न हो सका। मुस्तफा कमाल के निकटवर्ती लोगों में इन क्रिया-कलापों से फूट पड़ गयी। ख़िलाफत के विघटन की घोषणा ने पूरी क़ौम को विमूढ़ता में डाल दिया। शेख सईद जो नक्शबन्दी सिलसिले के एक कुर्द नेता थे। उन्होंने

विद्रोह की घोषणा कर दी। जल्द ही यह जन-आन्दोलन विभिन्न क्षेत्रों में फैल गया। बहुत से छोटे शहरों और गाँवों में क्रान्तिकारियों ने सरकारी कार्यालय अपने अधिकार में ले लिए। लेकिन सरकारी मशीनरी के आगे यह लोग अधिक देर तक न टिक सके। शेख सईद गिरफ़्तार कर लिए गए और उन्हें फाँसी दे दी गयी।

मुस्तफा कमाल के निकटवर्ती साथियों में से किसी ने इस दमन और अत्याचार पर आवाज़ नहीं उठायी? मैंने और अधिक जानना चाहा।

क्यों नहीं! स्वयं उनके करीबी साथियों में बहुत बैचेनी थी। कुछ लोगों ने ख़िलाफत को समाप्त करने की घोषणा का विरोध भी किया। उनके कुछ साथियों ने यह सन्देह खुलकर प्रकट किया कि हम किसी और दिशा में निकल आए हैं। यहाँ तक कि मुस्तफा कमाल को इस बात का एहसास होने लगा, कि वह स्वयं अपनी पार्टी में अल्पमत में आ गए हैं। सन् 1924 के समाप्त होने तक असन्तुष्ट समूह ने पी.आर.पी. (प्रोग्रेसिव रिपब्लिक पार्टी) के नाम से एक अलग दल का गठन भी कर डाला। 1926 ई० में मुस्तफा कमाल की हत्या का षडयन्त्र उजागर हुआ। खुदा जाने इसमें कितनी सच्चाई थी लेकिन इस बहाने से बड़ी जाँच-पड़ताल हुई, मुकद्दमे चलाए गए। लगभग सभी महत्वपूर्ण विरोधियों जिनमें कारा बक्र, जावेद बे, अहमद शुकरी, इस्मत जान बलवत फाँसी के तख्ते पर चढ़ा दिए गए। इसके बाद मुस्तफा कमाल की उद्दण्डता को लगाम देने वाला कोई न बचा। इसलिए उन्होंने अपने आप को अपनी इच्छा से अतातुर्क अर्थात राष्ट्रपिता घोषित कर डाला। अतातुर्क सरकारी तौर पर उनके नाम की अन्तिम उपाधि के रूप में मान्य हुआ। जिसे किसी और के लिए अपनाना अक्षम्य अपराध समझा गया।

अब क्या स्थिति है? इस बदलती हुई परिस्थिति में लोग अपने राष्ट्रपिता को किस रूप में देख रहे हैं?

अभी भी इस्तम्बोल के एयरपोर्ट का नाम मुस्तफा कमाल के नाम पर है। सार्वजनिक स्थलों पर जगह-जगह उनकी तस्वीरें लगी हुई हैं। तुर्की मुद्रा पर उनकी तस्वीरें छप रहीं हैं। बच्चे आज भी अपने स्कूल में पढ़े जाने वाले गान में मुस्तफा कमाल की हीरो वरशिप में डूबे हुए गाने गा रहे हैं!

अबे बेबक अतातुर्क! अचतन युलद अगस्तरदीन हीदीफी दरमादान यूरीजीन आतती चरीम वारलेम तुर्क वारलीना अरमान आलसू। नेमतल ने तर्कीया ई ने।

अर्थात : ऐ मुस्तफा कमाल! तूने हमें जो मार्ग दिखाया है हम उसपर आगे बढ़ते जायेंगे। हमारा जीवन तुर्क क़ौम के लिए समर्पित है। कितना भाग्यशाली है वह व्यक्ति जो कहे मैं तुर्क हूँ।

आपने ठीक कहा। प्रकट रूप से तो यही दिखायी देता है। कुछ अन्दर की दशा पर प्रकाश डालिए, मैंने अतातुर्क की लोकप्रियता की दशा जाननी चाही।

अब तो स्थिति काफी बदल गयी है। कुल मिलाकर तुर्क क़ौम को यह एहसास हो चुका है कि अतीत से कटकर और अपनी मिल्लत के इतिहास को भुलाकर उसने राष्ट्रीय आत्महत्या का अपराध किया है। एक वह ज़माना था कि मुस्तफा कमाल ने तुर्क इतिहास को नये सिरे से लिखने की कोशिश की और अब स्थिति यह है कि लोग उस्मानी खिलाफत के दिनों को फिर से लौटाना नहीं तो कम से कम ताज़ा करना अवश्य चाहते हैं। इस्ताम्बोल और अंकरा में जिधर जाइये आपको यह महसूस होगा कि लोग अपने अतीत को प्रतीक के रूप में ही सही फिर से जीवित करना चाहते हैं। उस्मानी युग का पहनावा, उस ज़माने का फैशन यहाँ तक कि अब रेस्तराँ में ऑटोमन (उस्मानी) फूड का चलन भी सामान्य हो चला है और आपको आश्चर्य होगा कि बहुत से नौजवान लड़के-लड़कियाँ प्राचीन तुर्की लिपि सीख रहे हैं।

अब हमारी कार फातेह सुल्तान मुहम्मद पुल के निकट आ चुकी थी। मैंने जब भी तोपकापी सराय से फातेह सुल्तान मुहम्मद पुल को देखा, मुझे एक भयानक रहस्यमयता का एहसास हुआ। एशिया और यूरोप के दो महादेशों को मिलाने वाले इस नाजुक और सुन्दर पुल पर शान और शौकत का एक जादू प्रकट होता देखा। ख़िलाफत के महल का ऐतिहासिक दबदबा और बासफोरस का प्राकृतिक आकर्षण उसकी वास्तु कला से कुछ इस तरह समन्वित हो गई है कि उसपर किसी नव-निर्माण का गुमान मुश्किल से ही होता है। नये पर्यटक पर यह बात भी नहीं खुल पाती कि जिस तुर्की में अतीत के सारे वैभव विस्मृत घोषित कर दिए गए हैं वहाँ आधुनिक शैली का एक पुल जिसका निर्माण 1986 में हुआ, उसका नाम सुल्तान फातेह के नाम पर कैसे रखा जा सकता है। फातेह सुल्तान पुल तुर्कों की आत्मचेतना की प्रतीक भी है और इस बात की घोषणा भी है कि मुहम्मद फातेह के उल्लेख के बिना इस्ताम्बोल को विश्वसनीयता नहीं मिल सकती।

इस्ताम्बोल दो प्रतीकों का समन्वय है। एक का प्रतिनिधित्व पैग़म्बर (सल्ल०) के मेज़बान हज़रत अबू अय्यूब अंसारी का मक़बरा कर रहा है। पहली नस्ल के मुसलमान शहर की फसील(दीवार) के बाहर एक सहाबी की क़ब्र के रूप में अपनी उपस्थिति की एक अमिट निशानी छोड़ गए थे। दूसरी निशानी मुहम्मद फातेह की विरासत और चर्चे हैं जिसकी गूँज लगभग 500 वर्षों से इस्तम्बोल के वातावरण में लगातार सुनायी देती है। इन दो प्रतीकों के बीच, चाहे आप इसे इन दोनों का समन्वय कहिए या जनता के मन का साँचा, कौनिया की ओर से आने वाले वैचारिक और दार्शनिक प्रभाव हैं जिनसे इस्ताम्बोल और उसके आस-पास का वातावरण सदियों से आच्छादित है। दूसरे शब्दों में यह कह लीजिए कि इस्ताम्बोल को धार्मिक प्रतिष्ठा हज़रत अबू अय्यूब के कारण मिलती है, सुल्तान मुहम्मद फातेह इस पहचान को स्थायित्व प्रदान करने वालों में हैं। अलबत्ता दिल और दिमाग़ पर क़ौनिया के बादशाह मौलाना रूम का सिक्का चलता है।

इतिहास भी कैसा आश्चर्यजनक विषय है। जब एक बार ईमानवालों के हाथों से इसकी लगाम फिसल जाए तो यह उन्हें गुमनाम दिशाओं में लिए फिरती है। बाद वालों के लिए इसकी छानबीन और विश्लेषण भी कोई आसान काम नहीं रह जाता। क्योंकि कर्म और दन्त कथा दोनों एक साथ उसके निर्माण में अपना योगदान देते हैं। हज़रत अबू अय्यूब (7वीं सदी) से लेकर कुस्तुनतुनिया (1453 ई०) तक कोई 7–8 सदियों पर आधारित निरन्तर संघर्ष की यह दास्तान इस चेतना का प्रतीक है कि मुठ्ठी भर बेसरो सामान लोग भी यदि किसी बड़े से बड़े अभियान पर सच्चे दिल से आमादा हो जाएँ तो चाहे वह तात्कालिक रूप से सफल न हों, भविष्य की सफलता की आधारशिला तो रख ही देते हैं। मुसलमान चिन्तकों के लिए यह बात आज भी यह गुत्थी नहीं सुलझती है कि 15वीं सदी का मध्य जो विश्वमंच पर उस्मानी तुर्कों के शौर्य और शान के प्रकटीकरण का युग है। उसी सदी के अन्तिम सिरे पर 1492 ई० में ग्रेनाडा की पराजय की दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटित हुई। फिर क्या कारण था कि तुर्कों की ओर से मुस्लिम स्पेन को बचाने का कोई प्रभावी प्रयास न हुआ। मोरक्को के राजा की ओर से ग्रेनाडा के अन्तिम लड़खड़ाते राज्य को ऐन मौके पर कोई सहायता न मिल सकी। हालाँकि तुर्क तो 1672 ई० तक सामरिक रूप से इस स्थिति में थे कि वह आक्रमण करके वियेना का घेराव कर लेते थे। 16वीं सदी में ब्रिटेन की महारानी तुर्कों के पास सहायता के लिए राजदूत भेजती ताकि पोप के मुकाबले में ब्रिटेन को उस्मानी तुर्कों की शरण मिल सके। और सबसे बढ़कर यह कि जो लोग 17वीं सदी के अन्त तक दुनिया पर एकाधिकार रखते थे, अचानक 19वीं सदी में मर्मान्तक पतन का शिकार कैसे हो गए। मैं जब भी इस्ताम्बोल आया ये प्रश्न मेरा पीछा करते रहे।

# 6

# बलग़ल उला बि–कमांलहि

^^cqyUnh vius f'k[kj ij igq¡p x;h**

एक दिन सुल्तान मुहम्मद फातेह की जामा मस्जिद में खम्भे से टेक लगाए बैठा था, जुमे की नमाज़ समाप्त हो चुकी थी। लोग बगलों में जूतियाँ दबाए दरवाज़ों की ओर उमड़ रहे थे। क्या देखता हूँ कि एक बुज़ुर्ग सूरत, लम्बे कद वाले व्यक्ति अपने कुछ साथियों के संग मेरी ओर बढ़ते चले आ रहे हैं। मैंने उनकी ओर ध्यान से देखा। निगाहें आमने-सामने हुईं सलाम का आदान-प्रदान हुआ और मैं उनकी मुस्कुराहटों के उत्तर में उठ कर खड़ा हुआ। पूछा कहाँ के रहने वाले हो, किधर से आये हो और किधर जाने का इरादा है?

हिन्दुस्तान से।

हिन्दूउस्तान! उन्होंने बड़ी गर्मजोशी प्रकट करते हुए कहा और फिर अपने शिष्यों के साथ घेरा बनाकर वहीं बैठ गए। उम्र लगभग साठ से ऊपर होगी। सफेद लम्बी दाढ़ी जो इस्ताम्बोल के परिदृश्य में असाधारण रूप से लम्बी मालूम हो रही थी। ढीला-ढाला जुब्बा नुमा निबास पहने, सिर पर पगड़ी और टोपी दोनों की मौजूदगी के कारण यह फैसला करना कठिन था कि टोपी पगड़ी के ऊपर पहनी गयी है या पगड़ी टोपी के ऊपर बाँधी गयी है और सबसे बढ़कर यह कि हाथों में बुढ़ापे की छड़ी के बजाए एक लम्बी बाँसुरी जिसके एक सिरे पर प्राचीन शैली की चाँदी की घंटियाँ बँधी थीं। ऊँगलियों में कई अँगूठियाँ जिनमें हरे और लाल रंग के पत्थर जड़ रखे थे। हाँ, चाँदी की थोड़ी बड़ी अँगूठी उन सबमें नुमायाँ थी जिसपर सुनहरे रंग में मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्ल०) की पैग़म्बरी की मुहर खुदी हुई थी।

कहाः समय निकट आ गया है अब वह जल्द ही प्रकट होंगे। पूरब से एक रौशनी उठेगी जिससे पूरी दुनिया प्रकाशित हो जायेगी। पश्चिम से काले बादल उठेंगे और एक ऐसी आग प्रकट होगी जो दुश्मनों को भस्म कर देगी। लोहे का आसमानों में धुंध की तरह फिरना, आसमान से आग की बारिश का होना, मुसलमानों के दिलों में वहन (संसार से मोह और मौत का डर) पैदा हो जाना और दुनिया की सभी कौमों का इसपर टूट पड़ना, यह सब इस बात की निशानियाँ हैं कि हम कियामत की निकटता के अन्तिम क्षणों

में साँस ले रहे हैं। यह शुभ सूचना कि वह आने वाले हैं। मुबारक हो कि तुम अपनी आँखों से इस्लाम और मुसलमानों का प्रभुत्व देखोगे।

जी, लेकिन यह सब आप किसके बारे में फरमा रहे हैं? मेरे इस हस्तक्षेप का उन्होंने कोई नोटिस न लिया। उनके कथनों और शुभ सूचनाओं का सिलसिला उसी तरह जारी रहा।

उनका नाम मुहम्मद महदी होगा और तुम उनके समर्थक और सहायक बनोगे। मैं तुम्हारे मस्तक पर अल्लाह के नूर की झलक देख रहा हूँ।

जी आपने सही फ़रमाया। نحن ابناء النور नह्नो अबना-ए नूर (हम लोग प्रकाश की सन्तान में से हैं) मेरे पिता का नाम नूर (प्रकाश) है। मैं छह भाइयों में चौथा हूँ। मैंने मन ही मन मुस्कराते हुए उनके इस कथन को व्यंजनात्मक रूप से सार्थकता दी। लेकिन वह तो अपनी धुन में थे, वह कहाँ सुनने वाले थे। उनके कथनों का सिलसिला जारी रहा।

बेटे अल्लाह तुम्हें दज्जाल के उपद्रव से सुरक्षित रखे! जल्द ही वह महदी के मुकाबले पर आएगा। बड़ा रक्तपात होगा लेकिन अन्त में विजय सत्य की होगी।

लेकिन यह सब कुछ आपको कैसे पता चला ?

कहने लगे अल्लाह से डरो। दीन की बातों में सन्देह नहीं करते। उनकी रोबदार आवाज़ और तेज़ हो गयी।

क़ुरआन पढ़ो बेटे क़ुरआन! क्योंकि इसमें अगली पिछली सारी बातें मौजूद हैं। सन्देह न करो क्योंकि सन्देह शैतान का हथियार है।

लेकिन क़ुरआन तो महदी के उल्लेख से खाली है। मैंने शिष्य की तरह अकलूषित भाव से आपत्ति प्रकट की। यद्यपि क़ुरआन में مهتدی मुहतदी शब्द का प्रयोग कुछ जगहों पर हुआ है लेकिन महदी के प्रकट होने की सूचना यदि वास्तव में दीन का अंग होती तो अल्लाह अवश्य मोमिनों को इस सम्बन्ध में सूचित करता।

शेख के चेहरे पर कुछ चिन्ता कुछ परेशानी और कुछ क्रोध के भाव प्रकट हुए। कहने लगे तुम क्या जानो क़ुरआन का एक स्पष्ट अर्थ है और एक निहितार्थ है, एक मूल पाठ है और एक उसका भाव है और उसके निहितार्थ से केवल अल्लाह वाले ही अवगत होते हैं जिन्होंने इस बात की गवाही दी है कि अन्तिम युग में महदी प्रकट होंगे। बहुत सी निशानियाँ प्रकट हो चुकी हैं। अब उनके प्रकट होने को कोई नहीं रोक सकता। सन्देहों के अँधेरों से बाहर निकलो। हदीस पढ़ो हदीस।

लेकिन जनाब बुखारी और मुस्लिम की किताबें भी महदी की कहानी से खाली हैं। मेरे इस स्पष्टीकरण पर उनका क्रोध और बढ़ गया। कहा, रिसाल-ए नूर पढ़ो रिसाल-ए नूर। सईद नूरसी ने लिखा है कि महदी रसूलुल्लाह (सल्ल०) के खानदान से होगा। उसे सबसे अधिक सादात (सैय्यदों) के समूह से समर्थन मिलेगा इसलिए मोमिनों को चाहिए कि

वह अहल-ए बैत (पैग़म्बर के घरवालों) के आस-पास अपने आप को एकत्र करें और यह जो तुम नमाज़ों में पाँच बार आल-ए मुहम्मद पर दुरूद और सलाम भेजते हो तो यह इसी कारण तो है कि अन्तिम युग में सादात की बड़ी आबादी अन्त में संगठित होकर धर्म की रक्षा और उसके प्रभुत्व के लिए सामने आयेगी। महदी के प्रकट होने की भविष्यवाणी यदि सच न होती तो फिर मुहम्मद (सल्ल०) के आल पर दुरूद और सलाम को जारी रखने की आवश्यकता ही क्या थी।

इससे पहले कि मैं और कोई आपत्ति उनसे करता, शेख ने चेहरा फेरा, बाँसुरी पर लगी घंटी के कम्पन से वार्ता के समापन का इशारा दिया और उसकी सुरीली लय पर بلغ العلیٰ بکمالہ "बलग़ल उला बि-कमालेहि" के मस्ती भरे राग ने माहौल को अपनी चपेट में ले लिया। शेख के साथ उनके शिष्यों ने लय में लय मिलाई और इस तरह प्रतापी भविष्यवाणियों का यह सिलसिला रमणीय प्रस्फुटन पर समाप्त हुआ।

# 7
# सुषुप्त मिथक

इस्ताम्बोल भी निराला शहर है। मैं जितनी बार भी यहाँ आया हर बार पहले से कहीं अधिक उसकी रहस्यात्मकता का एहसास हुआ। न जाने कब किस मोड़ पर कौन सा मिथक और कौन सा इतिहास आपका रास्ता रोककर खड़ा हो जाए। यहाँ टूटी दीवारों की छाँव और सुषुप्त मकबरों के शिलालेखों ने मिलकर मिथक और इतिहास का ऐसा ताना-बाना बुना है कि कभी-कभी एक को दूसरे से अलग करना बहुत कठिन हो जाता है। जिस पत्थर को उठाइए, उसके नीचे एक इतिहास सो रहा है। यह बाज़नतीन का शहर है, अबू अय्यूब की आरामगाह है और मुहम्मद अल-फातेह की बहादुरी की उद्घोषणा है। इतिहास अगर सबक सीखने की दृष्टि से पढ़ा जाए तो उसकी दिशाहीनता के निवारण का हौसला पैदा होता है और यदि उसपर मिथक की गर्द जम जाए तो काफिले की दिशाहीनता का एहसास जाता रहता है। अब यह हमारे ऊपर है कि हम इन पत्थरों के नीचे से मिथक निकालते हैं या इतिहास। तुर्कों ने अपने पतन को रोकने के लिए आरम्भ में मिथक को काम में लगाया। 18वीं और 19वीं सदी की पतनशील उस्मानी सल्तनत में जादुई दावपेंच की किताबें बहुत लोकप्रिय हुईं। काल्पनिक कुरआनी वफक और नक्शों के विशेषज्ञ होने के दावेदारों ने परिस्थिति पर बाँध बाँधने का हर संभव प्रयास कर डाला। ख़लीफा और सरदारों को बुरे प्रभावों से सुरक्षित रखने और दुश्मनों के नुकसान से बचाने के लिए ऐसे पहनावे तैयार किए गए, जिनपर आरम्भ से अन्त तक पूरा क़ुरआन लिखा होता है। क़ुरआन मजीद की तावीज़ रूपी प्रतियाँ भी बहुत लोकप्रिय हुईं लेकिन विपत्तियों को रोकने की ये सभी कोशिशें पतन की इस रफ्तार को बढ़ाती ही रहीं। कहते हैं कि अब्बासी ख़लीफा भी इस बौद्धिक भ्रम के शिकार थे। अन्यथा बग़दाद की अन्तर्राष्ट्रीय राजधानी इतनी आसानी से नष्ट न होती। उनके यहाँ यह कल्पना सामान्य रूप से चली आ रही थी कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की एक चादर जो कभी उमय्या वंश के ख़लीफा के अधिकार में थी और जो अब अब्बासी वंश के अधिकार में चली आयी थी, उसे यदि कोई व्यक्ति ओढ़ ले तो युद्ध के मोर्चे पर या खतरे की घड़ी में उसका बाल-बाका न होगा। कहते हैं कि अन्तिम अब्बासी ख़लीफा जब कालीन में लपेट कर घोड़ों की टापों से कुचला गया उस समय उसने यही चादर ओढ़ रखी थी। 21वीं सदी के इस्ताम्बोल के राजमार्गों पर चलते-फिरते, कहवाखानों में बात करते और सार्वजनिक स्थलों पर लोगों से मुलाकात के दौरान इस बात का बहुत गहरा एहसास होता है कि आज भी तुर्की वाले किसी ऐसी कबा (कुर्ता) की तलाश में हैं जो उन्हें दुश्मनों के

षडयन्त्रों से सुरक्षित रख सके। मामला अब केवल सुरक्षित रखने का नहीं बल्कि इस दशा से मुक्ति दिलाने का भी है जिसने तुर्क क़ौम को उसके ऐतिहासिक शान और शौर्य और महान नेतृत्व की भूमिका से वंचित कर रखा है। शायद इसीलिए परोक्ष से प्रकट होने वाले एक व्यक्ति की प्रतीक्षा तेज़ से तेज़तर होती जा रही है।

मैंने मुस्तफा ऊग्लू से पूछा, तुम्हारा इस बारे में क्या विचार है। क्या वास्तव में वह जल्द ही प्रकट होंगे?

जी हाँ, सुनने में तो यही आ रहा है। बल्कि कुछ बरसों पहले तो नौजवान लड़के लड़कियों में उनके संभावित आगमन का बड़ा शोर था। हर पल धड़का लगा रहता था कि पता नहीं कब किस वीरान गली या सोई हुई कब्रों से कोई सफेद दाढ़ी वाला बुजुर्ग हाथों में हज़ार दाने वाली तस्बीह लिए आ जाए और वह अपने महदी होने की घोषणा कर दे, लेकिन इधर कुछ वर्षों से इस शोर की कैफियत अब नहीं रही।

तो क्या आप किसी महदी की प्रतीक्षा में नहीं?

मेरे इस सवाल पर मुस्तफा ऊग्लू मुस्कुराए, बासफोरस की धीरे-धीरे चलती लहरों पर एक नज़र डाली, कहने लगे हममें से हर व्यक्ति महदी है। आप भी महदी और मैं भी महदी। अब इतिहास को सुधारने का काम हम सभी को मिलजुल कर करना है। अन्तिम पैग़म्बर (सल्ल०) के बाद अब किसी और की प्रतीक्षा करना निरर्थक है।

लेकिन यहाँ इस्ताम्बोल में तो उनके आने की खबर बहुत गर्म है।

जी हाँ आपका अनुमान ठीक है। यह वास्तव में लोगों की बैचेनी है, वह हर हाल में परिस्थितियों को बदलना चाहते हैं, और जब उनका वश नहीं चलता तो वह परोक्ष के एक व्यक्तित्व के सहारे अपनी बेनसीबियों की भरपाई की कोशिश करते हैं। अफसोस कि धार्मिक और सेक्युलर दोनों गिरोह इसी मिथकीय रीति के वशीभूत हैं। वह जल्दी में हैं और किसी शार्ट कट की तलाश में हैं।

तो क्या आपके विचार में धार्मिक उलमा की तरह अतातुर्क भी मिथकीय शैली की सोच के शिकार थे?

जी हाँ! बिल्कुल। मिथक विवेकहीन प्रवृत्ति और अन्धविश्वास के कोख से जन्म लेता हैं। इसका शिकार होने के लिए धार्मिक या सेक्यूलर होने की शर्त नहीं। बल्कि कभी-कभी तो सेक्युलर लोगों के हाथों कहीं अधिक खतरनाक और घातक मिथक जन्म लेता है।

अतातुर्क ने नयी राष्ट्रीय पहचान की स्थापना के लिए तुर्क कौम को एक मिथकीय इतिहास का धारक बताया जो उसके स्वनिर्मित मिथक के अनुसार ईसा पूर्व 10,000 वर्ष से किसी काल्पनिक महादेश मू पर आबाद चली आ रही थी। कहा गया कि वातावरण में परिवर्तन के कारण यह महादेश लुप्त हो गया। लोग विभिन्न क्षेत्रों में बिखर गए। अनातोलिया के हिट्टी लोग तुर्क क़ौम की सन्तान हैं जिन्होंने एक ज़माने में महान साम्राज्य स्थापित कर रखा था। आज भी अंकरा में हिट्टी सभ्यता का सूर्य वृत्त तुर्कों की

स्वनिर्मित महानता की निशानी के रूप में लटका हुआ है। कुछ इसी तरह के अन्धविश्वासों ने हिटलर के दिल और दिमाग में जर्मन क़ौम की स्वाभाविक श्रेष्ठता का विचार बैठा दिया था। वह इस कल्पना का कैदी हो गया कि काल्पनिक ग्रह अटलांटिस के रहने वाले गोरी जर्मन क़ौम को दुनिया की सभी क़ौमों पर शासन करने के लिए बनाया गया है। हिटलर की तरह अतातुर्क ने भी सभी पिछले मिथक और इतिहास को पूरी तरह रद्‌द कर दिया। वह इस वास्तविकता को भूल गए कि सदा से मानव सभ्यता की गाड़ी विभिन्न क़ौमों और मिल्लतों के साझा संसाधनों और ईधन से चलती रही है। इसकी हैसियत मानवता की सामूहिक पूँजी की है। इस सामूहिक जड़त्व के बिना एक नया प्रारम्भ सदैव नान स्टार्टर रहेगा। अतातुर्क का स्वनिर्मित मिथक पिछलों के जड़त्व से वंचित था। इसलिए इस गाड़ी को जितना भी धक्का दिया गया। वह उसी रफ्तार के साथ पीछे की ओर लौट आयी। अफसोस इस बात का है कि इस प्रक्रिया में तुर्क क़ौम की लगभग तीन चौथाई सदी नष्ट हो गयी।

बातों-बातों में यह पता ही न चला कि हम सुल्तान मुहम्मद फातेह पुल कब का पार कर चुके। और अब जो सामने नज़र पड़ी तो अचानक एहसास हुआ कि हमारी कार एक ऐसे भवन के सामने खड़ी है, जो ओ.आई.सी. और विभिन्न मुस्लिम देशों के झण्डों से सुसज्जित है। मुस्लिम इतिहास और सभ्यता और कला के अध्ययन का यह केन्द्र पिछले तीन दशकों में बड़े दुर्लभ और महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ प्रकाशित कर चुका है। उनमें क़ुरआन मजीद की वह प्रतियाँ भी हैं जिन्हें हज़रत उस्मान (रज़ि०) द्वारा लिखित बताया जाता है और जिसकी ज़ियारत (दर्शन) का शौक इस्ताम्बोल की पहली यात्रा में मुझे तोपकापी सराय तक ले गया था। अब सामान्य शौकीन लोगों को इस प्रति को देखने के लिए तोपकापी सराय जाने की आवश्यकता नहीं होगी क्योंकि इतिहास अध्ययन केन्द्र ने इस प्रति की छायाप्रति बहुत अच्छे ढंग से प्रकाशित कर दिया है। मिस्र में सय्यदना हुसैन की मस्जिद में भी हज़रत उस्मान (रज़ि०) द्वारा तैयार करायी हुई क़ुरआन मजीद की एक प्रति की प्रसिद्धी चली आ रही है। उसके प्रकाशन के लिए भी शोधकर्ता कमर कस रहे हैं। पूरी दुनिया में क़ुरआन की कम से कम ऐसी सात प्रतियाँ पायी जाती हैं जिनके बारे में बताया जाता है कि वह हज़रत उस्मान (रज़ि०) उस समय उसका अध्ययन कर रहे थे जब उनको शहीद किया गया था और जिनपर उनके खून के धब्बे मौजूद हैं जिनमें सबसे प्रसिद्ध ताशकन्द की प्रति है। अब इन प्रतियों के प्रकाशन से कम से कम इतना तो होगा कि इतिहास पर मिथक की जो गर्द जम गयी है उसे दूर करने में मदद मिलेगी। तोपकापी सराय की पहली यात्रा में ही मुझे इस बात का एहसास हो गया था कि हज़रत यूसुफ की पगड़ी हो या अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की मुबारक जूतियाँ, हज़रत अली की जुलफिकार नामक तलवार हो या अन्य पवित्र पुरातात्विक वस्तुएँ, उनकी पवित्रता मिथकों के दम से कायम है। इतिहास की कसौटी पर उनकी हैसियत उनकी ओर संबधित

कर देने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। हज़रत उस्मान (रज़ि०) के क़ुरआन की विभिन्न प्रतियों का प्रकाशन होने से सामान्य लोगों के लिए इस बात का अंदाजा लगाना आसान हो जायेगा कि दुनिया भर में मू-ए मुबारक (मुबारक बाल), निशान-ए कदम (पैर के निशान) और अन्य पुरातात्विक और दुर्लभ चीज़ों की वास्तविकता क्या हो सकती है, विशेष रूप से एक ऐसे धर्म में जो एशिया में तकदीस (पवित्रता) की धारणा मिटाने आया हो।

इतिहास अध्ययन केन्द्र का सारा ज़ोर इतिहास और विरासत की सुरक्षा पर केन्द्रित है। इसे आधुनिक संसार से कुछ भी लेना-देना नहीं। 20वीं सदी में इस्लामी दुनिया के विभिन्न भागों में जो दमनकारी साम्राज्य या अत्याचारी शासन स्थापित हुए, उन्हें यह गवारा न था कि इस्लाम को एक ज़िन्दा और समसामयिक धर्म के रूप में देखा जाए। इसलिए उन्होंने अपने आप को इस्लामी इतिहास और विरासतों के रक्षक के रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश की। इस्लाम भी अन्य बहुमूल्य दुर्लभ वस्तुओं की तरह संग्रहालय की वस्तु बन गया। खाड़ी के देश हों या उत्तर अफ्रीका के मुस्लिम देश या स्वयं आधुनिक तुर्की, धार्मिक भावना को सन्तुष्ट करने के लिए इतिहास और विरासत की सुरक्षा और किसी हद तक उसको सींचने को पर्याप्त समझा गया। उस समय संभवतः शासकों को इस बात का अन्दाजा न था कि इतिहास चाहे कितनी ही सुप्रावस्था में नज़र आए, माहौल अनुकूल हो तो बोल उठता है। फिर इतिहास के नक्कारख़ाने में शासकों की आवाज़ें, चाहें उसके पीछे राज्य की कितनी ही बड़ी ताकत क्यों न हो, कान पड़े सुनायी नहीं देती। अरब दुनिया में इतिहास और विरासत की ख़ामोश बोल अन्ततः एक जनक्रान्ति में परिणित हुई। नयी पीढ़ी को जब एक बार यह पता चल गया कि उसका सम्बन्ध इन सांस्कृतिक दुर्लभ चीज़ों से है जिसे अतीत की पृष्ठभूमि में देखकर बुद्धि भी चकित रह जाती है और उसके बाप-दादा इस ऐतिहासिक वीरगाथा के मुख्य अभिनेता रहे हैं जिससे वैश्विक सभ्यता की रौनक कायम है तो उसके लिए संभव न रहा कि वह विवशता की उस बनावटी परिस्थिति पर सन्तुष्ट रह सके। इस्ताम्बोल में भी चलते-फिरते हर पल ऐसा महसूस होता है, जैसे इतिहास आपको कुछ कर डालने पर उकसा रहा हो। नयी पीढ़ी जो प्राचीन लिपि से अनभिज्ञ है उसकी बेचैनी उस समय और बढ़ जाती है, जब वह यह देखती है कि कब्रों पर लगे शिलालेखों और भवनों पर लगे शिलालेखों उसके लिए निरर्थक होकर रह गए हैं। इस्ताम्बोल की सभी ऐतिहासिक इमारतें, मस्जिदें और उनसे सटे हुए कब्रिस्तान सुन्दर लिखावट से सुसज्जित हैं जो बेचैन नौजवानों को लगातार यह निमन्त्रण देते रहते हैं कि आओ मुझे तलाश करो, मुझे पार किए बिना तुम स्वयं अपने शहर में आखिर कब तक अजनबी रहोगे।

## 8
## या साहिबुज़्ज़मान! अदरिकनी, अदरिकनी, अस्साअः

इतिहास अध्ययन केन्द्र की लाइब्रेरी अपनी अच्छी व्यवस्था, साज-सज्जा और किताबों के अच्छे चुनाव के कारण अपने अन्दर दिलचस्पी का काफी सामान रखती है। इस्लामी इतिहास और विरासत की सुरक्षा का इतना ध्यान शायद ही कहीं और रखा जाता हो और सबसे बढ़कर यह कि दुनिया भर से शौक रखने वालों और शोधकर्ताओं के आगमन का यहाँ ताँता बँधा रहता है। अभी मैं क़ुरआन मजीद की हाथ की लिखी एक प्राचीन प्रति के पन्ने उलटने में लीन था कि लकड़ी की सीढ़ियों पर क़दमों की धमक और महिलाओं की आवाज़ों की गूँज सुनाई दी। वह कुछ लड़कियाँ थीं जो संभवतः किसी की तलाश में थीं। अब जो निकट आईं और दुआ सलाम हुई तो ऐसा लगा कि आवाज़ कुछ जानी-पहचानी सी हो। शक्ल-सूरत भी देखी भाली हो। अच्छा तो यह बिस्मा अल-खतीब हैं। अभी कुछ महीने पहले उनसे इस्ताम्बोल ही में मुलाकात हुई थी, तब वह ''इस्लाम, नागरिकता और पहचान'' के विषय पर आयोजित होने वाली एक अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स में भाग ले रही थीं। कहने लगीं, मुझे आपके आने की ख़बर कल ही हो गयी थी, ये हमारी सहेली निह्ला, इनका सम्बन्ध भी मौसिल से है, आप तसव्वुफ़ (सूफीवाद) के विकास पर आयरलैण्ड में पी.एच.डी. कर रही हैं, उसने एक रौशन किताबी चेहरे वाली महिला की ओर इशारा करते हुए कहा। और यह हैं सनम, यहीं इस्ताम्बोल की रहने वाली हैं जो आज-कल खत्ताती (कलात्मक लिखावट) सीख रही हैं और प्राचीन तुर्की लिपि में खत्ताती की कला के महत्व पर शोध कार्य करने का इरादा रखती हैं। और यह हैं ईलाह जो इस्ताम्बोल विश्वविद्यालय में एम.ए. राजनीतिशास्त्र की छात्रा हैं। और हाँ, मुझे सबसे पहले तो आपसे क्षमा माँगनी है कि मैंने बिना किसी पूर्व अनुमति या निर्धारित कार्यक्रम के आपके अध्ययन में हस्तक्षेप किया। हम लोग तो केवल यह कहने आए थे कि आज दोपहर के खाने के दौरान या उसके तुरन्त बाद यदि संभव हो तो आप हमें कुछ समय दें। हमारे पास बहुत से प्रश्न हैं, ऐसे प्रश्न जो यदि तलाश के राजमार्ग पर चल निकलें तो एक नयी दुनिया का निर्माण हो जाए।

बिस्मा की बातें नयी दुनिया, नई सुबह, नये वैचारिक ढाँचे और नये पैराडाइम जैसी शब्दावली से भरी रहती हैं। ऐसा लगता है जैसे वह किसी ऐसी दुनिया की वासी हों जिसका अस्तित्व में आना अभी शेष हो। वह वर्तमान से कहीं अधिक भविष्य में जीती हैं। पिछले दिनों जब वह 'मुस्लिम नागरिकता और पहचान' के विषय पर अपनी थेसिस प्रस्तुत कर रही थीं तो उनके हर वाक्य से यह एहसास बढ़ता जाता था कि बिस्मा जैसी

मुसलमानों की नयी पीढ़ी, नई राजनीतिक हदबंदियों में अपनी नागरिकता और पहचान के सिलसिले में गहरे भ्रम और बैचेनी का शिकार है। अतीत उसकी पहुँच से बाहर, वर्तमान पर विश्वास नहीं और भविष्य संन्देहों और आशाओं के पर्दों में छिपा हुआ।

इस्ताम्बोल की उपरोक्त कान्फ्रेन्स के आयोजन का उद्देश्य तो यह था कि पश्चिम में मुसलमानों की यूरोपीय पहचान और नागरिकता की समस्या का समाधान तलाश किया जाए। यूरोपीय देशों के नागरिक की हैसियत से मिल्ली और इस्लामी पहचान की तुलना में देश पर आधारित पहचान का महत्व क्या है और यह कि मुसलमानों पर उन देशों की नागरिकता के कारण क्या कुछ कर्त्तव्य अनिवार्य हो जाते हैं? लेकिन जब बात से बात निकली तो पश्चिमी देशों की नागरिकता के प्रश्न को क्या पूछिए, स्वयं मुस्लिम राष्ट्रीय राज्यों की नागरिकता संदिग्ध और अविश्वसनीय हो गयी है। जबसे इस्लामी दुनिया में विचारधाराओं से प्रेरित नौजवानों की एक नयी पीढ़ी पैदा हुई है। उसके लिए यह समझना कठिन हो गया है कि इस्लामी दुनिया के केन्द्रीय भू-क्षेत्र में इराकी, कुवैती, सऊदी, अमाराती, मिस्री, ट्यूनिसी जैसी भिन्न और आपस में टकराने वाली नागरिकताएँ हमारे मिल्ली अस्तित्व पर क्यों थोप दी गयी हैं, और यह किवास्तव में इन बनावटी पहचानों की हकीकत क्या है। कुवैत का राष्ट्रीय हित इराक के राष्ट्रीय हित से टकराए, कुर्दिस्तान का अस्तित्व सीरिया और तुर्की के लिए असहनीय हो, सूडानी, मिस्री और मोरक्को, लीबिया के प्राकृतिक संसाधनों से वंचित और अरब प्रायद्वीप में सऊदी, कुवैती, अमाराती, यमनी, ओमानी जैसी बनावटी पहचानों की स्थापना के कारण एकीकृत उम्मत पर उसके प्राकृतिक संसाधनों का दरवाज़ा बन्द कर देना, यह सबकुछ आखिर इस्लाम की किस व्याख्या के कारण है। हालाँकि जब मुसलमान एक उम्मत थे, उनकी नागरिकता और पहचान केवल और केवल इस्लाम थी तो मलेशिया से लेकर मोरक्को बल्कि मुस्लिम स्पेन तक इस्लामी दुनिया के व्यापक क्षेत्र में मुसलमान ही नहीं बल्कि ग़ैर मुस्लिम क़ौमें भी अल्लाह द्वारा प्रदान किये हुए प्राकृतिक संसाधनों से समान रूप से लाभ प्राप्त करती रहीं। खुशहाल जीवन की नयी संभावनाओं के कारण एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में स्थानान्तरण साधारण बात समझी जाती थी। बल्खी, समरकन्दी, हिन्दी, खुरासानी, और अस्फहानी प्रत्ययों (लाहिकों) के साथ मक्का प्रवासी या इस्ताम्बोल प्रवासी लिखना आम बात थी। उस समय मुसलमानों की नागरिकता बनावटी राष्ट्रीय सीमाओं से परे थी। इस्लाम उनका धर्म भी था और नागरिकता भी।

बिस्मा वैसे तो कुरआन सम्बन्धी अध्ययन की छात्रा थीं लेकिन उनके प्रश्नों के तीर विभिन्न दिशाओं में चला करते थे। कभी इतिहास, कभी राजनीति, कभी सूफीवाद और कभी परम्परा। वह एक बैचेन आत्मा थीं जो अपने प्रश्नों की तेज़ धार से दूसरों को घायल करने का हुनर जानती थीं। उनका हर सवाल एक नये सवाल को जन्म देता बल्कि यह कहिए कि वह हर सवाल का जबाव एक नये सवाल से देतीं।

उनके हाथ में किसी ताज़ा किताब की कुछ प्रतियाँ थीं। कहने लगीं अभी-अभी प्रकाशित हुई है, यह कहकर उन्होंने किताब खोली, लेखिका की हैसियत से अपने हस्ताक्षर किए और मेरे हाथों में थमाकर यह कहती चली गयी कि इन्शा अल्लाह अब दोपहर के खाने पर मुलाकात होगी। خلاصۃ المقال فی المسیح الدجال *ख़ुलास्तुल मकाल फ़ील मसीहिद् दज्जाल,* मैंने किताब पर एक नज़र डाली और दूसरी नज़र लेखिका पर, मन ही मन मुस्कुराया और वह इधर-उधर अपनी सहेलियों के साथ चली गयीं।

दोपहर के खाने में हमाहमी और चहल-पहल का माहौल था। विशेष रूप से मौसल विश्वविद्यालय से छात्र-छात्राओं की दो बसें आयी थीं। भौगोलिक निकटता के कारण तुर्की में मौसल वालों का आना-जाना लगा रहता था और संभवतः इसका एक कारण यह भी है कि इराक के कुर्दों की रिश्तेदारियाँ तुर्की में दूर-दूर तक फैली हुई हैं। अभी मैं डाइनिंग हॉल में प्रवेश ही हुआ था कि एक तुर्क लड़की हमारे मेज़बान मुस्तफा ऊग्लू की ओर तेज़ी से बढ़ती हुई आयी और तुर्क भाषा में उनसे कुछ कहने लगी। मेरी समझ में बस इतना आया कि वह शेख आइज़ के बारे में कुछ कह रही है। पता चला कि मेरे लिए शेख आइज़ और दूसरे विशिष्ठ अतिथियों के साथ एक साथ बैठक का आयोजन किया गया है। शेख आइज़ पहले ही से बैठे हुए थे। लगभग 60—65 वर्ष की उम्र होगी। यद्यपि चेहरे पर दाढ़ी नहीं थी परन्तु हाथ में सुन्दर तस्बीह और उससे भी अधिक सुन्दर बल्कि शानदार छड़ी थामे हुए थे। उनका लिबास यद्यपि पश्चिमी शैली के सूट पर आधारित था लेकिन लाल रंग की तुर्की टोपी पर सफेद गोल पट्टी ने पूरबी शान और शौकत का दृश्य उभार रखा था। बातचीत में विचारों के आदान-प्रदान की बजाए निर्देशात्मक शैली स्पष्ट दिखायी दे रही थी। तस्बीह को शहादत की ऊँगली पर घुमाते हुए बड़े विश्वास के साथ अपने उपदेश कुछ इस तरह दे देते मानो वह बिन्दु अभी-अभी किसी फरिश्ते ने उनके कान में फूँका हो। अभी सलाम-दुआ और परिचय का सिलसिला चल ही रहा था कि उन्होंने अपनी तस्बीह को शहादत की ऊँगली से गति दी, हवा में कुछ देर उसे गोल चक्कर में घुमाते रहे और फिर कुछ तेज़ आवाज़ में कहने लगेः

जल्दी करो ऐ समय के इमाम! जल्दी करो ऐ आखिरी ज़माने के महदी!

उपस्थित जनों की ओर एक नज़र डाली और फ़रमाया : बस अब वह आने वाले हैं। किसी समय और किसी पल भी अचानक तुम उनके प्रकट होने की खबर सुनोगे। कहते हैं कि कुछ करामात वालों ने उन्हें देखा भी है और वह उनसे मिल भी चुके हैं। अधिक आशा है कि वह इस इस्ताम्बोल ही में हैं, उपयुक्त समय की प्रतीक्षा में, यहाँ तक कि सभी निशानियाँ प्रकट हो जाएँ।

हम जैसे नवागंतुक मेहमानों को शेख की बात कुछ समझ में आयी और कुछ नहीं समझ में आयी। हाँ, उनके शिष्यों के समूह की जबानों पर धीरे-धीरे गुणगान के विभिन्न शब्दों को दुहराने का सिलसिला जारी हो गया। कभी ऐसा महसूस हुआ जैसे यह सब

लोग अपने गुणगान और मुराकबा (ध्यान) के बल पर भविष्य के महदी को ढूँढ ही निकालेंगे। कुछ क्षणों के बाद धीरे-धीरे रहस्यमय गुणगान का ज़ोर थमा। और इस महफिल में सम्मिलित लोग सामान्य दैनिक जीवन की स्थिति में वापस आ गए।

शेख आइज़ को महदी की सोच में इतना डूबा हुआ देखकर मैंने सोचा कि क्यों न उनसे छिपे हुए महदी का अता-पता मालूम किया जाए। क्या पता वह उन गलियों और बाज़ारों से अवगत हों जहाँ भविष्य के महदी ने उपयुक्त समय की प्रतीक्षा में अपने प्रकटीकरण को रोके रखा है। खाने की मेज़ पर प्लेटें बदलती रहीं, वेटर बड़ी तेज़ी के साथ एक पकवान समाप्त होने पर दूसरा सजाते रहे। लेकिन मेरा मन इसी कुरेद में लगा रहा कि शेख आइज़ जो प्रतीक्षित महदी की कल्पना में इतने डूबे हुए, बल्कि लथपथ जीवन व्यतीत करते हैं, आखिर इसका कारण क्या है? सुबह-सायं बल्कि हर पल महदी के प्रकट होने की संभावनाओं और अंदेशे के साथ जीना क्या उनके हाँ किसी नज़र के धोखे के कारण है या सब कुछ उन परोक्ष इशारों का हिस्सा है जिनपर सूफी लोग और शीया, बल्कि खुश अकीदा मुसलमानों का एक अच्छा-खासा वर्ग बेसोचे समझे ईमान ले आया है।

खाने के बाद जब छात्रों के साथ बातचीत की बैठक आयोजित हुई तो मैंने बिस्मा से विशेष रूप से निवेदन किया कि यदि संभव हो तो शेख आइज़ को भी इस बैठक में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया जाए। वह एक जीवित लीजेण्ड (मिथक) हैं। उनकी मौजूदगी हमारे लिए स्पष्टीकरण का कारण बनेगी, और हो सकता है कि उनके माध्यम से हमें प्रतीक्षित महदी का पता लग जाए। अल्लाह की कृपा से शेख ने अपनी रज़ामंदी दे दी।

डाइनिंग हॉल से मिले कॉन्फ्रेन्स रूम का कमरा थोड़ा बड़ा और जगह सजी हुई थी। जहाँ बड़ी गोल मेज़ पर लगभग 30—35 माइक्रोफोन लगे थे। कमरे के चारो ओर दीवारों के सहारे विशेष आरामदायक सीटें लगी थीं। दीवार पर एक तरफ स्क्रीन लगी हुई थी। जिसपर प्रोजेक्टर जैसे यन्त्रों की सहायता से नयी तकनीक के शौकीन भाषण देने वाले भाषण दिया करते होंगे। इन गोल मेज़ों का एक सकारात्मक पक्ष यह है कि यहाँ बोलने और सुनने वाले लगभग एक ही सतह पर बात कर सकते हैं। अन्यथा पूरब की पुरोहितवादी परम्परा में, जहाँ प्रवचन करने वाला ऊँचे स्थान से सम्बोधित करता है और सुनने वालों के लिए चुपचाप मान लेने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रह जाता। विशेष रूप से तुर्की की जामा मस्जिदों में उपदेशक की ऊँचाई का एहसास कुछ अधिक तेजी के साथ होता है। शेख आइज़ के लिए भी यह शायद अपरिचित अनुभव था। उन्होंने प्रारम्भ में ही यह बात स्पष्ट कर दी कि आज वह कोई भाषण देने की बजाए अपने दिल का दर्द बयान करना चाहेंगे और उनकी इच्छा होगी कि वह इस दर्द को नयी पीढ़ी तक

पहुँचा सकें क्योंकि यह वह पूँजी है जो उन्होंने जीवन भर सँभाल-सँभाल कर रखा है, उसको सींचा है और अब उसे नयी पीढ़ी को देने का समय आ चुका है। फ़रमायाः

मेरे प्रिय बच्चों! आप पर अल्लाह की कृपा हो।

मैं आपके बीच सिन्जर नामक पहाड़ से एक सन्देश लेकर आया हूँ बल्कि उसे एक शुभ सूचना कह लीजिए। इससे पहले कि मेरी आँख बन्द हो जाए मैं चाहता हूँ कि यह सन्देश आप तक पहुँचा दूँ। संसार युगों-युगों की यात्रा के बाद अब अन्तिम चरण में प्रवेश कर चुका है। किसी पल उसके समापन की घोषणा होने वाली है। लेकिन इससे पहले कि ऐसा हो अल्लाह की योजना है कि उसके नामलेवा प्रभावी हों और दुनिया शान्ति और न्याय से भर जाए।

निशानियाँ प्रकट हो चुकी हैं! हम इमाम महदी के प्रकट होने की अन्तिम घड़ियों में हैं। न जाने कब, किस तरफ से उनके प्रकट होने की ख़बर आ जाए। ऐसा लगता है जैसे लगातार कोई मेरे दिल के अन्दर मुझसे कानाफूसी करता हो कि वह पल, मुबारक क्षण अब निकट बहुत निकट आ पहुँचा है।

प्यारे छात्रों और छात्राओं! मेरा सम्बन्ध सिन्जर पर्वत के उस वंशज से है जिसपर शैतान की उपासना का आरोप लगाया जाता है और शायद यह कुछ ग़लत भी नहीं। मैं यज़ीदी परिवार में पैदा हुआ जो अपने आप को सत्यनिष्ठ बताते हैं। मौलिक रूप से हम कुर्दों की नस्ल से हैं लेकिन धार्मिक रूप से हमारी पहचान एक अलग धार्मिक समूह के रूप में रही। मौसल से कोई 60 कि०मी० उत्तर-पूर्व में शेख अदी बिन मुसाफिर की कब्र को हमारी जियारतगाह (दर्शनस्थल) की हैसियत प्राप्त है जो संभवतः 12वीं सदी में कोई इस्माईली पंथ के प्रचारक हुआ करते थे। हमें यह बताया गया था कि अल्लाह ने दुनिया बनायी और उसकी व्यवस्था को चलाने के लिए फ़रिश्तों के हवाले कर दिया। मलक ताऊस जो उन फ़रिश्तों में सबसे बड़ा है, वही शैतान का रूप भी है। इसलिए उसकी नाराज़गी मोल लेना भी ठीक नहीं। हम एक ही साथ शैतान और रहमान दोनों की इबादत करते थे। और उन दोनों की प्रसन्नता को अपना उद्देश्य समझते थे कि बाबा शेख ने हमे यही बताया था। यहाँ तक कि शेख नूरसी की किताबों से मेरा परिचय हुआ। शेख नूरसी का रिसाल-ए नूर मेरे हाथ क्या लगा उसने मेरे दिल की दुनिया बदल डाली। शेख सईद नूरसी की किताबें ज्ञान एवं दर्शन का बहुमूल्य भंडार हैं। मैं जितना ही उसमें डूबता गया, मेरी आत्मा उभरती गयी। साफ-सुथरी और प्रकाशित होती गयी। आज उम्र के 63वें वर्ष में हूँ जो सुन्नत के अनुसार प्राकृतिक उम्र की पूर्णता का वर्ष है। मुझे ऐसा लगता है कि मेरे लिए इस दुनिया से जाने का समय आ पहुँचा। लेकिन एक काम अभी रह गया है और शायद इसीलिए अल्लाह ने दुनिया में मेरी मोहलत बढ़ा रखी है। मैं पिछले चालीस वर्षों से उस महान हस्ती की प्रतीक्षा में सोता-जागता रहा हूँ। हर पल उसके प्रकट होने की चाह से मेरी दुआएँ और विलाप भरे रहे हैं। शेख नूरसी ने लिखा है और

बहुत विस्तार से लिखा है कि अन्तिम ज़माने में जब सत्य पराजित हो जाएगा, अल्लाह तआला उसको प्रभावी बनाने के लिए अब्दुल कादिर जीलानी और शाह नक्शबन्दी के शिष्यों में से समय के महदी को प्रकट करेगा। सभी सैय्यद और पैग़म्बर का परिवार महदी के आस-पास एकत्र हो जायेंगे। नूरसी ने प्रतिष्ठित आयत قل لا أسئلكم عليه أجرا إلا المودةفى القربىٰ "कुल ला अस अलुकुम अलैहि अजरन इल्लल मुवद्दतन फिल कुरबा" की व्याख्या में स्पष्ट लिखा है कि अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की यह इच्छा कि उम्मत उनके घरवालों के आस-पास एकत्र हो, इस कारण है कि भविष्य में उम्मत के मार्गदर्शन का काम पैग़म्बर के घर में पैदा होने वाले और सैय्यदों से लिया जाना है।

मेरे प्रिय बच्चों! उम्मत में पुनर्जागरण और सुधार के जो आन्दोलन भी उठे। उन सबका नेतृत्व सादात ने किया। उनमें से कुछ ने महदी होने का दावा किया और कुछ को जनता ने उस पद का हकदार समझा। सैयद अहमद सनूसी (मृत्यु 1902) या सैय्यद इदरीस (मृत्यु 1950) सैय्यद यहया (मृत्यु 1948) यह सब सादात के परिवार से उठे थे और यही हालत सैय्यद अब्दुल क़ादिर जीलानी (मृत्यु 1168), सैय्यद अबुल हसन अश्शाज़ली (मृत्यु 1258) और सैय्यद अहमद अल बदवी (मृत्यु 1276) का है जो सैय्यद परिवार से परिस्थितियों को सुधारने के लिए उठे और जिनकी सेवाओं को दुनिया स्वीकार करती है।

बदीउज्जमा सईद नूरसी ने हमें यह भी सूचित किया है कि महदी मौलिक रूप से तीन काम करेगा। पहले तो वह भौतिकतावाद की बाढ़ पर बाँध बाँधेगा जिसके परिणामस्वरूप ईमान की फसल लहलहा उठेगी। दूसरे वह इस्लामी निशानियों को जीवित करेगा जिससे इस्लाम में फिर से जीवन की अनुभूति पैदा हो जायेंगी। तीसरे वह सभी मुसलमानों को और विशेष रूप से उलमा और सुधारकों और सादात को अपने झण्डे के नीचे एकत्र करेगा जिसके परिणामस्वरूप एक बार फिर दुनिया पर इस्लामी क़ानून का झण्डा लहरायेगा। आज भौतिकवादी विचारधारा, विशेष रूप से डार्विनवाद, फ्रॉयडवाद और पूँजीवाद के गुब्बारे से हवा निकल चुकी है। काफिरों की हैट और बेपर्दगी की जगह दाढ़ियों और स्कार्फ का चलन सामान्य होता जा रहा है। इस्लामी वित्त व्यवस्था, इस्लामी बैंकिग यहाँ तक कि दवा-इलाज की इस्लामी व्यवस्था को भी असाधारण लोकप्रियता प्राप्त हो रही है। शरीअत लागू करने और खिलाफत स्थापित करने की बातें भी दिलचस्पी के साथ की जा रही हैं। अब थोड़ी सी कसर रह गयी है जिसने महदी के प्रकट होने को रोक रखा है और वह है सामान्य मुसलमानों, उलमा और सुधारकों और विशेष रूप से सादात का एक केन्द्र एकत्र हो जाना। फिर उसके बाद महदी के प्रकट होने को कोई चीज़ रोक नहीं सकती। वह अवश्य आकर रहेंगे बल्कि कश्फ के ज्ञानी तो यहाँ तक कहते हैं कि वह आ चुके हैं, हमारे बीच मौजूद हैं, हमारी सड़कों और बाज़ारों में खुद चल-फिर

रहे हैं। बस इस बात की प्रतीक्षा है कि आखिरी कसर पूरी हो और वह हमें और अधिक प्रतीक्षा की परेशानी से मुक्ति दिलाएँ।

प्यारे नौजवानों! पता नहीं मुझे वह दिन देखने का सौभाग्य प्राप्त हो या न हो लेकिन जब तुम महदी का ज़माना पाओ तो उनके हाथों पर बैअत में देर न करना, उन्हें अपना हर संभव सहयोग देना, उनपर अपना जानमाल निछावर कर देना। اللہم عجل لولیک الفرج! اللہم انی أسئلک یا اللّٰہ یااللّٰہ یا اللّٰہ یا من لا یقھر---- अल्लाहुम्म अज्जिल लिवलीयेक अल-फरज! अल्लाहुम्मइन्नी असअलुक या अल्लाह, या अल्लाह, या अल्लाह या मन अलैहिम फ़कहर................. यह कहते हुए शेख आइज़ की आवाज़ रुँध गयी और वह फूट-फूट कर रोने लगे।

शेख आइज़ का हृदय स्पर्शी भाषण, उनका विलाप सभा पर एक तरह का सन्नाटा आच्छादित कर दिया। बात कहाँ से कहाँ जा पहुँची। एक तरफ शेख के पद और उनके बुढ़ापे का ध्यान और दूसरी ओर अन्धविश्वासपूर्ण महदी की तलाश, प्रत्यक्ष रूप से ऐसा लगा जैसे किसी गंभीर, बेलाग-लपट बौद्धिक वार्ता के लिए इस सभा में अब कोई अवसर नहीं रह गया था। लेकिन बिस्मा भी कब हार मानने वाली थी। उसने अपना माइक्रोफोन ऑन किया। सभा पर एक उचटती सी नज़र डाली और इस तरह बोलीः

दोस्तों! आज की यह अनौपचारिक सभा जिस व्यक्ति के सम्मान में आयोजित की गयी है। उसकी मौलिक उपलब्धि यह है कि उसने हमें मिथक और इतिहास को एक-दूसरे से अलग करने और उन्हें उसकी मूल हैसियत से बरतने का ढंग सिखाया है। मेरा तात्पर्य डा० शाज़ का व्यक्तित्व है जिनकी किताबों ने मुझे कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर ही उपलब्ध नहीं किए बल्कि नये प्रश्न करने का ढंग सिखाया। जहाँ तक मुझे याद आता है आपकी जो सबसे पहली किताब मेरे हाथ लगी वह फ्यूचर इस्लाम पत्रिका का एक सम्पादकीय यूरोपीय मुस्लिम पहचान के विषय से सम्बन्धित था। फिर तो मैंने तलाश-तलाश कर आपकी लिखी हुई चीज़ें पढ़ डालीं। यदि मैंने इन किताबों से कोई एक बात सीखी है तो वह यह है कि सर्वस्वीकृत चीज़ों को मात्र सर्वस्वीकृत घोषित कर दिए जाने के कारण बिना जाँच-पड़ताल और शोध के स्वीकार नहीं कर लेना चाहिए। शोध और विश्लेषण की कसौटी पर बुद्धि और वह्य सन्देश की रौशनी में प्रत्येक स्वीकृत धारणा, हर पल तर्क पर परखने योग्य है। इस विधि के अनुसार हमारी बौद्धिक और चिन्तन यात्रा हमें उन बहुत से भ्रमों और मिथकों से मुक्ति दिला सकती है जो समय के गुज़रने के साथ अक़ीदों और स्वीकार्य धारणाओं की हैसियत प्राप्त कर लेते हैं।

शेख आइज़ का मैं दिल से सम्मान करती हूँ। उन्होंने अपने एहसासों को पूरी तरह और बिना किसी संकोच के हमारे सामने रख दिया है। वह सच्चे दिल से यह समझते हैं, जैसा कि उनका व्यक्तिगत जीवन और ईशपरायणता इस पर दलील है कि उनके पास एक सन्देश है, प्रतीक्षित महदी के आगमन का सन्देश, जिसे आपने नयी पीढ़ी को

हस्तान्तरित कर दिया है। आपने जो साफ-साफ बाते कहीं हैं उसके लिए हम बहुत आभारी हैं। हाँ, हम जिन्हें शेख के कथनानुसार भविष्य के महदी का हाथ-पैर बनना है, जो सदियों से आकर नहीं देता और यदि आता भी है तो उसके जाने के बाद पता यह चलता है कि वह वास्तव में जिस महदी की ज़रूरत थी वह नहीं था। तो क्या यह उपयुक्त नहीं है कि हम इस सर्वस्वीकृत धारणा को बुद्धि और कुरआन की रौशनी में नये सिरे से शोध और जाँच-पड़ताल का विषय बनाएँ।

आपकी रुचि के लिए एक घटना का उल्लेख करूँ। सन् 2004 ई० में जब मैं आयरलैण्ड में अपनी पी.एच.डी. की थेसिस पर काम कर रही थी, बगदाद पर अमेरिकी और पश्चिमी देशों की सहयोगी सेनाओं का आक्रमण जारी था। सद्दाम हुसैन सत्ता से हटाए जा चुके थे। आपको याद होगा कि जब कुवैत की ओर से अमेरिकी टैंक इराक में प्रवेश कर रहे थे और मित्र राष्ट्रों की सेनाओं के युद्धक विमानों ने अन्धाधुध बमबारी का सिलसिला जारी कर रखा था। उसी दौरान समाचार पत्रों में एक मरुस्थलीय आँधी का बहुत उल्लेख पाया जाता था। जनता खुशफहमी में इस विचार की क़ैदी हो गयी थी कि यह मरुस्थलीय आँधी सद्दाम के दैवीय समर्थन की अभिव्यक्ति है लेकिन जल्द ही यह खुशफहमियाँ काफूर हो गयीं।

हाँ, तो मैं यह कह रही थी कि सन् 2004 ई० में सहयोगी सेनाओं का महदी आर्मी से सीधा टकराव हुआ। सन्देह था कि मुक्तदा अस्सद्र गिरफ़्तार हो जाएँ। इस दौरान आयरलैण्ड के एक शीया इस्लामी केन्द्र में मेरा अधिक आना-जाना था। बहुत से इराकी दोस्त थे जो फोन पर लगातार अपने रिश्तेदारों और सम्बन्धियों की ख़बरें मालूम करते रहते थे। इस दौरान जब एक दिन मैं केन्द्र में गयी तो मुझे यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि कुछ नौजवान लड़के-लड़कियाँ प्रतीक्षित महदी की सेवा में यह प्रार्थना पत्र लिख रहे हैं कि ऐ ज़माने वाले! सहयोगी सेनाएँ टूट पड़ी हैं। अल्लाह के लिए अब प्रकट होकर हम कमज़ोरों को ताकत प्रदान कीजिए!

يا على يا محمد اكفيانا فإنكما كافيان و انصرانا فإنكما ناصران يا مولانا يا
صاحب الزمان الغوث الغوث أدركنى أدركنى الساعة الساعة۔

मैंने पूछा यह क्या किस्सा है? मालूम हुआ कि यह वह प्रार्थना पत्र है जो प्रतीक्षित महदी को भेजा जाएगा। पता चला कि यहाँ आयरलैण्ड के इस्लामी केन्द्र में ही नहीं बल्कि बसरा और करबला में जहाँ मुसलमानों पर परिस्थितियाँ कठिन हैं और दुनिया के दूसरे क्षेत्रों में भी जहाँ मुसलमान परिस्थितियों की इस गंभीरता को महसूस कर रहे हैं, महदी के नाम प्रार्थना पत्र भेजने का सिलिसिला जारी है। ज़ाफरान (केसर) से पत्र लिखिए, सुगन्ध में उसे डुबाइए फिर आटे या पवित्र मिट्टी मे लपेटकर नदी नहर या गहरे कूँए में उसे सुबह-सवेरे डाल आइए। डालते हुए कहिए :

ऐ हुसैन बिन रौह! आप पर सलामती हो, आप अल्लाह के दरबार में जिन्दा हैं। आप हमारा यह पत्र उस हस्ती की सेवा में पहुँचा दीजिए जिसे यह पहुँचना है।

प्यारे दोस्तो! आपने नक्श और तावीज़ की किताबों में उस हरे पक्षी के बारे में पढ़ा होगा जिसके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि वह 40 दिनों तक लगातार आध्यात्मिक प्रक्रिया के बाद तड़के सवेरे से पहले नदी के किनारे प्रकट होता है। बड़े लोगों ने सफेदी निकलने का समय इसलिए निर्धारित किया है ताकि परेशान माँगने वाले को प्रत्येक पक्षी के रंग पर हरे रंग का धोखा हो। न वास्तविक हरा पक्षी आज तक निर्धारित समय पर नदी के किनारे आया है और न ही ज़माने के इमाम ने इन पत्रों को आज तक स्वीकार ही किया है। हम लोग जो वह्य सन्देश के वाहक हैं और जिनके पास वह्य की रौशनी और उसका मार्गदर्शन और प्रकाश पाया जाता है, क्या हमारे लिए यह उपयुक्त नहीं कि इन मिथकों की निष्पक्ष जाँच करें और यह देखें कि इसकी वास्तविकता क्या है, यह सब कुछ कब से चला आता है, इसकी रचना करने वाला और इसका बनाने वाला कौन है? मैं अधिक समय नहीं लूँगी और चाहूँगी कि इस विषय पर यदि संभव हो सके तो आज की सभा के सम्मानित अतिथि हमें अपने बहुमूल्य विचारों से लाभ उठाने का अवसर दें।

बिस्मा के उद्घाटन भाषण ने सभा से विलाप का रंग किसी हद तक तो मिटा दिया, हाँ मुसीबत यह हुई कि इस दौरान शेख आइज़ अपने शिष्यों के झुरमुट में कब विदा हो गए इसका किसी को अन्दाजा न हो सका। शैख, महदी को देखने की तलब में जिस तरह वर्षों से जीवन व्यतीत करते आए थे और जिस मनोदशा का शिकार थे, उसमें किसी वार्ता, विचार-विमर्श या पुनर्विचार की कोई गुजांइश मौजूद न थी। यदि कोई संभावना थी तो मरीचिका की और वह दिन-रात अपनी कल्पनाओं की आँख से इस्तम्बोल की गलियों में एक ऐसे महदी को चलते-फिरते देख रहे थे जो इतिहास के अन्तिम युग में प्रकट होने की अनुमति के लिए प्रतीक्षारत हो।

मैंने सोचा कि महदी तो हमारी मिथकीय चिन्तन शैली की मात्र एक निशानी है। यदि वार्ता केवल इसी विषय तक सीमित रही तो युवा विद्वानों की इस सभा से उपयुक्त लाभ उठाने की संभावना नहीं रहेगी। लेकिन दिल को पिघलाने वाली शेख आइज़ की वार्ता और बिस्मा की इस पर सटीक आलोचना ने कुछ ऐसी भूमिका तैयार कर दी थी कि इस विषय से दामन बचाना भी कठिन था। सोचा भाषण देने का अवसर नहीं और न मैं भाषण देने वाला आदमी हूँ। क्यों न अपना ध्यान कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों को संकलित करने और उठाने तक सीमित रखा जाए। इसलिए पहले तो मैंने यह स्पष्ट किया कि अल्लाह के अन्तिम सन्देश के वाहकों की हैसियत से हम सभी मुसलमान चाहे स्त्री हों या पुरुष, हमारी हैसियत अपने अस्तित्व में एक संभावित महदी की है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की अनुपस्थिति में अब अन्तिम क्षण तक संसार की क़ौमों के मार्गदर्शन का कर्त्तव्य हम कमज़ोर लोगों को सम्पन्न करना है। हमें इस कमजोर धारणा से बाहर

निकलना होगा कि अब दशा सुधारने के लिए आसमान से कोई मसीह उतरेगा या किसी पहाड़ के दामन से कोई महदी प्रकट होगा। दशा के सुधार के लिए महदी के प्रकट होने की तमन्ना और विलाप या नक्श और ताबीज़ की तैयारियाँ या सुबह के समय हरे पक्षी के आगमन जैसा कोई भी व्यवहार प्रभावी न होगा। अब यह काम हम सभी मुहम्मद (सल्ल०) के अनुयायियों को सम्पन्न करना है।

प्यारे नौजवानों! जो लोग यह समझते हैं कि महदी पैग़म्बर की सन्तान में से होगा जिसके आस-पास सादात और उम्मत के सुधारक एकत्र हो जायेंगे। वह इस बिन्दु को कैसे भुला देते हैं कि आज इस पृथ्वी पर अल्लाह के पैग़म्बर की कोई सन्तान मौजूद नहीं है। कुरआन मजीद ما كان محمدابا أحدمن رجالكم (मुहम्मद तुम्हारे पुरुषों में से किसी के बाप नहीं थे) का गगनभेदी घोषणा करता है। इस्लामी इतिहास में इससे बड़ी धाँधली संभवतः और कोई न हुई हो जब अल्लाह के पैग़म्बर के अवरुद्ध नस्लीय सिलसिले को, जिसपर कुरआन मजीद की स्पष्ट गवाही मौजूद हो, पुत्र सन्तान के मौजूद न होने के बावजूद बेटी की सन्तान से यह सिलसिला जारी समझा गया हो, और फिर विचित्र बात यह है फातिमा (रज़ि०) के बाद फिर ये सारे नस्ली सिलसिले हसन और हुसैन और उनकी नर संतान से जारी समझे जाते हैं। हज़रत अली की व्यक्तिगत शान अपनी जगह, और फ़ातिमा (रज़ि०) के सौभाग्यवान बेटों हसन और हुसैन के स्थान और प्रशंसा से भी इन्कार नहीं, लेकिन इन दोनों को अल्लाह के पैग़म्बर की सन्तान घोषित कर देना बुद्धि और वह्य सन्देश दोनों का इन्कार है। मुहम्मद (सल्ल०) की सन्तान के अर्थ में जब सैय्यद इस दुनिया में मौजूद ही नही ंतो फिर उनके परिवार से महदी का प्रकट होना या सादात के नेतृत्व में ईमानवालों के अन्तिम युद्ध की बातें मात्र एक निराधार अफसाना है। महदी का मिथक हो या पैग़म्बर (सल्ल०) की सन्तान की प्रतिष्ठा का किस्सा, जिसने उम्मत को सदियों से एक निरर्थक प्रतीक्षा में लिप्त कर रखा है, वास्तव में तीसरी-चौथी सदी हि० के राजनीतिक संकट द्वारा पैदा हुआ है। लम्बी वार्ता का अवसर नहीं, आप सब लोग विद्वान और शोधकर्त्ता हैं। यदि उस ज़माने में अब्बासी और फातिमी ख़िलाफतों की आपसी प्रतिद्वन्दिता और उसके नतीजे में रचित साहित्य पर आपकी दृष्टि हो तो आप इस बिन्दु को आसानी से समझ सकते हैं कि ये समस्याएँ धर्म और विश्वास से कहीं अधिक राजनैतिक प्रचार पर आधारित हैं। मुसीबत यह हुई कि तीसरी और चौथी सदी में प्रशंसा और प्रचार की परम्पराएँ बवैह वंश, फातिमी ख़िलाफत और अब्बासी उलमा की किताबों में रची गईं। वैकल्पिक ख़िलाफतें तो समाप्त हो गयीं लेकिन दुर्भाग्य से उनके द्वारा तैयार किए हुए परस्पर विरोधी साहित्य और परम्पराओं के संग्रह शेष रह गए। आने वालों ने केवल यह देखा कि कुलैनी ने इस तरह लिखा है और शेख मुफीद ने इस तरह उल्लेख किया है, हदीस की 6 किताबों के लेखकों का विचार यह है या तूसी और इब्ने बाववेह इस विचार के मानने वाले हैं। समय गुज़रने के साथ

इतिहास और विरासत के इन परस्पर विरोधी और कभी-कभी भ्रामक बयानों को पवित्रता की हैसियत प्राप्त होती गयी। फिर बाद में आने वालों के लिए यह संभव न रहा कि वह इस द्वेषपूर्ण राजनैतिक प्रचार से हटकर इस्लाम के उस सन्देश को आकार दे पाते जो ईमानवालों को किसी निरर्थक प्रतीक्षा में समय नष्ट करने की बजाए संघर्ष और कर्म पर आमादा करता है। आज जब लगभग 1000 वर्ष बीतने के बाद मिथकों की धुंध अच्छी-खासी मोटी हो गयी है, सामान्य लोगों के लिए इन भ्रमों को पार करना कोई आसान काम नहीं। लेकिन मैं निराश नहीं हूँ। अल्लाह की भेजी हुई वह्य का विशुद्ध दस्तावेज अपनी सम्पूर्ण शान के साथ आज हमारे बीच मौजूद है। बस आवश्यकता इसे नये सिरे से खोलने की है। ज़रा विचार कीजिए जिस महदी के नेतृत्व में अन्तिम टकराव के लिए गिरोहबन्दी होनी है और जिस मसीह का पुनः आगमन हमारे मिल्ली पुनर्जागरण का कारण बनने वाला है। उसके उल्लेख से, इतनी बड़ी और महत्वपूर्ण सूचना के उल्लेख से क़ुरआन के पन्ने क्यों खाली  हैं? इस बात पर मत जाइए कि अमुक कश्फ के विद्वान ने क्या कहा है या अमुक रिवायत करने वाले ने इस तरह रिवायत की है। बल्कि यह देखिए कि अल्लाह की किताब आपसे क्या कहती है?

मेरी वार्ता यद्यपि संक्षिप्त थी लेकिन इस थोड़े से समय में भी पीछे की पंक्ति में बैठे हुए कुछ नौजवानों के हाथ लगातार उठते रहे। संभवतः वह कुछ कहना चाहते हों या उनमें अपने दृष्टिकोण के विरुद्ध कुछ सुनने की ताकत न थी। यह पाँच-छह नौजवान थे जिन्होंने अपनी गर्दनों में फिलीस्तीनी शैली का काला और सफेद रूमाल लपेट रखा था और संभवतः ये लोग शेख आइज़ के क़ाफिले के साथ मौसल से आए थे। एक दुबला-पतला नौजवान, जिसकी ज़ुल्फें कंधों तक आ रही थीं, ने प्रश्न करने की अनुमति चाही। कहने लगा कि अल्लामा सईद नूरसी ने मुहम्मद (सल्ल०) की सन्तान की वैधता पर एक हदीस बयान की है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, ऐ अली! प्रत्येक पैग़म्बर की अपनी सन्तान थी। हाँ मेरी सन्तान तुममें से होगी। इस सम्बन्ध में आप क्या कहते हैं ।

नौजवान कुछ उग्र और भावुक सा हो रहा था। मैंने कहा, मेरे भाई शेख नूरसी का सम्मान अपनी जगह लेकिन मैं इसके अतिरिक्त और क्या कह सकता हूँ कि यह रिवायत बुद्धि और वह्य दोनों के विरुद्ध है। इस तरह की रिवायतें या कविताएँ जैसे इस्माईलीयों का यह गानाः

لی خمسۃ أطفیء بہا حر الوباء الحاطمۃ
المصطفیٰ و المرتضیٰ و أبناھما و الفاطمۃ

जो हसन और हुसैन को अल्लाह के पैग़म्बर और हज़रत अली की साझा सन्तान बताते हैं, वास्तव में श्रद्धा और अतिशयोक्ति के पर्दे में पैग़म्बर की पवित्र हस्ती पर आरोप और बोहतान बाँधते हैं।

आज भी मुहम्मद (सल्ल०) की सन्तान की धारणा पर इस उम्मत में गहरे मतभेद चले आ रहे हैं। कुछ लोग पंजतन तक मुहम्मद (सल्ल०) की सन्तान को सीमित रखते हैं, कुछ लोग 12 इमामों तक, 7 इमामों या इस्माईलीयों की तरह वर्तमान इमाम को इस शृंखला में सम्मिलित समझते हैं। कुछ के विचार में हसनी, हुसैनी सैय्यदों के सभी सिलसिले मुहम्मद (सल्ल०) की सन्तान में सम्मिलित हैं और हमारे दुरूद और सलाम की बरकतों से लाभांवित हो रहे हैं और कुछ लोगों के विचार में किसा वाली हदीस के माध्यम से हज़रत अब्बास की सन्तान भी इस सम्मान में साझीदार है जिनके बारे में यदि रिवायतों पर विश्वास करें तो अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने स्वयं यह दुआ की है कि

اللہم اغفر للعباس و ولدہ مغفرۃ ظاہرۃ و باطنۃ لا تغادر ذنبا۔

और यह कि उनमें खिलाफ़त को सदैव जारी रख واجعل الخلافۃ فیہم अब इतिहास ने इस बात पर फैसला कर दिया है कि अब्बासी वंश में खिलाफ़त के रहने की पैग़म्बराना दुआ एक गढ़ी हुई कहानी थी। अन्यथा उनकी ख़िलाफत इस रिवायत के अनुसार मसीह के प्रकट होने तक जारी रहनी चाहिए थी। जिस तरह अब्बासी वंश की खिलाफत के दावे की हकीकत एक राजनैतिक प्रचार से अधिक कुछ न थी। इसी तरह फातिमी और अब्बासी ख़लीफाओं का मुहम्मद (सल्ल०) की सन्तान में से होने का दावा اعطاء آل محمد قهم الرضا من آل محمد के नारे राजनैतिक प्रचार की पैदावार थे। पैग़म्बर की सन्तान होने का यह सारा कारोबार जिसने आगे चलकर उम्मत की वैचारिक स्वतन्त्रता छीन ली, वास्तव में तीसरी-चौथी सदी की राजनैतिक प्रतिद्वन्दिता और लड़ाइयों की पैदावार है। क़ुरआन मजीद को अपनी खुली आँखों से पढ़िए। यहाँ न केवल अल्लाह के पैग़म्बर के नस्लीय सिलसिले के कट जाने की घोषणा है बल्कि बार-बार विभिन्न शैलियों में यह बात समझाई गई है कि क़ुरआन जिस समाज की स्थापना का आह्वान करता है, वहाँ इन्सानों की वरीयता और गर्व का आधार केवल और केवल तकवा अर्थात अल्लाह द्वारा बतायी हुई बुराईयों से बचना है। إن أكرمكم عند اللّٰہ أتقاكمईमान वालों से माँग की गयी है कि वह पूरी तरह मुस्लिम (आज्ञाकारी) बनें, ऐसे अल्लाह वाले बनें जिनकी पहचान केवल और केवल अल्लाह का रंग हो ।

विद्वान लेखक! यद्यपि आपकी बात दिल को छूती है लेकिन इतनी आसानी से गले से नीचे उतरने वाली नहीं। एक तुर्क महिला ने जो अब तक बड़े धैर्य से इस वार्ता को सुन रही थी, ने थोड़ा विद्वानों की शैली में हस्तक्षेप किया। कहने लगीं यदि आपकी ये बातें मान ली जाएँ तो सन्देह है कि प्रचलित इस्लाम का भवन ही धराशायी हो जाए। मैं तो जुमे की नमाज़ में जब भी जाती हूँ। मस्जिद के इमाम के मुँह से पैग़म्बर (सल्ल०) की पवित्र सन्तान की श्रेष्ठता में इमाम को प्रशंसा करते हुए पाती हूँ। हमें तो बचपन से यह बताया गया है कि सन्मार्ग पर चलने वाले ख़लीफा चार हैं और उनके अतिरिक्त अन्य

छह लोग जन्नत की शुभ सूचना पाने वालों में सम्मिलित हैं। हज़रत हम्जा जन्नत के शहीदों के सरदार हैं। हसन और हुसैन को जन्नत के नौजवानों की सरदारी प्राप्त है और हज़रत फातिमा को जन्नत की महिलाओं का नेतृत्व प्रदान किया गया है। अब यदि आप वंश की धारणा को रद्द कर दें या धराशायी कर दें तो हमारा सारा ख़ुत्बा निरर्थक हो जाएगा। क्या आप नहीं समझते कि आप ऐसा करके एक बड़े वैचारिक संकट को निमन्त्रण दे रहे हैं ?

तुर्क महिला तो अपना संक्षिप्त प्रश्न करके बैठ गयीं लेकिन उनकी बात ने बड़ी समस्याएँ खड़ी कर दीं। जुमा के हनफी ख़ुत्बे! विशेष रूप से दूसरे ख़ुत्बे में जो एक दृष्टि से सुन्नियों के विश्वासों का प्रामाणिक उद्घोष समझा जाता है, क्या नये सिरे से इसकी पड़ताल करने की आवश्यकता है? यह विषय विस्तृत वार्ता चाहता था जिसका यहाँ समय न था। इसलिए मैंने मात्र यह कहने को काफी समझा कि जुमा के ये तुकबन्दी वाले ख़ुत्बे जिन्हें इब्ने नबाता जैसे कलाकारों ने चौथी सदी हि० में संकलित किया और जिसने आगे चलकर ग़ैर अरब देशों में तुकबन्दीवाले लिखे हुए ख़ुत्बों (सम्बोधनों) की परम्परा स्थापित की, विकास के विभिन्न युगों से गुजरे हैं। हज़रत मुआविया के ज़माने तक बल्कि उमैय्या सल्तनत के किसी काल में भी चार ख़लीफा का उल्लेख ख़ुत्बों में नहीं होता था। इतिहासकारों ने लिखा है कि हज़रत मुआविया के शासनकाल में अबू बक्र (रज़ि०), उमर (रज़ि०) और उस्मान (रज़ि०) के उल्लेख पर सम्बोधन समाप्त हो जाता था। लोग यह समझते थे कि हज़रत अली (रज़ि०) की ख़िलाफत चूँकि पूरी तरह स्थापित न हो पायी थी और उनके नाम पर उम्मत में मतैक्य स्थापित न हुआ था इसलिए उनका नाम सर्वसम्मत ख़लीफा की सूची में सम्मिलित नहीं किया जा सकता। मुतवक्किल के शासनकाल में पहली बार इब्ने हम्बल के इशारे पर हज़रत अली (रज़ि०) को चौथे मार्गदर्शन प्राप्त ख़लीफा की हैसियत से सम्बोधन (ख़ुत्बे) का अंग बनाया गया। रहा पैग़म्बर की सन्तान की प्रशंसा की रिवायतों का ख़ुत्बे में सम्मिलित होने का मामला तो यह फातिमी और अब्बासी प्रतिद्वन्द्विताओं के परिणामस्वरूप संभव हो सका। दोनों ही मौलिक रूप से शीया आन्दोलन थे जो पैग़म्बर (सल्ल०) की निकटता के आधार पर ख़िलाफत के पद के इच्छुक थे। प्रशंसा की वह रिवायतें जिनका हम सुन्नी ख़ुत्बों में अधिकता से उल्लेख सुनते हैं जो बार-बार सुनने के कारण हमारे अन्तकरण का अंग बन गई हैं, क़ुरआन के मौलिक सन्देश से टकराते हैं और इसीलिए उनकी हैसियत अल्लाह के पैग़म्बर की हदीसों की नहीं बल्कि आप (सल्ल०) के ऊपर झूठ मढ़ने की है।

हमारी बातचीत काफी गंभीर दिशा ले चुकी थी और वह भी उन संवेदनशील विषयों पर जहाँ लोग लम्बे समय से कुछ विचारों को अक़ीदे की तरह सीने से लगाये बैठे हों। इनपर एक के बाद एक प्रश्न उठाना कुछ लोगों के लिए असहनीय हो सकता था। बिस्मा ने उपस्थित लोगों का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित किया कि आज की यह सभा

महदी के प्रश्न  का उत्तर पाने के लिए नहीं आयोजित की गयी है। यदि हम एक ही प्रश्न और उसकी विस्तृत बातों में उलझते गए तो सन्देह है कि समग्र वार्ता की संभावना नहीं रह जायेगी और हम विद्वान मेहमान से मनचाहा लाभ प्राप्त न कर सकेंगे। लेकिन इन चेतावनियों का कुछ अधिक प्रभाव न पड़ा। एक तुर्क नौजवान जिसकी उम्र लगभग 20—22 वर्ष होगी, कहने लगा कि क्षमा कीजिएगा मैं पहले ही से एक मानसिक उलझन में व्यस्त था अब आपकी वार्ता सुनकर तो ऐसा लगता है जैसे मेरे कदमों के नीचे से ज़मीन ही खिसक गई हो। यहाँ इस्ताम्बोल में एक साहब हैं जो विशेष रूप से नौजवान लड़के-लड़कियों में काफी लोकप्रिय हैं, उनके शिष्यों की एक बड़ी संख्या खामोश रहते हुए यह समझती है कि संभवतः वही भविष्य के महदी हों। कुछ नौजवान विशेष रूप से संभ्रान्त घरानों की लड़कियाँ जो उनके शिष्यों में सम्मिलित हैं, इस एहसास के साथ जीती हैं कि हम आखिरी घड़ी में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। जहाँ किसी भी पल महदी प्रकट हो सकते हैं और हो सकता है कि हमारे शेख और हमारे मास्टर जिन्हें अल्लाह ने महदी के आगमन की शुभ सूचना देने पर नियुक्त किया है और जो नस्ल के आधार पर सैय्यद भी हैं, वह स्वयं ही भविष्य के महदी हों। उन्होंने स्वयं इस बात का दावा तो नहीं किया है, लेकिन वह यह अवश्य कहते हैं कि सईद नूरसी, जिनको हमारे यहाँ बहुत सम्मान से देखा जाता है, वह महदी नहीं थे क्योंकि स्वयं नूरसी के अनुसार वह तीन काम जो महदी को सम्पन्न करने हैं, वह उनके हाथों सम्पन्न नहीं हो सके। नूरसी की पहली शर्त कि महदी भौतिकतावाद पर विजय प्राप्त करेगा, उनके हाथों पूरी नहीं हुई बल्कि डार्विनवाद के किले को ध्वस्त करने का काम तो वास्तव में उन्होंने कर दिया। रही इस्लामी दुनिया की एकता और उसके पुनर्जागरण का काम और अन्ततः शरीअत का क़ानून लागू करने और उसके प्रभुत्व का मामला तो यह काम भी टर्किस इस्लामी यूनियन के आह्वान के माध्यम से वही कर रहे हैं। मेरी परेशानी यह है कि मैं कुछ वर्ष पहले क़ादरी सिलसिले में बैअत हुआ हूँ, बाप-दादा की ओर से मेरा मसलक हनफी है, अब तक तो इसी प्रश्न में फँसा हुआ था कि अब्दुल कादिर जीलानी की बैअत के बाद जो मसलक के अनुसार हम्बली थे, मेरे लिए हनफी मसलक पर चलते रहना वैध है अथवा नहीं? क्या मैं अपने आध्यात्मिक शेख के अतिरिक्त फ़िक़्ह की समस्याओं में किसी दूसरे मसलक को अपना सकता हूँ, विशेष रूप से जब महदी के आगमन का ज़माना निकट हो? क्या शेख अब्दुल कादिर जीलानी और इमाम अबू हनीफा के खेमों से एक साथ जुड़े रहना शरीअत के अनुसार वैध है और फिर इन जुड़ावों की मौजदगी में नये महदी से बैअत की हैसियत क्या होगी? क्या उनके आगमन पर हनफी, कादरी या उन जैसे अन्य तकलीद (अनुपालन) के केन्द्र अपनी वैधता खो देंगे? अब चूँकि आपने सैय्यदों की वैधता पर ही प्रश्नचिन्ह लगा दिया है तो चिन्तन का मेरा पुराना ढाँचा ही ध्वस्त हो गया। लेकिन मैं नहीं समझता कि इतने सारे लोग जो नक्शबन्दी कादरी सिलसिले में बैअत हैं या जो

महदी के प्रकट होने की रिवायतों पर विश्वास रखते हैं। वह सब एक साथ ग़लत हो सकते हैं। यह कहकर वह नौजवान अपनी सीट पर जा बैठा। एक अन्य छात्र ने अपने ज्ञान के भंडार से यह हदीस प्रस्तुत की कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया है कि जिसने महदी के प्रकट होने से इन्कार किया उसने उन सभी बातों का इन्कार किया जो मुझपर अवतरित हुई हैं अर्थात वह काफिर हो गया। आप इस हदीस के बारे में क्या कहते हैं? क्या महदी को इन्कार करने के बाद क्या अब आपकी गिनती काफिरों में नहीं होगी? उसकी बात कुछ आक्रामक थी। कुछ व्यवस्थाओं की पेशानियों पर शिकन पड़ गई लेकिन बिस्मा ने पहले की तरह इस प्रश्न को भी एक आकर्षक मुस्कुराहट के साथ स्वीकार किया। कहने लगी प्रश्न बहुत हैं और समय कम। क्या यह उपयुक्त न होगा कि इस सम्बन्ध में यदि किसी और को भी कुछ कहना हो तो वह कह ले ताकि विद्वान मेहमान कम से कम संक्षेप में उन सभी प्रश्नों का उत्तर दे सकें।

जी हाँ, मुझे महदी की लम्बी उम्र के बारे में पूछना है। कहा जाता है कि वह 1200 साल से कहीं भूमिगत हैं। तो क्या वह हमारी तरह खाते-पीते और जीवित मनुष्य की तरह रहते हैं या उनपर कहफ वालों की तरह नींद डाल दी गयी है। क़ुरआन और हदीस की रौशनी में बताएँ कि वास्तविकता क्या है ?

यह तो आप उनसे पूछिए जिन्होंने अपने अकीदों के अन्दर एक काल्पनिक महदी को पिछले 1200 वर्षों से बसा रखा है। और जिसकी प्रतीक्षा में उनके दिन-रात व्यतीत होते और जिनके प्रकट होने की दुआ को वह अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझते हैं। हाँ मैं एक बात अवश्य कहना चाहूँगा कि महदी के मामले में इस्लामी इतिहास में कभी भी कोई सर्वसम्मत दृष्टिकोण नहीं पाया गया है। उलमा के एक उल्लेखनीय वर्ग ने सदैव उन रिवायतों के निराधार होने की घोषणा की है। रही यह बात कि महदी की रिवायतों का इन्कार करने से ईमान जाता रहता है तो ऐसा कहना एक बहुत बड़ा दुस्साहस है। यदि यह इतनी ही महत्वपूर्ण बात होती तो क़ुरआन हमें महदी के सम्बन्ध में अवश्य सूचित करता। अब मैं कुछ वाक्य उन नौजवानों के सम्बन्ध में भी कह दूँ जो अब्दुल कादिर जीलानी अल हम्बली के सिलसिले से बैअत के बाद हनफी मसलक पर कायम रहने में कठिनाई महसूस करते हैं। सबसे पहली बात तो यह समझ लीजिए कि यह बैअत वैअत का सिलसिला पीरी मुरीदी की जंजीरें, यह वह बातें हैं जिनका इस्लाम धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं। यह बाद के लोगों की उत्पत्ति और अन्वेषण हैं।

मेरे भाई यह आपसे किसने कहा कि आप कादरिया सिलसिले में बैअत हो जाएँ या अबू हनीफा (रह०) के अनुसरण को ईमान के लिए अनिवार्य समझें? और इस बैअत से क्या प्राप्त होने वाला है? अब्दुल कादिर और अबू हनीफा तो हमारी और आपकी तरह सामान्य मनुष्य थे। न उन लोगों को पैग़म्बरी मिली, न ही उन्हें सहाबा के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। और न ही उनसे बैअत और उनके अनुसरण का हमें आदेश दिया

गया। इस्लाम तो इन जैसी सभी बैअतों का अन्त करने के लिए आया है। वह चाहता है कि बन्दे का सम्बन्ध सीधे अल्लाह से जोड़ दे। आपकों मालूम होना चाहिए कि हम सभी मुसलमानों ने अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) से बैअत कर रखी है, हममें से प्रत्येक व्यक्ति अन्तिम वह्य के वाहक होने का सौभाग्य रखता है। और जिसके हाथों में वह्य का प्रकाश थमा दिया गया है उसे यह कब शोभा देता है कि वह क़ुरआन मजीद और पैग़म्बर (सल्ल०) की हस्ती के अतिरिक्त किसी और की ओर देखे। हमारे लिए तो अल्लाह की किताब और पैग़म्बर (सल्ल०) का आदर्श ही पर्याप्त है। यदि हमने उसे थाम लिया तो हमें बहुत सी वैचारिक भ्रमों और व्यावहारिक खुराफ़ात से मुक्ति मिल जाएगी।

मेरा भाषण तो समाप्त हो गया लेकिन सभा में उपस्थित लोगों के चेहरों पर बैचेनी और जिज्ञासा की निशानियाँ उसी तरह शेष थीं। वह चाहते थे कि यह सिलसिला जारी रहे लेकिन मुस्तफा ऊग्लू के बार-बार हस्तक्षेप करने के कारण बिस्मा को सभा के समापन की घोषणा करनी पड़ी। कहने लगीं सभा में उपस्थित लोगों! जी तो चाहता था कि यह सिलसिला चलता रहे। मेरी सहेलियों के तो सभी प्रश्न धरे के धरे रह गए। लेकिन इस बात से खुशी हुई कि इस बरकत में सभी लोग भागीदार हुए और हाँ अन्तिम चेतावनी के रूप में एक बात कहती चलूँ कि विचार-विमर्श की इस विधि को जारी रखियेगा। प्रश्न पैदा कीजिए और उसका उत्तर तलाश कीजिए और इस तलाश और छानबीन में प्रत्येक विद्वान से मदद लीजिए। यदि हमने इस प्रक्रिया को जारी रखा तो विश्वास कीजिए हम उपयुक्त दिशा में आगे बढ़ेंगे। यह सभी ग़ैर क़ुरआनी हवाले जो हमने स्वयं अपने हाथों से तराश लिए हैं, अपनी विश्वसनीयता खो देंगे। केवल अल्लाह की किताब और उसके पैग़म्बर (सल्ल०) का आदर्श शेष रह जाएगा ।

मैं स्वयं एक सुन्नी हनफी परिवार में पैदा हुई। क़ुरआन से सम्बन्धित अध्ययन मेरे शोध का विषय था। लेकिन ऐसा लगता था जैसे मैं इस अन्तहीन किताब को खोलते हुए डरती थी कि कहीं मेरा दिल और दिमाग क़ुरआन मजीद में वह अर्थ और भाव न देख ले जो पूर्वज विद्वानों के दृष्टिकोण से मेल न खाता हो। अतः मैं किताब खोलती कम और बन्द अधिक करती रही। फिर एक दिन जब मैं क़ुरआन मजीद की तिलावत कर रही थी। मुझे ऐसा लगा जैसे अल्लाह मुझे सीधे सम्बोधित कर रहा हो।

إِنَّمااشکوا بثی وحزنی ا لیٰ اللّٰہ

(इन्नमा अशकू बि शैइन व हुज़्नी इलल्लाह) पर जब मैं पहुँची तो रो पड़ी, फिर ऐसा लगा जैसे हज़रत याक़ूब (अलै०) की तरह अल्लाह ने मेरे दिल पर भी सन्तुष्टि अवतरित कर दी है। मैं उन दिनों कुछ व्यक्तिगत किस्म की समस्याओं से परेशान थी। अब जो मैंने क़ुरआन मजीद को अपनी आन्तरिक प्रवृत्ति और ध्यान के साथ पढ़ना आरम्भ किया तो मेरा सामना एक नये अनुभव से हुआ। वह दिन है और आज का दिन, मैं मअरफत (समझ) और सुलूक (अल्लाह की प्राप्ति) के किसी पद पर आसीन तो नहीं

हुई और न ही मुझे शेख होने का दावा है। लेकिन हाँ फिर इसके बाद मुझे किसी शेख का दामन थामने की आवश्यकता न रही। मैं स्वयं ही अपनी शेख हूँ और स्वयं ही अपनी मौलवी। बल्कि मुझे अब इस बात को कहने में भी कोई संकोच नहीं कि जब मैंने और अधिक चिन्तन किया तो मेरा हनफी होना एक अनावश्यक नाम मालूम हुआ, मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मूर्ति हो जिसकी बे सोचे-समझे पूजा में बहुत से नादानों की तरह मैं भी लिप्त हूँ। मैं अक्सर सोचती अल्लाह ने मुझे क़ुरआन का ज्ञान दिया, उच्च शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्रदान किया। फिर मुझे यह कैसे शोभा देता है कि क़ुरआन की मौजूदगी में मैं मार्गदर्शन के लिए अपने ही जैसे किसी इन्सान की ओर देखूँ। मैंने अपनी अन्तरात्मा में सम्प्रदायवाद के इस बुत को तोड़ डाला।

मैं एक सुन्नी घराने में पैदा हुई लेकिन जब यह पता चला कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की हस्ती शीया-सुन्नी के नाम के उल्लेख से परे थी, आप (सल्ल०) न शीया थे, न सुन्नी, यह झगड़े बाद की पैदावार हैं तो मैंने अपने आप से पूछा कि आपसी द्वेष के जिस दौर में मैं मौजूद ही न थी और जिस झगड़े से अल्लाह ने मुझे बचाए रखा, उसमें अपने को सम्मिलित करना या किसी एक सम्प्रदाय से अपना सम्बन्ध बताना कुछ लाभदायक काम नहीं हो सकता। जब अल्लाह को हमारा शीया या सुन्नी होना वांछित नहीं बल्कि वह हमें पालनहार का उपासक बनाना चाहता है और चाहता है कि हम अल्लाह के रंग में रंग जाएँ, हमारी पहचान केवल और केवल मुसलमान की हो هو سماكم المسلمين हुव सम्माकुम अल-मुस्लिमीन(उसी ने तुम्हारा नाम मुस्लिम रखा है) तो मैंने अपने सुन्नीपन को भी त्याग दिया। यद्यपि यह ज्ञान और चिन्तन की यात्रा मेरे लिए कुछ सरल न थी लेकिन आज मैं यह समझती हूँ कि इस यात्रा के बिना हम न ही सीसा पिलाई हुई दीवार में परिवर्तित हो सकते हैं और न ही वह्य का अन्तहीन प्रकाश हमारा मार्गदर्शन कर सकता है। अल्लाह हमारे मेहमान पर अपनी दया जारी रखे कि उन्होंने हम जैसे बहुत से लोगों के अन्दर शिष्य जैसे विश्वास को सिंचित किया है जिसका एक नुकसान यह तो है कि मनुष्य कभी अल्लामा या शेख नहीं बनता, सदैव छात्र बना रहता है। लेकिन जो लोग ज्ञानार्जन के स्वाद से परिचित हैं वह निश्चित रूप से शैखुल इस्लाम बनने के बजाए छात्र बने रहने को वरीयता देंगे। आज की सभा यद्यपि सम्पन्न होने को है लेकिन प्रश्नों के तारतम्य को जारी रहना चाहिए।

# 9
# कातिल नग़मे
# ''लुभावनें गीत''

कार्यक्रम के समापन पर गर्मजोशी के साथ लोगों के आपस में हाथ मिलाने और जज़ाकल्लाह, माशाअल्लाह की गूँज में फिर मिलने के वादे और प्रण का सिलसिला कुछ कम हुआ तो मैंने बिस्मा, नहला और उनकी सहेलियों का आभार प्रकट किया। बाहर निकले तो देखा कि मुस्तफा ऊग्लू अपनी गाड़ी निकाल लाए हैं जहाँ पहले से ही पिछली सीट पर दो लोग विराजमान हैं। पता चला कि उनमें से एक का नाम शेख मुहम्मद कामिल है जो पूर्वजों के तरीक़ (सलफ़ के आदर्श) से जुड़े बोस्निया की एक मस्जिद में इमामत का कर्त्तव्य पूरा करते हैं। यहाँ प्रचार और पर्यटन के लिए कुवैत के एक धार्मिक समूह के साथ आए थे और आज रात वापसी का इरादा रखते हैं। दूसरे साहब गुल मुहम्मद जर्मनी के शहर म्यूनिख में कालीन का कारोबार करते हैं।

इतिहास अध्ययन केन्द्र की हरियाली से निकलकर अब हम लोग एक बार फिर सुल्तान फातेह पुल की ओर चले। यहीं बायी ओर थोड़ा दूर इस्ताम्बोल की अनातुलियायी भाग में हैदर पाशा रेलवे स्टेशन स्थित है। मुस्तफा ऊग्लू ने पुल की ऊँचाई से एशियाई तट की ओर इशारा किया। यही वह रेलवे स्टेशन है जहाँ से तुर्क ख़िलाफत के ज़माने में लोग हिजाज़ (सऊदी अरब का एक राज्य) और दमिश्क (सीरिया की राजधानी) जाया करते थे। सुना है कि अब एक बार फिर सऊदी अरब में मोनो रेल चलाने की बातें हो रही हैं।

जी हाँ जिन लोगों ने हिजाज़ रेलवे की पटरियाँ उखाड़ीं, उन्हें बारूदी धमाकों से नष्ट किया, उन्हें संभवतः इस बात का एहसास हो चला है कि आवागमन की इन सुविधाओं ने इस्लामी दुनिया के एक क्षेत्र को और एक मुसलमान को दूसरे मुसलमान से किस तरह जोड़ रखा था। गुल मुहम्मद ने बातचीत को आगे बढ़ाते हुए कहा।

ट्रेन की यात्रा की बात ही और है। ट्रेन में केवल आप यात्रा ही नहीं करते। बल्कि आपके साथ एक सभ्यता यात्रा करती है, आगे बढ़ती है, बात से बात निकलती है, विचार-विमर्श, तर्क-वितर्क, द्वेष और प्रेम ........................।

नाज़ और अदा, इशारे और रोमांस सब कुछ एक साथ गतिमान होता है। गुल मुहम्मद ने शेख की बात को बीच से ही लपकते हुए हस्तक्षेप किया। इसके विपरीत प्राईवेट कारों में सफर बेमजा और भावहीन सा लगता है। बस एक ही चिन्ता सवार रहती है कि जल्दी से जल्दी मंजिल पर जा पहुँचें। जबकि ट्रेन की सामूहिक यात्रा में यात्रा

स्वयं मंजिल का आनंद प्रदान करती है बल्कि अनेक अवसर तो ऐसे भी आते हैं जब जी चाहता है कि बस यही आखिरी मंजिल हो और इतिहास इसी क्षण ठहर जाए। गुल मुहम्मद ने बातचीत का सिलसिला जारी रखा।

पता चला कि वह व्यावसायिक रूप से तो कालीनों के व्यापारी हैं लेकिन साथ ही साथ काव्य और साहित्य का अच्छा शौक भी रखते हैं और अपनी गज़लों में प्रेमी के लिए निगाहों और हृदय के कालीन बिछाए रखने में उन्हें विशेष रूप से दक्षता प्राप्त है। शेख मुहम्मद कामिल पहले तो कुछ लिए-दिए से रहे लेकिन जल्द ही गुल मुहम्मद के फूल बिखेरने की कला का शिकार होकर हटो बचो के संकोच से निकल आए। तरबूश (तुर्की) टोपी को दोनों हाथों से घुमाया और फिर उसे सिर से उतारकर अपनी गोद में रख लिया। अब जो तरबूश हटा तो उसके अन्दर से सामान्य हाड़-माँस का इन्सान बरामद हुआ। मानो संकोच का रहा-सहा पर्दा भी हट गया।

शेख से मिलिए, शेख कामिल बड़े खुले विचारों वाले आलिम हैं। पहले नक्शबन्दी थे फिर क़ादरी हुए। इधर कुछ वर्षों से पूर्वजों के तरीके के आवाहक बन गए हैं। मुस्तफा ऊग्लू ने मुझसे शेख का विस्तृत परिचय कराते हुए कहाः

शेख कामिल? दुनिया को आज एक शेख कामिल की तलाश है। मैंने शेख की तरफ मुस्कुराते हुए देखा।

जी हाँ यह भी शेख कामिल हैं। पानी पर चलने वाले शेख लेकिन जब से उन्हें वहाबियों का साथ मिला है। संभवतः अब केवल बाथरूम में ही पानी पर चला करते हैं। शेख कामिल ने इन व्यंगात्मक आक्रमणों के उत्तर में मुस्कुराहटें बिखेर दीं। कहने लगे कि मैं एक सूफी परिवार में पैदा हुआ लेकिन दिल में एक चुभन सी थी जो किसी ज्ञान-ध्यान, तहज्जुद और तस्बीहों के द्वारा और गुणगान से जाती न थीं इसलिए अल्लाह को प्राप्त करने के लिए विभिन्न सिलसिलों और तरीकों पर चलता रहा। यहाँ तक कि अल्लाह ने भले पूर्वजों का मार्ग दिखा दिया। मैं आपकी सभा में बीच में आया था। मुझे वहाँ बैठना बहुत अच्छा लगा। सच तो यह है कि युवा मन में परस्पर विरोधी रिवायतों और तरह-तरह की निराधार बातों ने बहुत सन्देह पैदा कर रखा है। अब इसी महदी के विषय को लीजिए। हम सुन्नी लोग कोई स्पष्ट बात कहने की स्थिति में नहीं है। हम न तो इसका इन्कार करते हैं और न ही दिल-जान से महदी के आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। शीया यदि इस अक़ीदे को मानते हैं, तो वह दिन-रात इसी भावना में जीते हैं कि न जाने कब किस पल महदी प्रकट हो जाएँ। महदी के प्रकट होने की दुआएँ उनकी दिनचर्या का अंग बन गई हैं।

लेकिन सुन्नी अब बचे ही कहाँ। मुस्तफा ऊग्लू ने हस्तक्षेप किया। उमैय्या वंश के शासन के समाप्त होने के बाद अब्बासी और फातिमी जो दो खिलाफतें स्थापित हुईं वह दोनों पैग़म्बर (सल्ल०) से पारिवारिक सम्बन्ध की निकटता के कारण सत्ता में आने वाले

शीया आन्दोलन थे। अब्बासियों ने सभी मुसलमानों को अपने साथ लेने के लिए सबीलुल मुमिनीन जैसा रवैया तो अवश्य अपनाया लेकिन पैग़म्बर के परिवार के हवाले के बिना उनका काम भी न बनता था। महदी का मिथक हो या पैग़म्बर के वंशज की श्रेष्ठता की बातें या सैय्यदों के विशेष सम्मान का मामला, यह सब अब्बासी, फातिमी और इस्माईली और इस्ना अशअरी (12 इमामों को मानने वाले) शीयों के राजनैतिक प्रचार का वैचारिक आधार था। इस गुब्बारे में सत्ता पर आसीन सभी समूह अपने अवसर और आवश्यकता के अनुसार हवा भरते रहे। परिणाम यह हुआ कि शीया लोगों की राजनैतिक विचारधारा ने सदा के लिए सामान्य मुसलमानों में अपनी जगह बना ली। अब सुन्नी मुसलमानों के लिए परेशानी यह है कि व्यावहारिक रूप से तो वह शीया लोगों के मार्ग पर चल रहे हैं हालाँकि उनका दावा सुन्नी होने का है। इस परिस्थिति ने उन्हें सन्देह में डाल रखा है। वह अली (रज़ि०) की श्रेष्ठता का इन्कार भी नहीं करते और हज़रत मुआविया को अमीर (नेता) कहते हुए भी उनके मुँह नहीं थकते। वह शीयों से महदी का विश्वास साझा करते हैं। लेकिन थोड़ा बेदिली के साथ।

मैंने सोचा शेख कामिल तरह-तरह के आध्यात्मिक अनुभवों से गुज़र चुके हैं। सुलूक (अल्लाह को प्राप्त करने) की विभिन्न मंजिले पार की हैं क्यों न उनसे पिछले अनुभवों के सम्बन्ध में पूछा जाए।

सलफी विचारधारा से जुड़ने के बाद अब उन मुराकबों (ध्यान) और अज़कार (गुणगान) और समाअ (संगीत सुनने) को आप किस तरह देखते हैं? मैंने उनसे जानना चाहा।

गुमराही है गुमराही, मरीचिका है मरीचिका, जिसके पीछे ये मूर्ख लोग भागते हैं। सूफी लोगों के बारे में बात करते हुए उनकी बात की कठोरता कुछ अधिक स्पष्ट हो गयी।

मैंने पूछाः आप तो उन स्थितियों से स्वयं ही गुज़र चुके होंगे, ज़िक्र (सुमिरन) की सभाओं में हक़ और हुव की आवाज़ निकाली होगी। क्या इस अनुभव में सालिक (ईश्वर प्राप्ति का मार्ग अपनाने वाले) को वास्तव में यह लगता कि वह किसी आध्यात्मिक अनुभव से गुज़र रहा है?

जी हाँ! मैंने कहा न! वह एक मरीचिका है जिसपर वास्तविकता का आभास होता है। आवाज़ में बड़ी ताक़त है और खामोशी उससे भी कहीं बढ़कर है। जो लोग आवाज़ की धार से घायल नहीं होते वह खामोशी के आगे हथियार डाल देते हैं। ऐसा इसलिए कि बहुत से लोग खामोशी की असीम शक्ति से अवगत ही नहीं होते। उन्हें इसका अनुभव नहीं होता। मुराकबे (ध्यान) में अचानक उन्हें ऐसा लगता है कि वह जिस बनावटी शोरगुल के सहारे अब तक जीया करते थे, उसने अचानक उनका साथ छोड़ दिया है। एक हिला मारने वाली तन्हाई में उन्हें ऐसा लगता है जैसे उनका अस्तित्व घुलता जा रहा

हो और वह अस्तित्व के शून्य बिन्दु की ओर यात्रा कर रहे हों। कुछ लोग इस तरह के अनुभव से सत्य के अवलोकन की ग़लतफहमी में पड़ जाते हैं।

मैं जिन दिनों नाइजीरिया में था। हक-हक कहने वालों अर्थात सूफियों की एक सभा में ज़िक्र के लिए जाया करता था। अल्लाह की क़सम क्या बताऊँ एक-दूसरे का हाथ थामकर झटके से हू-हू की लगातार आवाज़ निकालते रहने से दिल और दिमाग़ शोरगुल की दिनचर्या से दूर जा पड़ते हैं। यह एक ही साथ एक शारीरिक अभ्यास भी था जिसमें हू की आवाज़ के साथ बहुत सी हवा लगातार फेफड़े से निकलने के कारण दिमाग़ पर एक स्वप्निल स्थिति छा जाती थी। हम लोग समझते शायद यह सत्य के अवलोकन के भाव का  प्रारम्भिक प्रकटीकरण हो।

तो क्या कभी आपको दो ज़र्बी और तीन जर्बी नफी (ला इलाहं) इस्बात (इल्लल्लाह) के ज़िक्र का भी अवसर मिला ?

जी हाँ नक्शबन्दियों के कुछ समूहों में यह ज़िक्र काफी लोकप्रिय है। यह भी वास्तव में एक शारीरिक व्यायाम है। 'नफी'  और 'इस्बात' के ज़िक्र में भी फेफड़े को हवा से खाली करने और फिर उसको पूरी तरह साँस से भरने पर ज़ोर दिया जाता है। शेख ने अपना विवरण जारी रखा ।

मुझे याद आया कि सत्य के अवलोकन की इन्हीं दशाओं का उल्लेख एक बार एक रूसी राजनयिक निकोलाई ने भी मुझसे किया था। निकोलाई ने सोवियत यूनियन की नीतियों से तंग आकर त्यागपत्र दे दिया था। जब मेरी उससे भेंट हुई, उस समय वह हालैण्ड में शान्ति स्थापना के लिए काम करने वाले एक संगठन का प्रमुख नेता था। कहने लगा कि जिन दिनों मैं न्यूयार्क में अपनी नौकरी पर नियुक्त था, प्रतिदिन सवेरे सोलह कि०मी० जागिंग के लिए जाया करता था। 12 किलोमीटर दौड़ने के बाद मेरा अस्तित्व इतना चार्ज हो जाता कि मैं अपने आप को क़ायनात के कण कण से जुड़ा हुआ महसूस करता। ऐसा लगता जैसे मुझपर वह्य (ईशवाणी) आने वाली हो। बाद में पता लगा कि यह सब कुछ वास्तव में लगातार दौड़ते रहने से आक्सीजन की कमी के कारण है। अब शेख ने अपने व्यक्तिगत अनुभव से इस विचार की और अधिक पुष्टि कर दी।

पिछले दिनों न्यूरो साईंस में जो नये शोध हुए हैं, उन्होंने भी सूफीवाद के गुब्बारे से हवा निकाल दी हैं। अब मलए आला (अल्लाह के दरबार) की सैर के लिए 'नफी' और 'इस्बात' (नहीं और हाँ) के अभ्यास की कोई आवश्यकता नहीं और न ही कीमास की नस (एक नस जो पूरे शरीर को जोड़ती है) पकड़कर मुर्गे की तरह अल्लाहू की बाँग देने की आावश्यकता है, बस हेरोईन का एक इन्जेक्शन लीजिए और अपनी अन्तरात्मा की आँखों से ज़मीन और आसमान की सैर कर आईए। दिमाग में यदि सैरोटोनीन का स्तर ऊँचा रहे तो आत्मविश्वास में डूबने की इस भावना में سلطانی ما أعظم شانی یامافی جبتی إلاالله या सीधे أنا الحق अनल हक (मैं ही सत्य हूँ) का नारा लगाइए और

अगर इसका स्तर नीचे चला गया हो तो अपने आप को निम्न फ़कीर और पूरी तरह कमज़ोर और आत्मनिन्दा करने वाले सम्प्रदाय का सदस्य हो जाईए। मानो दवाओं ने उन कठिन आध्यात्मिक अनुभवों को जिसमें सालिक (अल्लाह का दर्शन करने वाले) को एक लम्बी उम्र अभ्यास करनी पड़ती थी, अब आपकी चौखट पर लाकर रख दिया गया है। मैं अभी इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था कि मुस्तफा ऊग्लू की कार में गाने के जादू करने वाली लय इस तरह उठे।

يا من يرانى فى علاه و لا أراه
يا من يجير المستجير إذا دعاه

हम्ज़ा शकूर................. अरे यह तो हम्ज़ा शकूर की आवाज़ है। ऐसा लगा जैसे शेख कामिल को अपने पुराने दिन याद आ गए हो। जी हाँ! हम्ज़ा शकूर को सुनिए और सिर धुनिए। अल्लाह की क़सम हम्ज़ा शकूर का जबाब नहीं। मुस्तफा ऊग्लू ने प्रशंसा करते हुए कहा।

يا من يجود على العباد بفضله
جل القدير و جل ما صنعت يداه
يا من له الا لاء فى اكوانه
و اذا سالنا العفو لم نسال سواه
هبنى رضاك فانت اكرم و اهب
و اغفر لعبدك ياعظيما فى علاه

मैंने पहली बार हम्ज़ा शकूर को फिज़ (मोरक्को) की एक बड़ी सभा में सुना था। शेख गाने वालों का एक पूरा गिरोह लेकर आए थे। गायकों के विशेष पूर्वी परिधान में ऐसा लगता था कि अच्छी सूरत वाले नौजवान लड़के-लड़कियों का गिरोह अल्लाह की प्रशंसा और उसकी शान बयान करने के लिए आसमानों से उतर आया हो। यहाँ तक तो ठीक लेकिन जब तबले की थाप पर 'या रसूलुल्लाह मदद' की आवाज़ गूँजती या, शैयन लिल्लाह या रसूलुल्लाह' का नारा लगता तो मैं बार-बार सोचता कि संगीत के जादू में हम अक़ीदे में जमे रहने को इतनी आसानी से त्याग रहे हैं।

शेख ने अपने पुराने दिनों की याद ताज़ा करते हुए कहाः

नग्मे की भाषा बड़ी ताक़तवर होती है, कभी-कभी यह बुद्धि और विवेक को बहा ले जाती है। आज भी जब ये नग्मे मेरे कानों से टकराते हैं तो प्रसन्नता के क्षणों की यादें ताज़ा हो जाती हैं। मस्ती और अल्लाह की याद में डूबे हुए क्षण।

बात यह है कि जब पूरब का गायक अपनी वैचारिक अतिशयोक्ति में धार्मिक भावनाओं को भड़काता है तो यह सब कुछ एक पेचीदा आन्तरिक प्रक्रिया का अंग होता है। ऐसा लगता है जैसे नग्मे की भाषा मनुष्य के अस्तित्व में घुल-मिल गयी हो। उसका रोम-रोम संगीत की लय पर बरबत (एक वाद्‌य यन्त्र) बन गया हो। धार्मिक संगीत का

यह आन्तरिक अनुभव जब कभी पश्चिमवालों के अवलोकन में आता है तो वह पुकार उठते हैं। अल्लाह की क़सम यह हुई बात। इनमें से कुछ लोग ईमान भी ले आते हैं हालाँकि उनका यह ईमान इस्लाम पर कम पूर्वी देशों की मुस्लिम संस्कृति पर अधिक होता है।

भैया, आवाज़ में बड़ा दम है। यह चाहे तो बिजली की कड़क बन जाए और चाहे तो दाऊद के मधुर संगीत पर प्रसन्नता भरी शान्ति की लय बनकर छा जाए। शेख ने और स्पष्टीकरण करते हुए कहा।

और कुन (हो जा) भी तो एक आवाज़ ही थी जिसके बारे में सूफी लोग कहते हैं कि यदि आज भी शब्द कुन को अपनी तमाम विमाओं के साथ बरता जा सके तो हर पल एक नयी कायनात अस्तित्व में आ सकती है। मैंने शेख का दृष्टिकोण जानना चाहा।

मैं नहीं समझता कि वास्तव में ऐसा है, मेरे विचार में सूफी लोग भारी ग़लतफ़हमी का शिकार हैं। वह अपने हाव-हू के हंगामें की आवाज़ से प्रभावित होकर, बल्कि उसके जादू में स्वयं ही लीन हो जाने के कारण यह समझ बैठे हैं कि 'कुन' भी कोई दो ज़र्बी, तीन ज़र्बी ज़िक्र हो जो सुनने वाले पर एक मस्ती पैदा करता हो या उसके दिमाग़ की धारा को जादू के प्रभाव में कर ले या उस पर नियन्त्रण करने की क्षमता रखता हो।

हालाँकि दोनों में बड़ा और मौलिक अन्तर है। 'कुन' वास्तविक विश्व-रचना का उपमा है जबकि हमारे बोल की आवाज़ें एक बनावटी वास्तविकता की रचना करते हैं। वह हमें सपनों की एक ऐसी दुनिया में ले जाते हैं जिसपर हमें कुछ क्षणों के लिए वास्तविकता का आभास होने लगता है। शेख ने इस बिन्दु को और अधिक स्पष्ट किया।

तो क्या जो लोग नग्मों से दिलचस्पी रखते हैं या संगीत और बरबत के शौकीन हैं या उच्च स्तरीय कविता को पसन्द करते हैं, वह सब के सब शब्दों के जादू में गिरफ़्तार हैं?

जी हाँ, बड़ी हद तक ऐसा ही है।

मेरा भी यही विचार है। मुस्तफा ऊग्लू ने गाड़ी चलाते हुए कनखियों से हमारी ओर देखते हुए कहा। अब मुझ को ही लीजिए मैं सूफियों की वैचारिक मरीचिका से अच्छी तरह अवगत हूँ लेकिन मेरे पास विभिन्न सूफी नग्मों का एक बड़ा भण्डार मौजूद है। अरबी भाषा यद्यपि मुझे कम आती है लेकिन जब मैं हम्ज़ा शकूर और शेख हब्बू जैसे लोगों को सुनता हूँ तो दिल के तार बज उठते हैं। ये शब्द बड़े कातिल होते हैं। आवाज़ों के जादू और उसके जाल में यदि कोई एक बार फँस जाए तो उससे रिहाई कोई आसान नहीं होती।

शेख कामिल तो लम्बे समय तक आवाज़ों के जादू से प्रभावित रहे हैं। मुस्तफा ऊग्लू अपने तमाम विद्वतापूर्ण विश्लेषण के बावजूद आज भी आवाज़ों से प्रभावित हैं। उन्होंने नग्मे की भाषा से हेराईन का इन्जेक्शन लिया और तौबा भी किया तो इस तरह

कि पुरानी लज़्ज़तों के उल्लेख से अब भी आत्मा सुगंधित हो जाती है। रूह ताज़ा हो जाती है। गालिब के कथनानुसारः

"पीता हूँ रोज़-ए अब्र व शब-ए माहताब में"

बल्कि यदि गहरी नज़र से देखें तो आवाज़ों के जादू का यह सिलसिला पूरी उम्मत पर छाया हुआ है। यदि सूफियों की महफिलों की चहल-पहल हाव-हू की जोशीली आवाज़ों के सहारे क़ायम है तो शीया लोगों के यहाँ भावनाओं की गर्मबाज़ारी का सारा कारोबार वास्तव में हुसैन (रज़ि०) की प्रशंसा, विलाप और शोक गीतों के दम से चल रहा है। बल्कि सच्चाई तो यह है कि यदि धार्मिक शायरी और विभिन्न क़िस्म का समर्पण संगीत न हो तो विभिन्न सम्प्रदायों का आध्यात्मिक कारोबार अचानक ठप हो जाएगा। थोड़ा विचार कीजिए! उर्स के अवसर पर यदि कव्वाली का आयोजन न हो, मस्ती के माहौल में धमाल डालने का सिलसिला बन्द हो जाए या आशूरा और चहल्लुम के अवसर पर मातम और शोक गीत या प्रशंसा और ज़िक्र की मजलिसों में भाषण करने वाले और कविता कहने वाले के शब्द के जादू न जगाएँ तो वैचारिक भ्रमों के ये विभिन्न खेमे जो काव्य और गायन की बदौलत क़ायम हैं। अपना आकर्षण खो दें।

शब्दों में बड़ी शक्ति है बल्कि निरर्थक शब्द भी कम कातिल नहीं होते। बिजली की कड़क है कड़क, शेख ने अपनी दार्शनिक भाव वाली खामोशी तोड़ी। पूर्वी देशों की प्रशंसा और कव्वाली हो या पश्चिमी देशों में प्रकाश के स्टेज पर जंगली उजड्डपन और हृदय विदारक हाव-हू, यह सब आवाज़ों का जादू ही तो है जिसने इन्सानों को गिरफ्तार कर रखा है। कहीं यह सब कुछ मात्र मनोरंजन के नाम पर है और कहीं धर्म के नाम से उसे आन्तरिक मस्ती का अंग बना दिया गया है।

गुल मुहम्मद जो अब तक कभी अरुचि और कभी शौक और जिज्ञासा के साथ हमारी बातें सुनते और कभी थोड़ी बन्द आँखों से, ऐसा लगता जैसे कल्पना की आँख में रेल की किसी रोमाचंक यात्रा पर रवाना हो जाते हों, अब उन्होंने हस्तक्षेप के अंदाज में सामने मुड़े। कहने लगे आवाज़ और साज़ के अतिरिक्त एक और वस्तु है जो सूफी सभाओं, समाअ की महफिलों और विलाप और शोक की बैठकों में हमारी इन्द्रियों को निलम्बित किए देती है और वह है रंग और आहंग के मेल से एक सपने जैसा या अर्द्ध करिश्माई माहौल। जर्मनी में अधिकतर मौलवी सम्प्रदाय के सूफी और गायकों का समूह आता रहता है। बल्कि अब तो यह लोग पेरिस, लन्दन बल्कि अमेरिका तक जाते हैं जहाँ उनकी लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। रूमी की शायरी पर यूरोप और अमेरिका में निरन्तर किताबें प्रकाशित हो रही हैं। मुझे म्यूनिख़ के एक प्रकाशक ने बताया कि यह किताबें हज़ार, दस हज़ार नहीं छपतीं बल्कि अमेरिका में प्रकाशित होने वाली कुछ लोकप्रिय किताबों की संख्या ढाई लाख तक जा पहुँचती है। रूमी की इस लोकप्रियता का एक कारण संभवतः यह है कि जब रंग और प्रकाश के कुंडल में सुनने में मुग्ध व्यक्ति

अपनी लय बिखेरता है, उसी दौरान आधे-अधूरे अन्धकारपूर्ण कोनों से सभा पर तारा झुंड की वर्षा होती है और फिर नृतक के छतरी नुमा स्कर्ट सभा पर एक जोश की मस्ती तारी कर देते हैं। जो लोग कविता और नग्मे की भाषा से परिचित नहीं होते उनके लिए भी यह जादुई दृश्य कुछ कम कातिल नहीं होता।

तो क्या यह सब कुछ जिसे हम धार्मिक संगीत या नृत्य या समाअ समझे बैठे हैं, उनकी हैसियत एक तरह की ललित कला की सी है। मैंने गुल मुहम्मद से स्पष्टीकरण माँगा।

जी हाँ, बिल्कुल ठीक कहा आपने। हम धर्म के नाम पर वास्तव में एक तरह के फुनूने लतीफा (ललित कला) के जादू में गिरफ़्तार हैं।

बात का सिलसिला शायद अभी कुछ और देर तक जारी रहता लेकिन आगे रास्ता अवरुद्ध था। हमारी कार रेंगते-रेंगते अब लगभग रुक सी गयी थी। हमारी बायीं तरफ बासफोरस जलडमरुमध्य की लहरों के मचलने और बल खाने का दृश्य था और दूसरी ओर होटल का भवन दिखाई दे रहा था। सोचा कि इस ट्रैफिक जाम में समय नष्ट करने के बजाए क्यों न पैदल सड़क पार कर लूँ। ऊपरी सड़क से होटल का रास्ता कुछ ही मिनटों का है। इसलिए मैंने मेहमानों को यहीं अलविदा कहा और अपने मेज़बान मुस्तफा ऊग्लू से जाने की अनुमति माँगी।

इस्ताम्बोल में किसी जाम में फँसने का यह मेरा पहला संयोग था। लेकिन मुझे इस बात पर कदापि आश्चर्य नहीं हुआ कि दौड़ते भागते शहरों में जहाँ जीवन प्रत्यक्ष रूप से बिजली की रफ्तार में दौड़ता है, ट्रैफिक जाम में समय का नष्ट करना एक साधारण सी बात है। हाँ जिन शहरों में जीवन की बदलती हुई आवश्यकताओं के साथ नये वैकल्पिक रास्ते बनते रहे हैं या फ्लाईओवर के निर्माण होते रहे हैं, वहाँ भीड़ की यह अधिकता या जीवन के जाम का एहसास कुछ कम होता है। सामान्य राजमार्गों की तरह सभ्यता के राजमार्ग पर भी अगर नये रास्ते न बनाए जाएँ तो मानव जीवन एक तरह की जड़ता का शिकार हो जाता है। और कुछ ऐसी ही हालत विचार और चिन्तन की दुनिया की भी है जहाँ लगातार नये राजमार्गों और नये फ्लाईओवरों के निर्माण की आवश्यकता होती है। तुर्कों के 500 वर्षीय नेतृत्व में यदि बौद्धिक इतिहास पर दृष्टि डाली जाए, तो स्पष्ट महसूस होता है कि नये विचारधारा के रास्तों या वैकल्पिक राजमार्गों के निर्माण का काम बहुत कम हुआ है। परिणाम यह हुआ कि धीरे-धीरे हमारे चिन्तन के राजमार्ग नित नयी संभावनाओं के बजाए हिला मारने वाले जड़त्व का दृश्य प्रस्तुत करने लगे। जब मानव-समाज ऐसी परिस्थिति का सामना करे तो वित्तीय, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन की बुनियादें हिलने लगती हैं। फिर इन्हीं रास्तों पर चलते रहने पर और अधिक आग्रह हमें इस बौद्धिक भ्रम में तो अवश्य लिप्त कर देता है कि हम मंजिल की ओर

चल रहे हैं, हमारी गाड़ी की दिशा भी ठीक है लेकिन हम जाम में फँसे कहीं पहुँचते ही नहीं।

# 10

# या रब्बुल बहा

¼,s cgkmYykg ds ikyugkj½

सवेरे असाधारण रूप से आँख कुछ पहले ही खुल गयी। सोचा था कि फज्र की नमाज़ जामेअ सुल्तान अहमद में पढूँगा लेकिन अभी तो सुबह के दो ही बजे थे। खिड़की से बाहर का दृश्य देखा। समुद्र के किनारे प्रकाश पुंजों की कतारें कुछ मद्धिम पड़ती दिखायी दे रही थीं। सवेरा होने में यद्यपि काफी समय बाकी था लेकिन कुछ तो कृत्रिम प्रकाश के प्रभाव और कुछ समुद्र तट होने के कारण झटपटे का सा एहसास होता था। माहौल पर एक तरह की रहस्यमयता छायी हुई थी। प्रकृति अपने सम्पूर्ण रहस्यों के साथ

साफ छिपते भी नहीं सामने आते भी नहीं ।

की सी नाज़ो अदा का प्रदर्शन कर रही थी। सोचा क्यों न इस आकर्षक दृश्य से भी आनन्द लिया जाए। जैसे-तैसे चाय की प्याली समाप्त की, वहीं फर्श पर दो रकअत नमाज़ दाग़ी कि सुन रखा था कि:

बटती है रात ही को ख्वाजा तेरी गली में

और समुद्र तट की सैर के लिए निकल खड़ा हुआ। इस्ताम्बोल बड़ा शहर है। मैं समझता था कि रात दिन के चक्कर इसकी गतिविधियों पर कम ही प्रभाव डालते होंगे क्योंकि पश्चिम के कुछ बड़े शहर इस बात की घोषणा में गर्व महसूस करते हैं कि "शहर कभी नहीं सोता" लेकिन यहाँ इस्ताम्बोल के इस भाग में ट्रैफिक नाम को न थी। हाँ, समुद्र के किनारे फुटपाथ पर कहीं-कहीं कोई रात काटने वाला और कोई सहरी के समय उठने वाला दिखाई दे देता था। पता नहीं यह लोग किसी हरे पक्षी की तलाश में आए थे या समुद्र की भव्य रहस्यमयता उन्हें यहाँ खींच लायी थी या इन गहरी बातों से परे ये मात्र सुबह की चहलकदमी के लिए आने वाले लोग थे। वास्तविकता कुछ भी हो एक बात का बहुत तीव्रता से एहसास होता था कि हरे पक्षी की शुभ सूचना का सबसे उपयुक्त समय यही है कि इस झटपटे में खुदा की तलाश करने वाले को विभिन्न रंगों पर हरे रंग का सा अनुमान हो सकता था।

और 'हान पामोक' ने लिखा है कि इस्ताम्बोल की दीवारों और उसके माहौल पर एक तरह की चिंता छाया किए हुए है। ऐसा लगता है जैसे सब कुछ चिन्तामग्न हो। सुबह के इस झुटपुटे में जहाँ एक तरफ बासफोरस जलडमरु-मध्य के इस पार एशिया महादेश अपनी सम्पूर्ण ऐतिहासिक शान बल्कि शान के गर्व के साथ अपने अस्तित्व का एहसास

दिलाता है तो दूसरी तरफ खिलाफत के महल से मिला हुआ बाज़नतीन का ऐतिहासिक गिरजाघर और वहीं उसके सामने जामेअ सुल्तान अहमद हमें इतिहास के विभिन्न युगों और उसके रहस्यों और भेदों से अवगत कराता है और इस पूरे परिदृश्य में जहाँ इतिहास कुछ सोया हुआ सा लगता है और जिसे जानबूझकर पिछली पौन सदी से थपक थपक कर सुलाने की कोशिश की गयी है। हर पल इस बात का खटका लगा रहता है कि न जाने कब किस मोड़ पर इस सोए हुए शहर को जगाने के लिए कोई अज़ान दे डाले।

तो क्या वह आने वाले हैं?

कम से कम झुटपुटे के इस रहस्यपूर्ण माहौल में जहाँ गिने-चुने कुछ व्यक्तियों के अतिरिक्त पूरा शहर खामोशी की चादर ताने सोता है, यदि अपने वर्तमान स्वरूप और अनुपयुक्त समय के कारण उन इक्का-दुक्का लोगों पर परोक्ष के एक व्यक्ति का गुमान हो और यह धड़का लगा रहे कि न जाने कब किस पल आने वाला आ जाए तो यह कुछ आश्चर्य नहीं। यह तो नीचे समुद्र तल से खिलाफत के महल का एक दृश्य था। मैंने जब भी ख़िलाफत के महल की ऊँचाई से बासफोरस के जलडमरु-मध्य की नीली लहरों और उससे परे एशियाई हिस्से को देखा है, हर बार मुझे पहले से कहीं अधिक शिद्दत के साथ यह बात महसूस हुई कि इस्ताम्बोल पर ग़म का नहीं, बल्कि उन पीरों और फ़कीरों की छाया है जिनकी निशानियाँ मस्जिदों से लेकर पार्कों, सैरगाहों, बाजारों और पर्यटन-स्थलों तक फैली हुई हैं। कब्रों का बनाव श्रृंगार, उनकी सुरक्षा, मकबरों की सजावट और उनका रख-रखाव जिस बड़े पैमाने पर इस शहर में दिखायी देता है और मरने के बाद भी जिस तरह सुल्तानों से लेकर औलिया तक अपनी-अपनी टोपियों और पदों के स्तरों के साथ ज़ियारत करने वालों के स्वागत के लिए अपनी बाँहें पसारे हुए हैं, उसने शहर और इसके वासियों का मानसिक रिश्ता जीवन के बजाए वीरान कब्रों और भावहीन खंडहरों से जोड़ कर रखा है। इसमें सन्देह नहीं कि मोमिन के लिए मौत की अनदेखी कातिल ज़हर की तरह है लेकिन मौत की याद एक बात है और उसका जश्न मनाना बिल्कुल ही दूसरी बात। और यह जश्न जब शादी जैसे जश्न का रूप ले ले और उसे उर्स कहा जाने लगे तो हकीकत को खोलने के लिए केवल इन शब्दावलियों को उलट-पुलट कर देखना, इनके नामकरण का कारण मालूम करना ही अपने अन्दर शिक्षा का बड़ा सामान रखता है।

ज्यों-ज्यों सुबह निकट आती जा रही थी, प्रकृति के सौन्दर्य बल्कि यह कह लीजिए कि उसके जादूपन में असाधारण वृद्धि होती जा रही थी। फुटपाथ की बेंच पर बैठकर दूर क्षितिज को देखिए तो ऐसा लगता है कि हर पल रहस्य का एक पन्ना उलटता हो और आश्चर्य की एक नयी दुनिया प्रकट हो जाती हो। अब बैठने की ताकत न थी, हर पल एक नयी तजल्ली का समाँ था। ऐसा लगता था मेरे अस्तित्व का रोम-रोम इस तजल्ली के

निशाने पर हो, इसको सहन करने की ताकत भी न हो और उससे पूरी तरह दामन छुड़ाना भी संभव न हो।

समुद्र से मेरी पुरानी दोस्ती है। कभी हिन्द महासागर के तटों पर कभी लालसागर के रास्तों पर, कभी यूरोप और अमेरिका और जावा सुमात्रा के तटवर्ती शहरों में समुद्र की भयंकर, रहस्यपूर्ण व्यापकताओं को देखते जाना मेरा प्रिय कार्य रहा है। बाजारों में बिकने वाला वह पोस्टर जिसपर लिखा होता है, ऐ खुदा! तेरा समुद्र इतना बड़ा और मेरी नाव इतनी छोटी, मेरे मन पर बचपन से कुछ ऐसा चिपका कि आज तक उतर न सका। हाँ, प्रकृति को देखकर अल्लाह को सहसा पुकार उठने का जो अनुभव मुझे फिनलैण्ड के एक द्वीप मारीहाम में हुआ वह इससे पहले बल्कि इसके बाद भी कभी न हुआ। लगभग 11—12 बजे की बात होगी, ओलाण्ड आयरलैण्ड की संसद से हमारे आवास की दूरी ढ़ाई-तीन किलोमीटर से अधिक नहीं रही होगी। सोचा मौसम अच्छा है, तबीयत में खिलावट और ताजगी भी है, क्यों न पैदल ही आवास तक चला जाए। इस इरादे से मैं तट के किनारे फुटपाथ की ओर चला। अब जो ज्ञानपूर्ण और बौद्धिक वार्ताओं से दूर तन्हाई की स्थिति में प्रकृति पर नज़र पड़ी तो अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ कि अल्लाह ने हमारे लिए संसार को इतना सुन्दर और जादू जगाने वाला बनाया है। सूरज अपनी पूरी शान के साथ अपनी किरणें बिखेर रहा था जिसने पेड़ों, हरियालियों और पानी की नीली सतह पर शायर के कथनानुसार सुनहरी कबा लपेटने का दृश्य दिखा रहा था। दूर बहुत दूर तक आर्कीपलेगो के बहते हुए पानी के सिलसिले के दूसरी ओर खुशियों से भरे जीवन की और अधिक संभावनाओं की निशानदेही कर रहा था। मैं कुछ वशीभूत सा हो गया। कभी अल्लाह की प्रशंसा और पाकी बयान करता और कभी बेबसी की हालत में दो-दो फुट उछलता और कभी खुशी के मारे रो पड़ता। ढाई-तीन किलोमीटर की यह यात्रा अल्लाह, बन्दे और कायनात के इस अदृश्य रिश्ते की तलाश की प्रक्रिया बन गया।

संभवतः बेहोशी का कुछ ऐसा ही अनुभव रूमी को उस ज़रदोज़की धमक सुनकर हुआ था जो हथौड़े की हर चोट के साथ इल्लल्लाह-इल्लल्लाह कहता जाता था। कहते हैं कि रूमी इस धमक को सुनकर अपना नियन्त्रण खो बैठे थे। हथौड़े की हर चोट उन्हें एक नये उमंग के एहसास से दो-चार करती रही, उनपर पहली बार ला इलाह इल्लल्लाह का अर्थ स्पष्ट हुआ, और वह मुर्गे बिस्मिल की तरह तड़पने लगे। इस अनुभव ने आने वाले दिनों में उनके शिष्यों के लिए समाअ की एक स्थायी संस्था स्थापित कर दी। यदि रूमी हथौड़े की धमक से बेकाबू न हुए होते तो समाअ की ये महफिलें जिन्होंने धार्मिक शायरी, सूफियाना नृत्य, मुनाजाती दुआओं और कव्वाली और धमाल के विभिन्न रूपों को जन्म दिया है, संभवतः इस शौक और प्रामाणिकता के साथ मुसलमानों में लोकप्रिय न होतीं। मेरी बेखुदी की तरह रूमी का बिस्मिल नृत्य भी शुद्ध रूप से एक व्यक्तिगत

अनुभव था। अब जो लोग इस प्रक्रिया को दोहराने की कोशिश करते हैं या जो नृत्य और समाअ के इस व्यक्तिगत अनुभव की नक़ल करते या उसे संस्था के रूप में अपनाते हैं। उन्हें ख़ुशी और सुरूर की वह कैफियत तो प्राप्त नहीं हो सकती।

मारीहाम में जब तक मैं ठहरा रहा, इशा के वुज़ू से फज्र की नमाज़ पढ़ता रहा। न जाने यह किसी दिलवाले की कृपा का प्रभाव था या भूगोल की भूल। पहले दिन तो मैं आश्चर्यचकित रह गया। आधी रात की बात होगी। अभी-अभी झुटपुटे के समाप्त होने और अंधेरी रात का आने का एहसास हुआ था। घंटा देढ़ घंटा भी नहीं गुज़रा होगा कि सुबह की सफेदी दिखायी देने लगी। उपदेशों और कहानियों की किताबों में बहुत से बुजुर्गों के बारे में यह पढ़ रखा था कि उन लोगों ने लगातार 40 वर्ष तक इशा के वुज़ू से फज्र की नमाज़ पढ़ी। लेकिन अभी 40 साल पूरे होने में एक दिन बाकी रह गया था कि उनका वुज़ू टूट गया। 40 साल का अभ्यास (साधना) बेकार हो गया। अब जो मारीहाम के द्वीप पर इस फ़क़ीर ने इतनी आसानी से बल्कि कह लीजिए कि आराम के साथ, इशा के वुज़ू से फज्र की नमाज़ का प्रयोग किया तो सोचा कि काश हमारे उन बुजुर्गों का जो चालीस वर्ष का रिकार्ड बनाने में असफल रहे, इस द्वीप में रहे होते तो उन्हें बुजुर्गी के इस पद पर आसीन होने में इतने कष्टों का सामना नहीं करना पड़ता।

एक दिन जुमे की नमाज़ की उधेड़बुन में बैठा था। आयोजकों ने यह उम्मीद दिला रखी थी कि इस द्वीप पर कुछ मुसलमान भी आबाद हैं जो आपसे मिलने आयेंगे। एक पाकिस्तानी लड़की राबिया तो तीसरे पहर को आयी और वह भी यह कहने कि उसके यहाँ आज मेरे रात के भोजन पर स्थानीय सम्मानित व्यक्तियों और विशेष रूप से विभिन्न धार्मिक नेताओं को आमन्त्रित किया गया है। हाँ, दोपहर में ईरानी मूल के बहाइयों का एक समूह आया जिसने यह सूचना दी कि इस द्वीप पर केवल एक पाकिस्तानी मूल के मुस्लिम परिवार आबाद है अलबत्ता एक छोटा सा समूह हम बहाइयों का है जिनके लिए كتب عليكم الصلوٰة فرادا (तुम्हारे लिए नमाज़ अलग-अलग अनिवार्य की गयी है) का आदेश मौजूद है इसलिए किसी जुमे की नमाज़ का सवाल ही पैदा नहीं होता।

बहाई जो यहूदी और ईसाई बाइबिल के अतिरिक्त क़ुरआन मजीद पर भी आस्था रखते हैं। यद्यपि वह अब अपने आप को मुसलमान नहीं कहते, इस बात से अनभिज्ञ नहीं कि अतीत में उनका सम्बन्ध मुहम्मद (सल्ल०) के अनुयायियों के क़ाफिले से रहा है। कुछ वैचारिक भ्रम के कारण और कुछ राजनैतिक दमन ने उन्हें पहले मुस्लिम पहचान को त्यागने और उनमें से बहुतों को प्रवास पर विवश किया। 19वीं सदी के मध्य में सैय्यद मिर्जा अली मुहम्मद ने *बॉब* होने की घोषणा की। उनका दावा था कि वह एक ऐसे मसीहा अथवा महदी हैं जो इन कठिन परिस्थितियों में उम्मत की डूबती नैय्या को पार लगा सकते हैं। दुख और बैचेनी के उस माहौल में उनके आह्वान को स्वीकार करने वालों की

संख्या निरन्तर बढ़ती गयी। इससे बड़ी बात यह हुई कि कुर्रतुल ऐन जैसी सुन्दर और प्रभावी भाषण देने वाली महिला इस आन्दोलन को मिल गयी जिसने अपनी भाषण शैली के जादू से एक जोशीला माहौल बना दिया। अली शीराज़ी का विद्रोह तो बन्दूक की ताकत से दबा दिया गया। वह क़त्ल कर दिए गए। लेकिन उम्मत की दशा अभी बदली न थी इसलिए महदी की आवश्यकता अब भी बाक़ी रही। बहाउल्लाह ने अपने आप को बाब की भविष्यवाणियों के निचोड़ के तौर पर प्रस्तुत किया। अकेलेपन की क़ैद में उनको यह ज्ञान हुआ कि वह केवल महदी ही नहीं बल्कि एक पूर्ण पैग़म्बर हैं जिनसे अल्लाह बात करता है। उन्होंने अपने ईशवाणियों के संग्रह का नाम 'किताब-ए-अक़दस' रखा जो 1890 ई० में पहली बार मुम्बई के एक प्रेस से प्रकाशित हुआ।

उसका नाम ताहिरा था। वह उस गिरोह की सरदार थी जो 6—7 बहाई महिलाओं पर आधारित था। एक ताहिरा वह थी जो कुर्रतुल ऐन की हैसियत से प्रसिद्ध हुई जो अपनी असाधारण सुन्दरता, प्रभावी भाषण शैली और नेतृत्व की योग्यताओं के कारण सत्ताधारियों के लिए निरन्तर सिरदर्द बनी रही और एक यह थी जिसने मारीहाम द्वीप पर ताहिरा की। 'आध्यात्मिक बेटियों' का वैचारिक नेतृत्व सँभाल रखी थी। कहने लगी हम इस द्वीप में अपने वतन से दूर हब्शा के प्रवासियों की तरह निर्वासन का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ईरान में हमारे लिए जीवन व्यतीत करना कठिन है। यहाँ प्रचार और शिक्षा की स्वतन्त्रता तो है लेकिन इस सन्देश की शान के अनुसार सुनने वाले नहीं मिलते।

तो क्या तुम वास्तव में यह समझती हो कि काली या अंधेरी चाल में अकेलेपन की क़ैद के दौरान बहाउल्लाह पर वह्य आती थी? मैंने उसे मात देने की कोशिश की।

बोलीः इसमें आखिर सन्देह की क्या बात है। बाब ने उसके आने की भविष्यवाणी कर रखी थी। बाब को यह पता था कि वह केवल उसकी शुभ सूचना देने और उसके आगमन के लिए माहौल बनाने के लिए भेजा गया है। बाब के आगमन की शुभ-सूचनाएँ हदीसों में मौजूद हैं। वही हदीसें जिनपर तुम सभी सुन्नी शीया मुसलमान महदी की हदीसों की हैसियत से विश्वास रखते हो। सैय्यद अली शीराज़ी सैय्यदों के परिवार से था जिसकी शुभ सूचना की तुम्हारी धार्मिक किताबें गवाही देती हैं।

महदी के दावे तो पहले भी लोग करते रहे हैं और जब तक इन निराधार रिवायतों को धार्मिक हैसियत प्राप्त रहेगी, संभवत आगे भी करते रहें। लेकिन क्या तुम्हें ऐसा नहीं लगता कि बहाउल्लाह के प्रकट होने के बाद भी दुनिया वैसी की वैसी ही रही। आज भी बहुत से लोग एक नये महदी की राह देख रहे हैं। महदीयत के इस दावे पर इतिहास का फैसला तो उनके पक्ष में नहीं जाता।

मेरी इस आपत्ति पर ताहिरा ने पैंतरा बदला। मुस्कुराते हुए कहने लगी। लेकिन हम उन्हें केवल महदी मानते ही कब हैं। हम तो उन्हें वह्य प्राप्त करने वाले कहते हैं जिन्हें खुदा ने एक विश्वव्यापी समाज की स्थापना के लिए भेजा था और जिनकी किताब-ए

अकदस (सबसे पवित्र किताब) कुरआन मजीद के सिलसिले की कड़ी बल्कि कह लीजिए कि नये ज़माने का नया संस्करण है।

लेकिन हम मुसलमान तो यह समझते हैं कि कुरआन के अवतरित होने के बाद अब आसमान से वह्य आने का सिलसिला अपने अन्त को पहुँच गया। यहाँ तक कि उम्मत में जिन लोगों ने महदी होने के दावे किए वह भी अपने साथ किताब-ए अकदस लाने का साहस न कर सके, मैंने अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट किया।

नहीं, मैं यह समझती हूँ कि इस बारे में हमारे साथ बहुत अन्याय हुआ है। ताहिरा की आवाज़ अब थोड़ी तेज़ होती जा रही थी। कहने लगी : मुहद्दस (दिव्य सन्देश प्राप्तकर्ता) और मुलहिम होने के दावेदारों से तो आप मुसलमानों का इतिहास भरा पड़ा है। यह कैसी अजीव/विचित्र बात है कि अली शीराज़ी और बहाउल्लाह यदि अपने दिव्य सन्देश का उल्लेख करें और उसे प्रकाशित कर दें तो कत्ल के हक़दार घोषित किए जाएँ, उन्हें देश और धर्म छोड़ने पर विवश किया जाए और इब्ने अरबी, अब्दुल क़ादिर जीलानी, शाह वलीउल्लाह देहलवी अपने दिव्य सन्देश से प्रमाण लायें या बात-बात में मेरे पालनहार ने मेरे दिल में यह डाला है कि रट लगाएँ तो उन्हें साहब-ए कश्फ घोषित कर दिया जाए। यहाँ तक कि उनके विरोधी भी इन बातों को वैयक्तिक मामला कहकर आगे बढ़ जाएँ। बहाउल्लाह की किताब-ए अकदस पर तो आपको इतनी आपत्ति है लेकिन आप उन 64 पवित्र आयतों का उल्लेख क्यों नहीं करते जिनमें खुदा स्वयं अब्दुल क़ादिर जीलानी को या ग़ौसुल आज़म कहकर सम्बोधित करता है। अब्दुल कादिर पर अवतरित होने वाली ये आयतें जो '*काल अल्लाह तआला* (अल्लाह तआला ने कहा) या ग़ौसुल आज़म' से शुरु होती हैं, आप लोगों को खत्म-ए नुबूव्वत (पैग़म्बरी की समाप्ति) के विरुद्ध मालूम नहीं होतीं? खुदा स्वयं किसी को या ग़ौस कहे तो उसके बाद आखिर रह ही क्या जाता है? लेकिन आपके प्रामाणिक उलमा इस तरह के बकवास का अर्थ यह बताते हैं कि खुदा स्वयं को ग़ौसुल आज़म के व्यक्तित्व में देखता है, वह ग़ौस के दर्पण में अपनी वास्तविकता को देख रहा होता है तो इस तरह वह स्वयं अपना ही सम्मान करता है। आश्चर्य है कि इस तरह की बातों से आप लोगों की तौहीद (एकत्ववाद) पर आँच नहीं आती। अधिकतर इस्लामी उलमा उन्हें गौस-ए रब्बानी, कुतुब-ए समदानी, महबूब-ए रहमानी, मौसूफ-ए सिफात-ए सुब्हानी, मज़हर-ए ज़ात-ए सुल्तानी, कुतुबुल अकताब, ग़ौसुल आज़म, मुहिउल मिल्लत वद्दीन जैसी उपाधियाँ देते हैं। यही अपराध यदि बहाउल्लाह से हो जाए तो उनपर जीवन व्यतीत करना कठिन बना दिया जाए। यहाँ तक कि उनसे उनका वतन और धार्मिक पहचान भी छीन ली जाती है।

ताहिरा की वाक्शैली में अब कुछ कड़वाहट आ चुकी थी। उसकी नज़रें आसमान की ओर उठीं, उसने एक ठण्डी आह भरी। बोलीः या बाब! या बहाउल्लाह! या रब्बुल बहा! तू गवाह रहना। तेरे प्रेम और तेरी चाह में यह कमज़ोर बन्दी अपना देश छोड़ने पर

विवश हुई, घर-बार छूटा, परिवार तितर-बितर हो गया। यह कहते हुए उसकी आँखें डबडबा गयीं। उसने अपने आप को सँभालने की कोशिश की और फिर अचानक उसकी आपत्ति पर क्रोध की शैली प्रभावी हो गई ।

कितने बेईमान हैं आप लोग! आखिर बाब और बहाउल्लाह ने कौन सी ऐसी बात कह दी जो पिछलों ने न कही थी। न महदी के दावे में बाब पहला आदमी था। और न ही वह्य आने का दावा बहाउल्लाह ने मुस्लिम इतिहास में पहली बार किया था। इब्ने अरबी से लेकर मौलाना रूम और अब्दुल कादिर जीलानी से लेकर अहमद सरहिन्दी और शाह बलीउल्लाह देहलवी तक प्रामाणिक उलमा की एक बड़ी संख्या सत्य के अवलोकन और कश्फ और इलहाम का दावा करती रही है।

फिर मुझे बताइए कि यह न्याय का कौन सा पैमाना है कि इब्ने अरबी तो शैखुल अकबर घोषित कर दिए जाएँ, अब्दुल कादिर जीलानी को ग़ौस-ए आज़म की उपाधि मिले, शाह बलीउल्लाह अक़ीदे में पक्के होने का प्रमाण समझे जाएँ और बहाउल्लाह के मानने वालों पर दुनिया तंग कर दी जाए। आपको क्या पता देश से दूर की जिन्दगी क्या चीज़ होती है।

यह कहते हुए एक बार फिर ताहिरा की आँखें डबडबा गयीं। उसने एक बार फिर अपने आप को सँभालने की कोशिश की। संभवतः उसे यह एहसास हो चला था कि वह भावनाओं के आवेग में एक नये आने वाले मेहमान से कुछ अधिक ही कह बैठी है। उसने अपनी इस स्पष्टवादिता के लिए खेद प्रकट किया। कहने लगी शायद यह सब कुछ मुझे इस तरह नहीं कहना चाहिए था। क्षमा कीजिएगा एक विद्वान के सामने वास्तविकता प्रकट करने से अपने आप को रोक न सकी। दिल का दर्द था जो बे रोक-टोक बाहर आ गया।

ताहिरा अपने दिल का दर्द उड़ेल कर चल दी और मैं सोचता रहा कि उस्तूरा (मिथक, गल्प) में कितनी ताकत होती है, ताहिरा की तरह न जाने कितने लोग मिथकीय चिन्तन के शिकार, हब्शा की हिजरत की भावना लिए, दुनिया के विभिन्न भागों में परिस्थितियों के बदल जाने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। कैसानिया आन्दोलन से लेकर आज तक, इस्लामी इतिहास के विभिन्न मोड़ों पर न जाने कितने महदी परिस्थतियों को सुधारने के लिए सामने आए। हर महदी ने अपने मानने वालों को न केवल यह कि एक नयी परीक्षा और संकट में डाला बल्कि सदा के लिए अपने मूल से लड़ने के लिए एक नये फिरक़े की बुनियाद डाल दी। थोड़ा व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखिए तो स्पष्ट दिखाइ देता है कि अब्बासी और फ़ातिमी ख़िलाफत की स्थापना श्रेष्ठता और प्रशंसा की जिन रिवायतों के सहारे संभव हो सकी, उनकी वास्तविकता मौलिक रूप से मिथक से अधिक न थी। आगे चलकर मुसलमानों के विभिन्न गुट, चाहे वह दरोज़ी हों या अल्वी, नुसैरी हों या बहाई और कादियानी, वह जिन्हें हम अपने किब्ले वालों में गिनते हों या न गिनते हों,

वास्तविकता यह है कि उनकी हैसियत इन्हीं मिथकों के तलछट की है। कुछ लोग कहते हैं कि मिथकों का प्रभावी उपयोग हमें पलक झपकते सफल बना सकता है। जैसा कि महदी सूडानी के हाथों अंग्रेज गवर्नर जनरल गोर्डन की प्रत्यक्ष पराजय के रूप में सामने आया। लेकिन ऐसा समझना मात्र एक आंशिक सच्चाई है। अत्यधिक लोकप्रियता और सैनिक विजय के बावजूद महदी सूडानी द्वारा स्थापित की हुई सत्ता अधिक दिनों तक क़ायम न रह सकी। उस्तूरा (मिथक) वास्तव में अपने मूल में एक तरह के देवत्व की अपेक्षा करता है। जब हाड़-माँस के सामान्य इन्सानों से अपेक्षित करिश्मे प्रकट नहीं होते तो बहुत जल्दी निराशा की धुंध छाने लगती है। जनता के मन में करिश्में की भूख लगातार बढ़ती जाती है। इस तरह समझिए कि बोतल का जिन्न जब एक बार बाहर आ जाए तो उसे काबू में रखना या काम से लगाए रखना संभव नहीं होता।

# 11
# सफ़ीन–ए नजात
## (मुक्ति दिलाने वाली नाव)

इस्ताम्बोल में सुल्तान मुहम्मद फातेह का क्षेत्र अपने रहस्यों से जल्दी पर्दा नहीं उठाता। यहाँ अधिकतर वे लोग आते हैं जो रहस्यों के रहस्य की खोज में किसी जीवित करामत वाले शेख की तलाश में होते हैं और जिन्हें नृत्य और समाअ (गान) की महफिलें कुछ अधिक प्रभावित नहीं करतीं। उत्तरी दरवाज़े से चहार शम्बा बाज़ार (बुध बाज़ार) की ओर आइए और इस्माईल आग़ा मस्जिद की ओर चल पड़िए। अचानक आपको महसूस होगा कि लोगों के चेहरे मुखड़े और उनके पहनावे और चाल-ढाल बदलते जा रहे हैं। पगड़ी जैसी गोल टोपियाँ, चेहरे पर दाढ़ियों की बहार, लम्बे पूर्वी पहनावे, हाथों में तस्बीहें, जो कभी-कभी सड़क चलते हुए भी गिनी जाती रहती हैं। यह समझने में देर नहीं लगती कि यहीं कहीं निकट में प्रचार-प्रसार या उपदेश और व्याख्यान का कोई केन्द्र पाया जाता है। नक्शबन्दी सूफियों के केन्द्र की हैसियत से इस्माईल आग़ा मस्जिद को वही हैसियत प्राप्त है जो निज़ामुद्दीन (दिल्ली) में मौलाना इलियास के सूफी आन्दोलन के केन्द्र की हैसियत से बँगले वाली मस्जिद को प्राप्त है। ज़ियारत करने वालों की वैसी ही भीड़। जितने लोग आ रहे हैं उससे कहीं अधिक निरन्तर बाहर जा रहे हैं। लेकिन मस्जिद में ज़ियारत करने वालों की चहल-पहल कम नहीं होती। इस्ताम्बोल की दूसरी प्रसिद्ध मस्जिदों की तुलना में यहाँ का माहौल बिल्कुल अलग है। कोई ख़ामोश गुणगान में लीन है तो कोई किसी को ज्ञान-ध्यान का महत्व समझा रहा है। छोटे-छोटे समूहों में लोग एक-दूसरे से निःसंकोच बातें कर रहे हैं। ऐसा लगता है कि जैसे एक तरह के क़ौमी एहसास ने मस्जिद पर छाया कर रखा हो। कुछ लोग खिदमा (सेवा) के लिए तत्पर हैं जो दूर-दराज़ से आने वालों को आवश्यक जानकारियाँ और ठहरने के दौरान उनकी सुविधाओं के लिए निर्देश दे रहे हैं।

अस्र की नमाज़ में अभी कुछ समय शेष था, सोचा क्यों न शेख महमूद के बारे में मालूम किया जाए। मैंने एक पगड़ी वाले युवक से पूछा, क्या वह शेख महमूद आफन्दी को जानता है। शेख का नाम सुनकर उसका चेहरा खुशी से खिल उठा। अच्छा तो आप शेख महमूद से मिलना चाहते हैं, कहाँ से आए हैं?

हिन्दुस्तान से।

हिन्दू....स्तान! उसने हिन्दूस्तान के उ की मात्रा को कुछ देर खींचते हुए प्रश्नवाचक शैली में मेरी और देखा। फिर बताया कि शेख इन दिनों बीमारी के कारण इधर कम ही आते हैं। वह आज-कल इस्ताम्बोल के एशियाइ हिस्से में अपने आवास में अधिक समय व्यतीत करते हैं। हाँ, यदि हफ्ता दस दिन आपका इस्ताम्बोल में ठहरने का इरादा हो तो

इस बात की संभावना है कि आपको बरकत प्राप्त करने का कोई अवसर हाथ आ जाए। आज-कल बहुत से लोगों को शेख से हाथ मिलाए बिना ही वापस जाना पड़ता है। मेरे लायक़ कोई सेवा हो तो बताएँ। मैं शेख का एक मामूली सा शिष्य हूँ। वैसे क्षमा कीजिएगा यदि आप बुरा न मानें तो यह बताते चलें कि क्या आप भी नक्शबन्दी हैं, शेख महमूद से पहले भी मिले हैं। या इस्ताम्बोल की आपकी यह पहली यात्रा है।

मैंने इस सवाल को टालने की कोशिश की। पूछा शेख से बरकत प्राप्त करने का आसान तरीक़ा क्या है ?

कहने लगा, सामान्य सभाओं में उनसे मिलना कुछ कठिन नहीं लेकिन जब तक दिल और दिमाग़ पूरी तरह मिलने के इच्छुक न हों, दो-चार सभाओं में सम्मिलित हो जाने से बात नहीं बनती। हमारे दिलों पर भौतिकता का ज़ंग लग चुका है जब तक उसे रगड़-रगड़ कर पूरी तरह साफ न किया जाए, रूहानियत (आध्यात्म) का पेंट स्थायी नहीं हो सकता। बहुत से लोग केवल आते और जाते हैं। वास्तविक लाभ तो उन्हीं को मिलता है जो इस राह में लम्बा समय लगाते हैं। शेख का काम हमारे दिलों के ज़ंग को धोना और उसपर रूहानियत की क़लई चढ़ाना है। जब तक कि हम अपनी अन्तरात्मा में इस परिवर्तन के लिए तैयार नहीं होते और अपने दिल और दिमाग़ को शेख के हाथों में नहीं देते। हम आध्यात्मिक विकास के शिखर तक नहीं पहुँच सकते। शेख के हाथों पर बैअत करना मानो उन्हें इस बात का अधिकार देना है कि वह आपके परलोक की ज़मानत बन जाएँ।

परलोक की ज़मानत? मैं समझा नहीं। मैंने युवक को टटोलने की कोशिश की, जो बहुत तत्परता से मुझे एक आध्यात्मिक ग्राहक समझकर अपने शेख की बैअत के लिए राज़ी कर रहा था।

मेरी आपत्तिजनक शैली से वह कुछ चौंका। कहने लगा क्षमा कीजिएगा! आख़िरत के ज़मानतदार से मेरा तात्पर्य यह है कि शेख की हैसियत एक नाव जैसी है। रूहानियत की तलाश करने वाले तो विभिन्न रास्तों और विधियों से यात्रा करते हैं लेकिन यदि आपने शेख के हाथों में अपना हाथ दे दिया तो यह समझिए कि आप शेख की नाव पर सवार हो गए। अब यदि आप नाव पर सोते भी रहे तो आपकी यात्रा जारी रहेगी। बैअत करने में यही फायदा है।

और उनका क्या होगा जिनके हाथ शेख की बैअत से खाली रह गए? मैंने थोड़ा मासूमियत से पूछा।

संभवतः वह इस प्रश्न के लिए तैयार न था कहने लगाः उसे न तो आख़िरत में शेख का साथ मिलेगा और न ही शैखों के सुनहरे सिलसिले से उसे कोई सहायता मिल सकेगी। ऐसा समझिए कि वह सफीन-ए नजात यानी मुक्ति की नाव पर सवार होने से रह गया।

तो क्या आपकी दृष्टि में वे सभी लोग जो शेख महमूद के नक्शबन्दी सिलसिले से जुड़े हुए नहीं हैं, वह क़ियामत के दिन अल्लाह की कृपा से वंचित रहेंगे? मैंने उसे और अधिक कुरेदने की कोशिश की।

जी मैं यह तो नहीं कहता, इस सम्बन्ध में आप हमारे बड़े लोगों से बात कर सकते हैं, हाँ मुझे इतना अवश्य विश्वास है कि मुसलमानों के 72 गिरोहों में नक्शबन्दी सिलसिला ही वह गिरोह है जो नाजिया (सफल होने वाला) है। यदि आप नक्शबन्दी सिलसिले के शैखों की सुनहरी कड़ी पर विचार करें तो आपके लिए इस वास्तविकता को स्वीकार करना आसान हो जायेगा। बहुत से कश्फ वाले बुज़ुर्गों ने इस बात की गवाही दी है कि अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) ने स्वयं उन्हें नक्शबन्दी सिलसिले के सच्चाई पर होने के बारे में सूचना दी है। यही कारण है कि सन्मार्ग पर चलने वाले उलमा की इस बात पर सर्वसम्मति है कि हज़रत महदी का प्रकटीकरण नक्शबन्दी सिलसिले से ही होगा। वह लोगों को नक्शबन्दी विधि पर एकत्र करेंगे। अन्त में सच्चाई को विजय प्राप्त होगी और नक्शबन्दी मुसलमानों का हर तरफ बोलबाला हो जायेगा। युवक ने स्पष्ट किया।

और मसीह मौऊद के बारे में आपका क्या विचार है? क्या वह भी नक्शबन्दी शेख की इमामत में अपने कर्त्तव्य पूरे करेंगे? इससे पहले कि हमारी बातचीत किसी वास्तविक वाद-विवाद का रंग लेती मस्जिद में नमाज़ खड़ी होने की आवाज़ से यह सिलसिला दरहम बरहम हो गया।

नमाज़ के बाद वही युवक एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति को साथ लिए मेरे पास आया। इनसे मिलिए, ये हैं शेख हमूद, आप इनसे शेख महमूद आफन्दी और उनकी सुनहरी कड़ी के बारे में जो कुछ पूछना चाहें पूछ सकते हैं। और यदि कोई व्यक्तिगत उलझन आपको हो या अपनी आध्यात्मिक यात्रा में कोई कठिनाई महसूस करते हैं तो उस बारे में इनसे बिना किसी संकोच बात कर सकते हैं। जब तक मैं आपके लिए कहवा की व्यवस्था करता हूँ।

शेख हमूद की पगड़ीनुमा टोपी सामान्य शिष्यों से थोड़ा अलग थी। तुर्की शैली की शलवार और कमीज़ के ऊपर उन्होंने आसमानी रंग का एक लम्बा चोग़ा पहन रखा था, चेहरा दाढ़ियों से भरा हुआ। कान्वेक्स लेंस वाले चश्मे के साथ उनकी गंभीरता और खुदा की प्राप्ति में उनके ऊँचे पद का पता दे रहा था। गर्मजोशी से हाथ दबाया और थोड़ी देर तक हाथों में हाथ लिए बैठे रहे। हिन्दुस्तान से मेरे आगमन पर प्रसन्नता प्रकट करते रहे और अपनी विशेष तुर्की शैली में शब्द हिन्दुस्तान को कुछ इस तरह अदा किया जैसे उन्हें इस नाम से कुछ विशेष दिली लगाव हो। फ़रमायाः हिन्दू... स्तान मुजद्दिद अल्फसानी की धरती है। अल्लाह के यहाँ उनका बड़ा रुतबा है। उन्हें दूसरे हज़ारे (सहस्राब्दि) का मुजद्दिद बनाकर भेजा गया। नक्शबन्दी सुनहरी कड़ी में उनका ऊँचा स्थान है।

लेकिन शेख अहमद सरहिन्दी की इस ऐतिहासिक धार्मिक हैसियत पर कम ही लोगों की सहमति है। क्या ग़ैर नक्शबन्दी मुसलमान भी उन्हें इसी सम्मान का हक़दार समझते हैं? मैंने एक जिज्ञासु प्रेरित मासूमियत के साथ सवाल किया।

जी हाँ! क्यों नहीं। सारी दुनिया उन्हें मुजद्दिद अल्फसानी कहती है। क़ुरआन और हदीस में उनके आने की भविष्यवाणियाँ मौजूद हैं, उनके सच्चे मुजद्दिद होने के बारे में इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है।

जी क्या फ़रमाया! क़ुरआन और हदीस में? तो क्या क़ुरआन की कोई मुबारक आयत मुजद्दिद साहब की शान में भी अवतरित हुई है?

मेरे आश्चर्य को प्रज्वलित करते हुए उन्होंने फरमाया : एक दो नहीं दसियों (आयतें) और हदीसें तो अनगिनत हैं।

उनके इस उत्तर पर मेरा मुँह खुला का खुला रह गया। अपने दुस्साहस और कम समझी पर झुँझलाहट भी हुई कि आखिर क़ुरआन मजीद की ये आयतें मेरी निगाहों से कैसे ओझल रह गयीं। उन्होंने अपना स्वर और शैली बदली, गर्दन को थोड़ा हिलाया और फिर अउज़ू बिल्लाह (अल्लाह की पनाह) और बिस्मिल्लाह (अल्लाह के नाम से) के बाद ग़ैर अरबी कारियों की तरह क़ुरआन की इस आयत ولا رطب ولا يابس إلا فى كتاب مبين से अपने दावे को मज़बूत किया। फिर सूरः वाकिया से ثلة من الأولين و قليل من الآخرين वाली आयत पढ़ी। एक बाजी मारने वाली मुस्कुराहट के साथ मेरी तरफ देखा। फ़रमायाः आप तो अरबी भाषा जानते होंगे। हिन्दुस्तानी उलमा वैसे भी मेधावी होते हैं, बात को जल्दी समझ जाते हैं। हज़रत शाह अब्दुल क़ादिर और शाह अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी ने قليل من الآخرين से आपके व्यक्तित्व और आपके शिष्यों का तात्पर्य लिया है। अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की प्रसिद्ध हदीस إن اللہ يبعث فى ہذه الأمة على رأس كل ماة سنة من يجددلها امردينها भी आपके आगमन की सूचना देती है। और रौज़-ए कय्यूमा में विशेष रूप से एक हदीस आपके लिए ही आयी है। फ़रमायाः

يبعث رجل على أحد عشرمائة سنة هو نور عظيم إسمہ بين السلطان و
يدخل الجنة ألوفا

(अर्थात ग्यारवीं सदी के आरम्भ में दो क्रूर राजाओं के बीच एक व्यक्ति भेजा जायेगा वह मेरे ही नाम का होगा और महान प्रकाश वाला होगा और अपने साथ हज़ारों लोगों को जन्नत में ले जाएगा ।)

शेख हमूद निरन्तर दलील पर दलील प्रस्तुत किए जा रहे थे और मेरी बैचेनी लगातार बढ़ती जा रही थी। मैंने सोचा व्याख्या के मतभेद भरे दंगल में निश्चित रूप से इन्हें दक्षता प्राप्त होगी इसलिए क्यों न बुनियादी क़िस्म के सैद्धान्तिक प्रश्न किए जाएँ।

मैंने पूछा क्या कुरआन मजीद के वह व्याख्याकार जिन्होंने قليل من الآخرين (कलीलुन मिनल आखरीन) से अहमद सरहिन्दी और उनके समूह का अर्थापन किया है? कहीं स्वयं भी तो नक्शबन्दी नहीं थे ?

मेरे इस सवाल पर वह कुछ नाक भौं सिकोरे। बोले इससे क्या होता है? वह बड़े पाए के लोग थे, उनको चुनौती नहीं दी जा सकती। उनका ढंग अब रक्षात्मक हो गया था।

मैं किसी को चुनौती नहीं दे रहा हूँ बल्कि केवल यह कहना चाहता हूँ कि यदि एक नक्शबन्दी कुरआन की व्याख्या करने वाले में एक नक्शबन्दी शेख का कथन पढ़े तो यह वास्तव में इसकी व्यक्तिगत प्रवृत्ति और पक्षपात का प्रतीक है। किसी पक्ष की गवाही स्वयं उसके अपने पक्ष में दलील नहीं हो सकती।

मेरी यह बात शेख हमूद की नाजुक तबीयत पर शायद भारी प्रतीत हुई। उन्होंने अच्छे व्यवहार का दामन तो हाथ से न छोड़ा क्योंकि मुस्कुराहट अब भी उनके होठों पर स्पष्ट दिखाई दे रही थी, हाँ, उनकी बातचीत का ढंग अब दलीलों की बजाए प्रेरणा और भय दिलाने और नसीहत और एक शुभचिन्तन की हो गयी। फ़रमायाः यह दृष्टि की कृपा की बातें हैं, यहाँ दिलों की दुनिया बदली जाती है, बौद्धिक दलीलों से तो अल्लाह का अस्तित्व भी सिद्ध नहीं किया जा सकता। जिस प्रकार अल्लाह मनुष्य का एक व्यक्तिगत अनुभव है, उसी तरह अल्लाह से सम्पर्क भी दिलवालों की बातें हैं। उन्हें प्रयोग किए बिना नहीं समझा जा सकता। यह समझ कर करने का काम नहीं बल्कि करके समझने की बातें हैं।

शेख हमूद ने अपने तरकश से वह आखिरी तीर भी दाग़ ही दिया जो विवेकपूर्ण और बौद्धिक दलीलों से बचने के लिए कश्फ और करामात वाले बुजुर्ग और उनके शिष्य एक लम्बे समय से सफलतापूर्वक प्रयोग करते आए हैं।

फिर फ़रमायाः

अल्लाह से मनुष्य का सम्पर्क जितना ही मज़बूत होगा उसका आध्यात्मिक जीवन उतना ही शाश्वत आनन्द का केन्द्र बनता जाएगा। हम कुछ और नहीं करते। हम तो केवल लोगों को रास्ते पर लगा देते हैं। अब यह सब कुछ उनके संघर्ष पर निर्भर करता है कि वह इस रास्ते में कितनी तेज़ी से मंजिलें तय करते हैं। हमारे शेख महमूद आफन्दी और उनके शेख जिनका सिलसिला अबू बक्र सिद्दीक (रज़ि०) तक जा पहुँचता है, वे स्वयं बड़े-बड़े कष्ट सहे तब कहीं जाकर उन्हें अल्लाह के पास यह महान स्थान प्राप्त हुआ। यह कहते हुए अचानक उनकी शैली बदल गयी। कुछ धौंस देने के अन्दाज़ में फ़रमायाः आप जानते हैं शेख महमूद आफन्दी कौन हैं? उनकी महानता से संभवतः आप परिचित नहीं। हर साल लाखों लोग केवल शेख की झलक देखने के लिए इस्ताम्बोल की यात्रा करते हैं। हमारे शेख की नस्लें इस्लाम की सेवा में लगी रहीं। उनके दादा इस्माईल आग़ा

जिनके नाम पर इस मस्जिद का नाम रखा गया है, उस्मानी ख़िलाफत में शैखुल इस्लाम के पद पर विराजमान थे। अल्लामा ज़ाहिद अल-कौसरी का नाम तो आपने सुना होगा! जी हाँ वही अल्लामा कौसरी जिन्हें गौस-ए सानी (दूसरे गौस) भी कहते हैं। आप इस ज़मीन पर उनके अन्तिम शिष्य हैं। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें शेख महमूद के ज्ञान से लाभान्वित होने का अवसर प्राप्त हुआ।

शेख हमूद का यह मोनोलाग जारी ही था कि मैंने बात काटने के लिए क्षमा माँगी। सोचा इससे पहले कि शेख मेरी ओर से बिल्कुल ही निराश हो जायें क्यों न सूफीवाद की दुनिया के कुछ रहस्यों को स्वयं उनकी भाषा में सुने जायें।

यह तो बताइये यदि कोई नवागंतुक इस सुनहरी कड़ी से लाभांवित होना चाहे तो उसे सबसे पहले क्या करना होगा?

बहुत आसान बात है! जिस तरह कोई व्यक्ति कलिमा पढ़कर तुरन्त मुसलमान हो जाता है उसी तरह शेख से बैअत के माध्यम से आप तुरन्त इस सुनहरी कड़ी का अंग बन जाते हैं। इसके बाद शिष्य का काम समाप्त हो जाता है और शेख का काम प्रारम्भ हो जाता है। शेख उसके दिल को साफ और रौशन करता है और उसे उसकी क्षमता के अनुसार गुणगान के लिए दुआएँ बताता है। देखिए मूल उद्देश्य तो अल्लाह के साथ सम्पर्क है लेकिन यह चीज़ पैग़म्बर (सल्ल०) से सम्पर्क के बिना प्राप्त नहीं हो सकती और फिर पैग़म्बर से सम्पर्क के लिए आवश्यक है कि उसके निर्धारित किए हुए आध्यात्मिक ख़लीफाओं से आपका गहरा सम्बन्ध हो। मानो शेख से प्रेम अल्लाह के प्रेम के लिए आवश्यक है क्योंकि उसके निर्धारित किए हुए आध्यात्मिक खलीफाओं से आपका गहरा सम्बन्ध हो। जैसे शेख का प्रेम अल्लाह का प्रेम और उसका आज्ञापालन है। एक बार आप इस सम्बन्ध में जुड़ गए तो यह भी संभव है कि आपसे लोगों के जोड़ने का काम लिया जाए। मैं पिछले 25 वर्षों से शेख के सम्पर्क में हूँ। विभिन्न जगहों पर उनके प्रतिनिधित्व का कर्त्तव्यनिर्वाह कर चुका हूँ। शेख मुझसे विशेष लगाव रखते हैं। जब मैं पिछले जीवन का मूल्याकंन करता हूँ तो मेरे मुँह से आभार प्रकट करने के लिए दुआएँ निकलने लगती हैं क्योंकि अल्लाह ने मुझे सुन्नत पर चलने की कृपा प्रदान की, मैंने 15 वर्ष से बिना वजू के कदम बाहर नहीं निकाला, 25 वर्ष पहले जब इस श्रंखला में सम्मिलित हुआ था तब से पश्चिमी लिबास को शरीर से नहीं लगाया, पाजामे कभी टखने से नीचे नहीं हुए, आप हमारी जेब में मिस्वाक भी देख रहे हैं। सुन्नत पर अमल करने की यह सब आदत बस यह समझिए कि शेख से बैअत करने का करिश्मा है। उन्होंने मेरे दिल की दुनिया बदल डाली।

शेख हमूद अपने व्यक्तिगत जीवन के यह विवरण बताते हुए कुछ भावुक से हो गए। उनके मुँह से अकस्मात निकलाः अपनी कृपाएँ अवतरित कर, ऐ अल्लाह खाज़गाने

नक्शबन्द पर और हमें शेख महमूद आफन्दी का प्रेमपूर्वक अनुकरण करने की कृपा प्रदान कर।

मैंने शेख हमूद का आभार प्रकट किया। विदाई की अनुमति माँगी। लेकिन वह इतनी आसानी से कब मानने वाले थे। हिन्दुस्तान से कोई मुसलमान इस्माईल आग़ा तक पहुँचकर भी नक्शबन्दी सिलसिलले में सम्मिलित होने से रह जाए, यह उन्हें मंजूर नहीं था। कहने लगे प्रकृति एक विशेष योजना के अन्तर्गत आपको यहाँ लायी है। क्या पता उसे आपसे कोई बड़ा काम लेना हो। परसों जुमे की रात है। वैसे तो शेख महमूद इन दिनों अपनी बीमारी के कारण मेहमानों से भी नहीं मिलते, लेकिन पाकिस्तान से दावत-ए इस्लामी का एक प्रतिनिधिमण्डल इन दिनों इस्ताम्बोल में है और संभावना है कि कल शेख महमूद उसे कुछ पलों के लिए भेंट की अनुमति दें। यदि आप चाहें तो मैं आपको भी साथ लिए चलूँ। यह एक दुर्लभ अवसर है और शेख सुबह का चिराग़ हैं।

मैंने कहा यदि बात करने का अवसर नहीं और बात केवल हाथ चूमने की है तो यह सौभाग्य तो मुझे आप जैसे प्रामाणिक प्रतिनिधि के माध्यम से प्राप्त हो ही गया है। हाँ, इस हफ्ते किसी सोहबत में भाग अवश्य लूँगा। क्या पता दिल की कोई गाँठ खुल ही जाए।

# 12
# अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल0)
## से फोन पर बातचीत

जामेअ इस्माईल आग़ा से समुद्र तट की ओर जिसे पर्यटकों की भाषा में गोल्डन हार्न और स्थानीय भाषा में ख़लीज(खाड़ी) कहा जाता है, मेरे लिए एक जाना पहचाना क्षेत्र है। संभवतः इसका एक कारण यह हो कि छात्र जीवन में जब अवलोकन की भावना कहीं तीव्र होती है, इस्ताम्बोल के इस भाग पर मुझे इतिहास के सोये होने का एहसास कुछ अधिक तीव्रता से हुआ। मस्जिद मुहम्मद फातेह से निकलकर उसके पीछे परम्परागत शैली के बाज़ार और ऐसे कहवाख़ाने जिनपर कारवाँ सराय जैसा गुमान होता है और जहाँ बैठकर कभी ऐसा महसूस होता है जैसे अभी-अभी यहाँ से कोई कारवाँ गुज़रा हो। यहाँ परम्परागत पूरबी शैली के प्यालों में शोरबे के स्वाद पर भी 16वीं सदी का गुमान होता है और उन दिनों की याद ताज़ा हो जाती है जब खुराक का सम्बन्ध स्वाद से अधिक गहरा था और जब खाना खाने का काम एक आनन्दमय अनुभव हुआ करता था और जिसके परिणामस्वरूप अपनी परिस्थिति की भाषा और मुँह की भाषा से अकस्मात सब्र और आभार के शब्द निकल पड़ते थे। खाड़ी के तटों पर छोटी-छोटी नौकाओं में ताज़ा मछलियों के सैण्डविच खाइए। गिलास दो गिलास सन्तरे के शुद्ध रस का आनन्द लीजिए और ताज़ादम होकर क़ायनात के अवलोकन में लग जाइए। पूरब और विशेष रूप से इस्लामी दुनिया में जहाँ भी जाइए, आज भी खान-पान पर एक आनन्दमय अनुभव का एहसास होता है। तकनीक की मिलावट जहाँ जितनी कम है या यह कहिए कि आर्गेनिक खानों की सुविधा जहाँ जितनी शेष रह गयी है वहाँ खाना खाना एक यान्त्रिक प्रक्रिया की बजाए आज भी आभार प्रकट करने का एक माध्यम है। खासतौर पर पूर्वी देशों में फर्श पर बिछाए गए दस्तरखान पर जहाँ पूरे घर के लोग अल्लाह के प्रदान किए हुए उपहार को सलीके से रखते और मिलबाँट कर केवल खाने में ही भागीदारी नहीं करते बल्कि जीवन की खुशियों और परेशानियों को एक-दूसरे से साझा करते हैं। इसका वास्तविक मूल्य वह पश्चिम वाले नहीं समझ सकते जहाँ बर्गर और सैण्डविच खाकर ऐसा लगता है जैसे अल्लाह ने हमें नेमत न दी हो बस खड़े-खड़े टरका दिया हो। लन्दन में टूटनहम कोर्ट रोड से गुजरते हुए सैण्डविच की दुकानों पर लोगों की भीड़ देखकर अधिकतर यह विचार मन में आता है कि टोना फिश के ये सैण्डविच जो दो-चार दिनों से ठण्डी अलमारियों में किसी की राह देख रहे हैं, खाने वालों का पेट तो भर सकते हैं, उनपर सब्र और शुक्र के वह भाव पैदा नहीं कर सकते। सेल्ज बरी की सिम्पली फूड की दुकानों

से कटे-कटाए फलों की ठण्डी काशें (टुकड़े) उस आनन्द और खुशी से वंचित रखती हैं जो पेड़ से फल तोड़कर खाने में महसूस होता है क्योंकि इन्सान पेड़ से फल तोड़ते समय प्राकृतिक रूप से अपने अन्दर इस कायनात और उसके रचयिता से एक गैर महसूस रिश्ता प्राप्त करता है। सोचा क्यों न रात का खाना इसी क्षेत्र में खाया जाए जहाँ पुराने स्वाद की सुगन्ध अभी बची हुई है।

मुस्तफा ऊग्लू अभी रास्ते में थे। तय हुआ कि इस्माईल आग़ा के उसी कहवाखाने में उनकी प्रतीक्षा करूँ। उस रेस्तराँ पर कहवाखाने का आरोप बेवजह लगाया गया था क्योंकि यहाँ कहवा से कहीं अधिक विभिन्न किस्म के खानों की तेज़ खुशबू आ रही थी। एक कोने में खामोश टेलीविजन चल रहा था और एक आह्लादपूर्ण सूफी संगीत ने माहौल पर मस्ती का प्रभाव क़ायम कर रखा था। कहवाखाने के बाहर सटे हुए क्षेत्र में साफ सुथरी कुर्सियाँ, सफेद मेज़पोशों के चारों ओर सजी थीं। अन्दर से कहीं अधिक बाहर चहल-पहल का माहौल था। मैं अभी यह फैसला न कर पाया था कि किधर बैठू कि बाहर बैठे हुए कुछ नौजवानों की बात-चीत से ऐसा लगा जैसे वह उर्दू भाषा में बात कर रहे हों। कुछ आश्चर्य और खुशी के साथ नज़र उठायी, उनमें से एक नौजवान बढ़कर मेरी तरफ आया और सलाम के बाद हाथ मिलाने के लिए हाथ बढ़ाया।

क्या आप शेख महमूद के शिष्य हैं? उसने जानना चाहा। हम लोग शेख महमूद से मिलने के लिए कैनेडा से आए हैं। आपको देखकर ऐसा लगा शायद आपका सम्बन्ध भी पाकिस्तान से हो।

पाकिस्तान से तो नहीं हाँ, हिन्दुस्तान से अवश्य है, मैंने स्पष्ट किया।

एक और तुर्की कहवा का आर्डर दिया गया और वतन से दूर एक ही भाषा बोलने वाले नौजवानों के अनुभव को समझने और उनसे लाभ प्राप्त करने का एक अवसर हाथ आ गया। इस्ताम्बोल के इस भाग में जहाँ टोपियों और दाढ़ियों की अधिकता है और आपस में विश्वास और भाई-चारे का माहौल पाया जाता है। जीवन की विद्युत गति से बदलाव का प्रभाव यहाँ कम महसूस होता है। जब भी आइए जितने दिनों बाद भी आइए, इस्ताम्बोल के इस भाग का वही पुराना रंग और आहंग बरकरार रहता है। यह क्षेत्र महमूद आफन्दी का प्रभाव क्षेत्र है, जिनके आध्यामिक साम्राज्य का क्षेत्र बहुत व्यापक है। जिस तरह इस्ताम्बोल में मौलाना कहने से मौलाना-ए रूम का व्यक्तित्व उभर कर सामने आता है उसी तरह यहाँ हज़रत की उपाधि शेख महमूद के सामान्य सम्मान और श्रद्धा का प्रतीक है। हैज़रत (हज़रत) महमूद आफन्दी का प्रसिद्ध नाम जबान पर लाते हुए शिष्यों के चेहरे पर श्रद्धा और सम्मान की एक भावना उभर आती है, हाथ सीने की ओर उठते हैं, बिल्कुल उसी तरह जैसे शीया लोग मुहम्मद (सल्ल०) की सन्तान पर दुरूद, सलाम भेजते हुए सम्मान प्रकट करने के लिए हाथ सीने तक लाते और सिर को आगे की ओर हल्का सा हिला देते हैं। शिष्यों की दृष्टि में हज़रत का सम्बन्ध भी मुहम्मद

(सल्ल०) की सन्तान से है। उनके कश्फ और इल्हाम की कहानियाँ प्रचलित हैं। कहा जाता है कि इस्माईल आग़ा मस्जिद में शिक्षा और मार्गदर्शन का नवोत्थान इसी इल्हाम के कारण है। एक दिन उन्हें यह इल्हाम (ईशवाणी) हुआ, बल्कि कह लीजिए कि आदेश हुआ और तब वह बैअत और मार्गदर्शन की टूटी कड़ियों को नये सिरे से जोड़ने के लिए उठ खड़े हुए। देखते-देखते हज़रत के शिष्यों की संख्या लाखों में जा पहुँची। आप चाहे इस्ताम्बोल से कितनी ही दूरी पर क्यों न हों, पूरब में हों या पश्चिम में, हज़रत का थोड़ा सा ध्यान आपकी तसल्ली के लिए पर्याप्त हो सकता है।

कहा जाता है कि पिछले दिनों हज़रत के शिष्यों को यह सूचना मिली कि उम्र के अन्तिम चरण में हज़रत की यह इच्छा है कि वह उमरा के लिए जाएँ। कोई चालीस हज़ार शिष्य उनके साथ जाने के लिए तैयार हो गए। चार्टर्ड वायुयानों की व्यवस्था की गयी। हरम के चारो ओर के सभी महत्वपूर्ण होटलों की बुकिंग की योजना बन गयी। हमें यह तो नहीं मालूम कि वास्तव में साथ कितने लोग गए लेकिन स्वयं इन आँखों ने मदीना मुनव्वरा में हज़रत के हटो बचो का जो दृश्य देखा उससे उलमा और शैखों के असाधारण सामाजिक सम्मान मन में फिर से ताज़ा हो गये जो सल्जूकियों के युग के विवरणों में पढ़ रखे थे। कहा जाता है कि सल्जूकी युग के कुछ बड़े उलमा जब बाहर निकलते तो उनके हमसफर वर्दी पहने हुए उलमा की एक बड़ी फौज होती। हटो-बचो के इस हंगामें में शेख पर नज़राने (चढ़ावे) लुटाए जाते; अशर्फियों की बारिश होती और मूर्ख जनता हाथ चूमने के लिए बल्कि क़दम चूमने के लिए एक-दूसरे पर पिल पड़ती और यदि भीड़ के कारण क़दम चूमने का अवसर न मिलता तो जिसके हाथ जो कुछ लगता उसे ही चूम लेने को पर्याप्त समझता। कुछ लोग शेख के घोड़े की पूँछ को चूम लेना भी अपने लिए उतना ही बड़ा सौभाग्य समझते। मदीना में हज़रत महमूद आफन्दी की व्हील चेयर के चारों ओर हटो-बचो का कुछ ऐसा ही हंगामा था। शेख के वर्दीधारी सैकड़ों शिष्यों ने पगड़ी जैसी सफेद टोपी और सफेद जुब्बा पहने हुए शेख के दैवीय सम्मान और आध्यात्मिक महानता का सिक्का बिठाने के लिए हटो बचो का जो दृश्य स्थापित कर रखा था, ऐसे दृश्य तो शासकों के आगमन पर भी देखने को नहीं मिलते। आज हज़रत के शिष्यों में उठते-बैठते हुए यह प्रश्न बार-बार मेरे मन में आता रहा। अब जो पाकिस्तानी मूल के कनाडाई नौजवानों का यह समूह इस्ताम्बोल के इस कहवाखाने में दिखाई दिया तो इस प्रश्न की धार और तेज़ हो गयी।

तुर्की कहवा का पहला घूँट नये पीने वालों के लिए कड़वाहट भरा होता है लेकिन धीरे-धीरे उसकी कड़वाहट मजा देने लगती है। कहवा के दो चार घूँट ने जब साथ होने और निःसंकोच होने का माहौल बना दिया तो मैंने हाशिम से पूछा, हज़रत महमूद का शिष्य बनने का सौभाग्य उसे कब से प्राप्त है? इससे पहले कि हाशिम कुछ कहते वलीद, जिसकी उम्र लगभग 20-22 साल होगी, उसने हस्तक्षेप करते हुए बहुत बेरुखी से कहा,

अभी तो यह एक शेख की तलाश में हैं। कोई पहुँचा हुआ शैख, यदि आप भी किसी ऐसे शेख से परिचित हों तो बताइए।

अरे इनकी बातों पर मत जाइए, यह हर बात को मज़ाक बना लेते हैं। हाशिम ने गंभीरता और शिष्टता के साथ अपनी इस्ताम्बोल यात्रा से कुछ इस तरह परिचय करायाः मैं, वलीद और साजिद और हमारे एक और मित्र अब्दुल अज़ीज़ जो इस समय अन्क़रा में किसी रिश्तेदार से मिलने के लिए गए हुए हैं। हम लोग कनाडा से विशेष रूप से हज़रत महमूद से भेंट के लिए आए हैं। वहाँ कनाडा में लगभग 2 वर्ष हुए हम लोग नक्शबन्दी सिलसिले से जुड़ गए। शेख हिशाम कब्बानी को तो आप जानते होंगे, वही हिशाम कब्बानी जो शेख नाज़िम हक्कानी नक्शबन्दी कबरसी (साइप्रस वाले) के प्रतिनिधि हैं। हम लोग उनके शिष्यों की परिधि से जुड़े रहे, बल्कि अब भी हैं। लेकिन पिछले दिनों कुछ घटनाएँ ऐसी हुईं जिन्होंने हमारी शान्ति को भंग कर दिया। शेख हिशाम ने अपने अधिकारों की सीमा लाँघी। वह शेख नाज़िम की बजाए अपनी बैअत लेने लगे। इस स्थिति ने उनके कुछ साथियों को विरोध पर आमादा कर दिया। अब एक दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप का सिलसिला चल रहा है, एक दूसरे की करामतों का इन्कार, कश्फो करामत के नये दावे। हमारी तरह बहुत से नये शिष्यों के लिए यह समझना कठिन है कि वास्तव में किसका कश्फ सच्चा है और किसका झूठा। बैअत का अधिकार अल्लाह के पैग़म्बर ने वास्तव में किसे दिया है। पिछले दिनों इस्ताम्बोल से कुछ लोग हमारे केन्द्र में गए थे, उन्हीं के मुँह से शेख महमूद की आध्यात्मिक महानता के बारे में सुना और पता चला कि दुनिया अभी सच्चे लोगों से खाली नहीं। हमारे आए हुए एक सप्ताह हो चुका है। 40 दिन ठहरने का इरादा है। मस्जिद इस्माईल आग़ा में बड़ा नूरानी और आध्यात्मिक माहौल है लेकिन अभी तक हमें शेख महमूद से मिलने का अवसर प्राप्त नहीं हो सका। आप जानते हैं वह इन दिनों बीमार रहते हैं।

वलीद जो हमारी इन बातों को कभी बेपरवाही और कभी ध्यान से सुनता था, कहने लगा, मैंने आपको शेख हमूद के साथ मस्जिद में बात करते हुए देखा था। वास्तव में वह बड़े अच्छे आदमी हैं, उन्हें दीन की बहुत मालूमात है। क्या आप हज़रत के पुराने मुरीद (शिष्य) हैं?

नहीं! मैं भी आप ही की तरह एक मुसाफिर हूँ, मुझे भी एक शेख की तलाश है। मैंने मुस्कराते हुए कहा।

इसी दौरान मुस्तफा ऊग्लू हम लोगों से आ मिले। कहने लगे मैं जब भी किसी शेख की तलाश में निकला हर बार मुझे ऐसा लगा जैसे वह करामत वाले शेख स्वयं हमारे अन्तःकरण में मौजूद हो। केवल उसे गतिमान करने की आवश्यकता है। बाहर के सभी शेख केवल ऊपरी तौर पर शेख हैं। उनकी अन्तःकरण ख़ाली है क्योंकि यदि उनकी अन्तरात्मा प्रकाशित हो तो वह अपने आप को शेख के पद पर आसीन नहीं कर सकते,

न किसी की बैअत ले सकते हैं, न किसी को मुरीद बना सकते हैं और न ही किसी की मुक्ति के लिए ज़मानतदार बन सकते हैं। इन कामों के लिए बड़ी क्रूर हृदयता की आवश्यकता होती है।

मुस्तफा ऊग्लू के शब्द पाकिस्तानी नौजवान के लिए धमाके से कम नहीं थे। विशेष रूप से हाशिम के लिए ये शब्द बड़े कष्टदायक थे। हाँ, वलीद को अपने सन्देह प्रकट करने का अवसर मिल गया जिसे संभवतः अब तक वह शील संकोच के कारण छिपाये बैठे थे। कहने लगे : भाई मुस्तफा! क्या तुम शेख नाज़िम कबरसी को जानते हो, उनके केन्द्र अमेरिका और कनाडा में हैं और लन्दन में भी उनका एक बड़ा केन्द्र है जिसे वर्षों पहले ब्रूनाई के शेख ने उनके लिए खरीदा था। शेख नाज़िम अपने आप को नक्शबन्दी सिलसिले की चालीसवीं कड़ी बताते हैं और चालीस का महत्व तो आप जानते ही हैं। चालीसवीं पीढ़ी पर उनका नस्लीय सिलसिला अल्लाह के पैग़म्बर से जा मिलता है। अभी कुछ वर्ष पहले जब वह घर से निकल रहे थे, उनके यहाँ अचानक अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) स्वयं अपने शरीर के साथ पधारे। उनकी खुली आँखें उस दृश्य को सहन न कर सकीं, वह बेहोश होकर गिर पड़े। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने चार-पाँच घण्टे तक उनसे मुलाकात की और उन्हें इस बात से अवगत कराया कि नक्शबन्दी सिलसिला ही मुक्ति प्राप्त करने वाला सम्प्रदाय है और यह कि भविष्य का महदी भी इसी नक्शबन्दी सिलसिले से होगा। यहाँ तक तो हम लोग शेख के कश्फ और करामात पर विश्वास करते रहे लेकिन पिछले दिनों एक आश्चर्यजनक घटना घटित हुई जिसकी रिपोर्ट अल-जज़ीरा टीवी पर भी आई थी। शेख ने यह दावा किया कि उन्होंने फोन पर अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से बातचीत की है। हम नौजवानों के लिए यह बात मानसिक बैचेनी का कारण बनी और इससे बढ़कर यह कि जब उनके आन्तरिक झगड़े सामने आए, नक्शबन्दी सिलसिले के पदाधिकारियों की आपसी लडाइयाँ जब हमारे सामने आयीं तो हमारी श्रद्धा का घड़ा चूर-चूर हो गया। सच पूछिए तो मुझे अब इन किस्सों कहानियों पर कुछ अधिक भरोसा नहीं रहा। हाँ, यह हमारे दोस्त हाशिम और साजिद हैं जो कहते हैं कि अल्लाह की ज़मीन कभी अल्लाह वालों से खाली नहीं रहती, वली (अल्लाह के दोस्त) के बिना यह क़ायनात कायम नहीं रह सकती। इसलिए हमने सोचा कि इस बार छुट्टियों में इस्ताम्बोल की खाक छानी जाए, मैं तो शेख वेख के चक्कर में अब नहीं आने वाला, लेकिन एक बार शेख महमूद से मिल लेने में कोई नुकसान भी नहीं। उनके बारे में यहाँ बहुत अच्छी राय पायी जाती है। उनके मुरीद अधिकतर सुन्नत पर अमल करते हैं, अधिकतर की दाढ़ियाँ हैं और अधिकतर लोग टख़नों के ऊपर शलवार पहनते हैं। मिस्वाक का इस्तेमाल भी सामान्य है, औरतें मर्दों से अलग बुर्का में रहती हैं और ग़ैर महरम (वह लोग जिनसे विवाह करना हराम नहीं) से हाथ मिलाने का चलन भी नहीं दिखता। यहाँ तक तो बात ठीक लगती है अब देखिए आगे क्या होता है।

तुम हर बात को संदेह से आरम्भ करते हो। यह रवैया ठीक नहीं। हाशिम ने चेतावनी देते हुए कहा। सच्चे अल्लाह वाले अपनी करामात के माध्यम से लोगों के सन्देह का पता लगा लेते हैं और जिन लोगों के दिल सन्देहों के भंडार होते हैं, शेख उनपर ध्यान नहीं देते। यह दिलवालों का पुराना उसूल है कि जब तक अल्लाह को चाहने वाले में मिलने की इच्छा विशुद्ध न हो, उसकी ओर कृपा दृष्टि नहीं की जाती। सन्देहों की मिट्टी में भरोसे का पौधा फूल और फल नहीं लाता। यदि तुम शेख की ओर से चाहते हो कि वह तुम पर ध्यान दें तो तुम्हें अपने दिल को सन्देहों और इस तरह के शैतानी वसवसों से साफ करना होगा।

लेकिन यह बात तो मालूम करनी ही होगी कि यदि सच्चाई नक्शबन्दी रीति के साथ है तो वह कौन सा नक्शबन्दी तरीक़ा है, शेख नाज़िम कबरसी का या हज़रत महमूद आफन्दी का? मुस्तफा ऊग्लू ने मामले को और ख़राब करने की कोशिश की।

वैसे आप किससे बैअत हैं? हाशिम ने मुस्तफा ऊग्लू से जानना चाहा।

मुझे क्या आवश्यकता है कि मैं किसी से बैअत करूँ?

अरे! ............... हाशिम के मुँह से अचानक निकला। आपको मालूम नहीं कि जिसका कोई शेख नहीं होता। शैतान उसका शेख बन जाता है।

यह आप कहाँ से ले आये? मुस्तफा ऊग्लू मन ही मन मुस्कुराए ।

जी! आपको मालूम नहीं यह हदीस में है।

हदीस में ?

जी हाँ! और एक हदीस में तो यहाँ तक आया है कि जिस मुसलमान की गर्दन बैअत से खाली रही और वह उसी दशा में मर गया तो ऐसे व्यक्ति की मौत अज्ञानता (कुफ़्र) की मौत होगी।

लेकिन इस्लाम में बैअत तो केवल समय के ख़लीफा (शासक) के लिए है। यह हम जैसे लोगों को बैअत लेने का अधिकार कहाँ से प्राप्त हो गया? मुस्तफा ऊग्लू ने अपने सवाल की धार कुछ और तेज़ कर दी।

देखिए मैं अधिक तो नहीं जानता लेकिन इतना अवश्य जानता हूँ कि सादात (पैग़म्बर की सन्तान) को हम मुसलमानों के आध्यात्मिक प्रशिक्षण का कर्त्तव्य स्वयं अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने सौंपा है और यह बैअत का सिलसिला कोई नयी बात तो है नहीं। पीरों के पीर शेख अब्दुल कादिर जीलानी से लेकर दाता गंजबक्श, मोईनुद्दीन चिश्ती, मुजद्दिद अल्फ-सानी, शाह वलीउल्लाह और जितने भी बड़े-बड़े नाम हैं वह किसी न किसी शेख से बैअत रहे हैं। बैअत के बिना आपकी हैसियत उस कटी पतंग की होती है जिसे शरारती बच्चे लावारिस समझकर लूट लेते हैं, हाशिम ने अपनी बात का सिलसिला जारी रखा।

और इसमें कृपा प्राप्त करने का भी तो लाभ है। साजिद जो अब तक खामोशी से यह सब कुछ सुन रहे थे और जिसके अंदाज़ से लगता था कि वह इन समस्याओं से अनभिज्ञ हैं, उसने भी हस्तक्षेप करना आवश्यक समझा।

कृपा? कृपा तो पीर के व्यक्तित्व को पहुँचती है, मुरीदों के चढ़ावे से, मुस्तफा ऊग्लू ने शरारत भरी मुस्कुराहट के साथ कहा।

देखिए बुजुर्गों की प्रतिष्ठा में ऐसी दुस्सहास भरी बातें नहीं कहनी चाहिए। हाशिम ने विरोध प्रदर्शन करते हुए कहा।

उन्हें हमारे चढ़ावों की आवश्यकता नहीं। अल्लाह ने उनके लिए पूरब और पश्चिम और उत्तर और दक्षिण उनके हाथों में वशीभूत कर रखा है कि शेख नाज़िम के ध्यान देने से बहुत से लोगों के जीवन बदल गये। केवल उनके जीवन सुन्नत के अनुसार नहीं हुए बल्कि शेख की दुआओं और कृपा के कारण उनकी आर्थिक दशा भी बेहतर हो गयी। मेरे एक मित्र हैं तालिब हुसैन, वह भी शेख के मुरीदों में से हैं। उनके परिवार को कराची से कनाडा स्थानान्तरित होना था। दो वर्ष से काग़ज़ी कार्यवाही ठप्प थी। हर बार अन्तिम चरण में कोई न कोई मामला आकर फँस जाता था। उन्होंने शेख से दुआओं की प्रार्थना की और शेख ने उन्हें एक महीने के अन्दर काम हो जाने की शुभ सूचना सुनायी। अभी तीसरा ही दिन था कि हाई कमीशन से क्लीयरेन्स का फोन आ गया। दुआएँ कबूल होने की ऐसी मिसालें तो दसियों हैं। जो लोग अल्लाह को पाने के प्रयास के मार्ग में आगे चल निकलते हैं, उनके लिए केवल शेख की ओर ध्यान लगाना ही पर्याप्त होता है। आप दुनिया के किसी भी हिस्से में बैठकर अपने शेख से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं।

हाँ, यदि शेख के पास भी मोबाइल हो, मुस्तफा ऊग्लू ने फिर शरारत भरा हस्तक्षेप किया।

क्षमा कीजिएगा आप इन बातों से बिल्कुल ही अनभिज्ञ मालूम होते हैं। दिलवालों के यहाँ सम्पर्क एक शब्दावली है और यह उस ज़माने से है जब मोबाइल तकनीक अस्तित्व में नहीं आयी थी। मुरीद जब अपने शेख की ओर एकाग्र होकर ध्यान लगाता है या यह कहिए कि शेख की कल्पना को वह जितना अधिक प्रेरित करता है उतनी ही तेज़ी से और तीव्रता के साथ शेख को भी अपने मुरीद की परेशानी का ज्ञान हो जाता है और वह तुरन्त उसकी सहायता के लिए आ मौजूद होता है। जी हाँ, अपने शरीर के साथ, खून और माँस के साथ। और यह शेख अपने शैखों के माध्यम से और कभी सीधे भी अल्लाह के पैग़म्बर के सम्पर्क में होता है। बल्कि अल्लाह तआला से भी सीधे उसका सम्पर्क होता है। यही कारण है कि अल्लाह वालों को दुनिया की कोई ताकत झुका नहीं पाती। मुरीद प्रत्यक्ष रूप से एक साधारण मनुष्य है लेकिन वह अपने शेख के सम्पर्क में होने के कारण समय का कुतुब और सभी बुजुर्गों से जुड़ा होता है। पीर (शेख) के हाथ

में हाथ देकर मानों वह अल्लाह की मदद का हक़दार हो जाता है। इसीलिए तो हमारे पूरब के शायर (अल्लामा इकबाल) ने कहा है:

हाथ है अल्लाह का बन्द-ए मोमिन का हाथ
गालिब व कार आफरींकार कुशा कार साज़ ।

खैर पूरब के शायर को छोड़िए मैं उर्दू भाषा से अवगत नहीं इसलिए शायरी को समझ नहीं सकता। यह बताइए कि यह कुतुब साहब जिनके दम से दुनिया की व्यवस्था क़ायम है या जो इस दुनिया को चला रहे हैं तो वह कहाँ पाये जाते हैं और वह संसार को इतनी बुरी दशा में क्यों चला रहे हैं? मुस्तफा ऊग्लू से हाशिम की यह ईमान भरी बातें सहन न हो सकीं।

देखिए यदि आप वास्तव में गंभीर हैं तो मैं बातचीत को आगे बढ़ाऊँ अन्यथा दीन के मामलों में मज़ाक करना ठीक नहीं।

मुस्तफा ऊग्लू पर चेतावनी प्रभावकारी रही। उन्होंने पैंतरा बदला और पूरी तरह क्षमा याचना करते हुए कहने लगे : क्षमा कीजिएगा मेरा उद्देश्य अल्लाह की कारगुज़ारी पर आपत्ति करना नहीं। मैं तो केवल यह जानना चाहता हूँ कि कुतुब और अबदाल की उपस्थिति का पता हमें कहाँ से चला?

उन्हीं बुजुर्गों से जिनके प्रयासों से हम और आप मुसलमान हैं। उन्होंने ही हमें इस बात की सूचना दी है। क्या आपने इब्ने अरबी का नाम नहीं सुना, सारी दुनिया उन्हें शैख-ए-अकबर के नाम से जानती है। उन्होंने हमें इस बात की सूचना दी है कि दुनिया की व्यवस्था चलाने के लिए अल्लाह ने आध्यात्मिक लोगों की जो टीम बनायी है, उसमें कुतुब सबसे ऊँचे स्थान पर हैं, जिनके अन्तर्गत दो इमाम, चार अवताद (खम्भे), सात अबदाल, बारह नकीब और आठ नजबा काम कर रहे हैं। अली अल-हजवीरी ने 300 भले लोग, 40 अबदाल, 7 नेक लोग, 4 अवताद और 3 नकीब को कुतुब की निगरानी में सक्रिय बताया है।

इन दोनों लोगों की जानकारी का स्रोत क्या है? मुस्तफा ऊग्लू, जिन्होंने अब आलिमों जैसी गंभीरता अपना ली थी, ने पूरी तरह गंभीरतापूर्वक पूछा।

अब आप इन लोगों पर भी आपत्ति करने लगे। यह तो इस्लाम के स्तम्भ की हैसियत रखते हैं, कश्फ और करामात के बुजुर्ग हैं, उनके कथनों को यदि दीन से निकाल दिया जाए तो शेष क्या रह जायेगा?

खुराफात के अतिरिक्त सब कुछ, मुस्तफा ऊग्लू फिर पुराने रंग में आ गए।

क्षमा कीजिएगा। आप मुझे कुछ धर्म-विरोधी जैसे लगते हैं। आपके दिल बुजुर्गों के सम्मान से बिल्कुल खाली हैं। आप या तो धर्मविहीन हैं या वहाबी और मैं दोनों ही से बहस करने को बेकार समझता हूँ। हाशिम को क्रोध में आते देखकर मैंने हस्तक्षेप आवश्यक समझा।

देखिए यह न तो धर्म-विरोधी हैं और न ही वहाबी। उनकी कार ने सूफ़ी गानों की सीडीज सुन-सुन कर मैं परेशान हो गया हूँ और फिर हमारा उद्देश्य तो समझना-समझाना, एक-दूसरे से लाभ उठाना और एक-दूसरे के दुख-दर्द को बाँटना है। अल्लाह वालों को वैसे भी क्रोध शोभा नहीं देता। धर्म विरोधी और वहाबी ही तो आपके निमन्त्रण के हक़दार हैं।

मेरी बातों से हाशिम का क्रोध कुछ ठण्डा तो हुआ लेकिन वह फिर से यह विषय ले बैठे कि सन्देहों की ज़मीन में विश्वास का बीज फूल और फल नहीं लाता। कहने लगेः शैखुल हदीस मौलाना ज़करिया ने लिखा है कि अल्लाह तआला जब किसी व्यक्ति को भटकाना चाहता है तो वह उसका दिल अल्लाह वालों के लिए द्वेष से भर देता है। मौलाना रशीद अहमद गंगोही ने भी लिखा है कि जो लोग अल्लाह वालों की शान में गुस्ताखी करते हैं उनका अन्त ईमान पर नहीं होता, यदि तुम उनकी कब्रें खोलकर देखोगे तो पाओगे कि उनका चेहरा किब्ले से मोड़ दिया गया है।

क्षमा कीजिएगा! आप ग़लत समझे। मुस्तफा ऊग्लू ने फिर मामले को पटरी पर लाने की कोशिश की। मेरा उद्देश्य अल्लाह वालों की निन्दा करना नहीं। मैं तो स्वयं अल्लाह वालों का श्रद्धालु हूँ। भला अल्लाह जिसे अपना दोस्त कहे उसके विरुद्ध कोई मुसलमान कैसे सिर उठा सकता है। लेकिन यह तो पता चले कि हम जिस व्यक्ति को अल्लाह का मित्र (वली) समझे बैठे हैं, वह वास्तव में अल्लाह का मित्र कहलाने का हक़दार है? आखिर वली की पहचान कैसे होगी?

वली (अल्लाह का मित्र) की पहचान के लिए वली होना आवश्यक है। क्योंकि वली ही वली को पहचान सकता है, हाशिम ने स्पष्ट किया।

फिर सामान्य लोगों पर यह गाँठ कैसे खुलेगी कि एक वली ने दूसरे वली के बारे में जो कुछ कहा है वह उचित है? मुस्तफा ने निर्दोष बनकर पूछा।

जी इसके लिए आवश्यक है कि आप या तो अल्लाह वालों की बातों पर ईमान लायें या फिर स्वयं उस मार्ग पर चलकर अल्लाह की दोस्ती के पद पर प्रतिष्ठित हों।

लेकिन कठिनाई यह है कि जब तक मैं पूर्वजों के वली होने को स्वीकार न करूँ, स्वयं मेरी अपनी अल्लाह से मित्रता मज़बूती नहीं हो सकती। अपने आप को वली कहलाने के लिए यह अनिवार्य है कि मैं पूर्वजों के वली होने का विश्वास करूँ। यह तो कुछ वही स्थिति मालूम होती है जब कहानी के बादशाह को नंगा देखकर भी दरबार के सभी लोग केवल इस विचार से बादशाह के कपड़ों की प्रशंसा करते रहें कि कहीं उनकी मूर्खता का पोल न खुल जाए क्योंकि शरारती लोगों ने यह दुष्प्रचार कर रखा था कि राजा का यह सुन्दर लिबास केवल बुद्धिमान लोगों को ही दिखायी देगा, मूर्ख लोग उसके दर्शन से वंचित रहेंगे। है न यह कुछ ऐसी ही बात? क्या आपको ऐसा नहीं लगता? मुस्तफा ऊग्लू ने हाशिम की ओर देखते हुए पूछा।

आप भी कैसी बातें करते हैं। अल्लाह वालों की शान में तो कुरआन मजीद में भी आयतें अवतरित हुई हैं। हाशिम ने मुस्तफा ऊग्लू को निरुत्तर करने की कोशिश की। क्या आपकी नज़र से वह आयत नहीं गुजरी ألا إن أولياء الله لا خوف عليهم ولاهم يحزنون

अला इन्न औलिया अल्लाह ला ख़ौफुन अलैहिम व ला हुम यहज़नून (अल्लाह के वलियों के लिए न कोई डर है और न दुख)।

भला इस बात से किसे इंकार है। वास्तविक समस्या तो यही है न कि अल्लाह का वली है कौन? आप कुरआन मजीद में वली की परिभाषा क्यों नहीं तलाश करते? विलायत (अल्लाह से वफादारी) और बराअ (अल्लाह से बरी होने) की घोषणा पर बहुत विस्तारपूर्वक बहस मौजूद है और यह बात कुरआन का हर पढ़ने वाला जानता है कि जो लोग अल्लाह पर ईमान लाये और जिन्होंने उसके धर्म को ऊँचा करने के लिए अपना सब कुछ दाव पर लगा दिया। वास्तव में यही लोग अल्लाह वाले हैं, अल्लाह की पार्टी के लोग हैं और ऐसे ही लोगों को यह शुभ सूचना दी गयी है कि उनके लिए डर और दुख का कोई अवसर न होगा। दुनिया में दो तरह के लोग पाये जाते हैं, वह जो अल्लाह के विरोधी, मानवता के दुश्मन और शान्ति और व्यवस्था को नष्ट करते हैं। यह शैतान के दोस्त हैं अर्थात शैतान के लिए काम करने वाले, और इसके विपरीत जो लोग अल्लाह को पहचानने वाला जीवन जीते हैं, वह दुनिया को परीक्षा और बिगाड़ से पवित्र करने के लिए सक्रिय रहते हैं, बुरी बातों से रोकते और भलाई का आदेश देते हैं, यह लोग अल्लाह के दोस्त या अल्लाह की पार्टी के लोग हैं। सच्चे अनुपालन करने वाले इस शुभ सूचना के हकदार हैं।

हाशिम बहुत ध्यान से मुस्तफा ऊग्लू की बातें सुन रहे थे। वलीद और साजिद भी आश्चर्यचकित थे। ऐसा लगता था जैसे उन्होंने यह बात पहली बार सुनी हो, इस तरह पहले उन्हें कभी सोचने का अवसर नहीं मिला हो।

लेकिन अल्लाह के वलियों (दोस्तों) की आत्माओं से लाभ भी तो पहुँचता है? हाशिम की शैली अब विरोधात्मक के बजाए शिष्य की तरह हो गयी।

भाई यह सब एक गोरखधंधा है। पहले तो यह मानिए कि अमुक बुजुर्ग अमुक कब्र में मौजूद हैं जो अपने मुरीदों (शिष्यों) की आवश्यकताएँ सुनते, उनके लिए दुआएँ करते, उनकी सिफारिशें अल्लाह के दरबार में पहुँचाते हैं और फिर कब्र की तरफ ध्यान लगाकर बैठ जाइए, कब्र पर चिल्लाकशी (चालीस दिन लगातार रहिए) कीजिए और फिर जब वह मरे हुए बुजुर्ग आपको कश्फ के माध्यम से किसी क्षेत्र का आध्यात्मिक साम्राज्य प्रदान कर दे तो वहाँ जाकर बैअत और मार्गदर्शन का सिलसिला जारी कर दीजिए। हालाँकि जिन कब्रों से आप फैज़ (उदारता) और बरकत का प्रकट होना समझते हैं उनकी वास्तविकता

मिट्‌टी के एक ढेर से अधिक कुछ भी नहीं। क़ुरआन मजीद तो स्पष्ट शब्दों में कहता है :

إنک لا تسمع الموتیٰ(نمل80)

इन्नक ला तुसमेउल मौता(तू मुर्दों को नहीं सुना सकता)

सूरः नम्ल,(22 فاطر)و ماأنت بمسمع من فی القبور सूरः फ़ातिर

व मा अन्त बि मुसमइन मन फिल कुबूर

अर्थात मुर्दों को नहीं सुना सकता जो कब्रों में हैं लेकिन मज़ारों के मुजाविरों ने रात दिन कब्रों से उदारता और बरकत के प्रकटीकरण का प्रचार प्रसार कर रखा है।

हाशिम खामोशी के साथ यह बातें सुन रहे थे। वह बीच में कुछ बोलना चाहते और फिर चुप हो जाते। कहने लगे तो क्या 'कश्फ और इल्हाम' (दैव ज्ञान और आकाशवाणी) के यह सभी दावेदार भरोसा करने योग्य नहीं हैं? क्या उदारता और बरकत प्राप्त करने की सभी कहानियाँ झूठी हैं?

अब यह निर्णय तो आपको करना है। एक तरफ क़ुरआन की घोषणा है और दूसरी तरफ तथाकथित बुजुर्गों के दावे। मुस्तफा ऊग्लू यह कहकर खामोश हो गए। सभा संभवत : यहीं समाप्त हो जाती लेकिन उसी समय वलीद ने कहवा की अगली प्यालियों का आर्डर दिया और मेरी ओर देखते हुए पूछाः आपका क्या विचार है? आप तो बिल्कुल ही खामोश हो गए।

मेरा विचार यह है कि हमें जानने और समझने का प्रयास करना चाहिए। यदि हमारा दृष्टिकोण एक छात्र की तरह ज्ञान अर्जित करना हो और हम सभी भेदभावों और पक्षपातों से ऊपर उठकर सच्चाई की खोज करने वाले बन जाएँ तो काम आसान हो जाता है। अल्लाह ने हममें से प्रत्येक व्यक्ति को सोचने और समझने की योग्यता दी है और वह हमारी समझ के अनुसार ही हमसे हिसाब लेगा। मामला तब खराब होता है जब हम विचार और चिन्तन के दरवाज़े बन्द कर लेते हैं। अब यह देखिए कि सूफ़ीवाद के ध्वजावाहकों ने कितने धोखे से विचार और चिन्तन पर प्रतिबन्ध लगा रखा है। यह कहना कि अल्लाह जब किसी व्यक्ति को पथभ्रष्टता में लिप्त करना चाहता है तो उसके दिल में अल्लाह के वलियों के विरोध का तत्व डाल देता है या यह बात कि जिसके दिल में अल्लाह के वलियों का प्रेम नहीं होता उसका अन्त भलाई में नहीं होता, कब्र के अन्दर उसकी लाश किब्ले की दिशा से मोड़ दी जाती है, वास्तव में हमसे यह चाहती है कि हम इन घृणित दुष्प्रचारों पर बिना सोचे-समझे विश्वास कर लें। एक बात और सोचने की है, जैसा कि भाई हाशिम ने अपनी बात में कुतुब और उनके सहयोगी अखयार, अवताद, अबदाल (ये सब सूफी आध्यात्मवाद के विभिन्न दर्जे हैं) आदि का उल्लेख किया तो हमें यह भी मालूम होना चाहिए कि इब्ने अरबी और अली हजवीरी ने कुतुब और उनके साथियों का जो विवरण दिया है, उनके विवरण में आपस में बहुत विरोधाभास पाया जाता

है। इन दोनों में सच्चा कौन है। जब हम सच्चाई की खोज में निकलते हैं और हमारे दिल और दिमाग़ पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की दुआ اللهم أرنى الأشياء كما هي अल्लाहुम्म अरिनी अल-अश्याउ कमा हेय (अर्थात ऐ अल्लाह मुझे चीज़ों को वैसा दिखा जैसी कि वह हैं) से परिपूर्ण होते हैं तो सभी दिशा में हमारी यात्रा शुरू हो जाती है। हमारा काम अपनी क्षमता के अनुसार संघर्ष करना है। जानने की इच्छा अगर शुद्ध हो और दिल भेदभाव और द्वेष से पवित्र हो तो हम निश्चित रूप से वास्तविकता तक पहुँच जायेंगे।

लेकिन ये बातें तो सर्वस्वीकार्य बातों में से हैं, बुजुर्गों और सूफियों का इस्लाम में आरम्भ से ही एक स्थान रहा है। बड़े पीर साहब गौसुल आज़म को एक दुनिया मानती है, हाशिम ने अपनी उलझन को एक नये ढंग से प्रस्तुत किया।

दुनिया मानती है, इसीलिए तो इस्लाम की मूल रौशनी हमारे बीच से विदा हो गयी है। वही अब्दुल कादिर जीलानी न! जिन्हें पीरों के पीर दस्तगीर भी कहते हैं, मुस्तफा ऊग्लू ने प्रश्न को उचकने की कोशिश की। भाई उनकी तो बड़ी करामतें (चमत्कार) हैं, आपने तो केवल चालीस अशर्फियों वाली कहानी पढ़ी होगी, मैंने तो यह भी सुना है कि उनके जन्म के समय उनकी माँ को प्रसव पीड़ा हुई और हज़रत पैदा नहीं हो रहे थे, उनके पिता इस दशा से बहुत परेशान हुए, वह उस समय अपने समय के किसी प्रसिद्ध बुजुर्ग के पास गए जिन्होंने फ़रमाया कि वह वलियों (अल्लाह के दोस्तों) का सरदार है। इस तरह बाहर नहीं आएगा, उन्होंने अपनी पगड़ी का एक टुकड़ा फाड़कर दिया और कहा इसे ले जाकर अपनी बीवी को दे दो ताकि वह उसे निगल ले। बीवी ने ऐसा ही किया और तब कुतुबों के कुतुब गौसुल आज़म लंगोट बाँधे हुए बाहर आ गए।

वास्तव में? वलीद ने किसी हद तक आश्चर्य प्रकट किया। लगता है यह आपने कुछ अधिक कर दिया।

नहीं मैंने अपनी ओर से कुछ नहीं कहा। यह तो मामूली करामात (साधारण चमत्कार) हैं जो इन अल्लाह के वलियों से प्रकट होते रहे हैं और क्यों न हों अब्दुल कादिर जीलानी तो माशा अल्लाह वह्य प्राप्त करने वाले भी हैं। क्या आपको एक पवित्र आयत सुनाऊँ जो गौसुल आज़म पर अवतरित हुई।

आयत? कैसी बातें करते हैं, हाशिम ने आश्चर्यचकित होकर पूछा।

जी हाँ यह बहुत गहरा समुद्र है। इसके रहस्य इतनी सरलता से नहीं खुलते। अभी तो आपको ऐसी-ऐसी बातों का पता लगेगा कि आप दंग रह जायेंगे। सुनिए क्या फ़रमाया अल्लाह तआला ने ग़ौसुल आज़म से। यह कहते हुए मुस्तफा ऊग्लू ने अपनी आँखें आधा बन्द कर लीं, तिलावत करने के अन्दाज़ में अदब से सँभल कर बैठ गए और फिर तिलावत की तुर्क शैली में कुछ इस तरह बोले :

قال يا غوث الأعظم ان لی عبادا سوی الأنبياء و المرسلين لا يطلع علی أحوالهم أحد من أهل الجنة و لا أحد من أهل النار و لا ملک مقرب و لا رضوان و ما خلقتهم للجنة و لا للنار و لا للثواب و لا للعقاب و لا للحوار و لا للقصور فطوبیٰ لمن آمن بهم و ان لم يعرفهم يا غوث الآعظم و انت منهم و من علامـ◌اتهم فی الدنيا أجسامهم محترقة من قلّة الطعام و الشراب و نفوسهم محترقة من قلّة الطعام و الشراب و نفوسهم محترقة عن الشهوات و قلوبهم محترقة عن الخواطر و أرواحهم محترقة عن اللحظات وهم أصحاب البقاء المحترقين بنور اللقاء۔

तिलावत पूरी हुई तो साजिद ने माँग की कि इसका अनुवाद भी कर दें तो अच्छा होगा। अनुवाद तो राशिद साज साहब से सुनिए। मुस्तफा ऊग्लू ने मेरी ओर इशारा करते हुए कहा। हमारे दोस्त साज़ साहब एक इस्लामी विद्वान हैं, यह आपको शब्दशः अनुवाद बताएँगे।

राशिद साज़! Hey! Are you the same guy of Future Islam?

हाशिम ने आश्चर्य भरी जिज्ञासा से पूछा।

जी हाँ आपने बिल्कुल ठीक पहचाना। मुस्तफा ऊग्लू ने पुष्टि की ।

I have seen some of your stuff

बहरहाल यह आशा न थी कि इस तरह अचानक आपसे भेंट हो जायेगी ?

क्या तुम इनसे परिचित हो? साजिद ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा।

हाँ मैंने इनकी कुछ चीज़ें इण्टरनेट पर देखी हैं। हाशिम ने स्पष्ट किया और कनाडा में हमारे एक मित्र हैं जो इनके बड़े समर्थक हैं। उन्होंने इनकी कुछ किताबें भारत से मँगवायी हैं। कहते हैं, बड़ी कठिन उर्दू में है तुम्हारी समझ में नहीं आएगी। लेकिन अब मैं अपने मित्र से कह सकूँगा कि मैं उनसे इस्ताम्बोल में मिलकर आया हूँ। वह निश्चित रूप से बहुत खुश होंगे।

बात की दिशा बदलते देखकर मैंने मुस्तफा ऊग्लू से चेतावनी स्वरूप कहा। तुमने फिर वही हरकत की। वह इशारा समझ गए। बोले! जब मूसा (अलै०) से खिज्र की वांछित सावधानी न बरती जा सकी तो मुझसे रहस्यों का अचानक खुल जाना क्षमा करने योग्य है, मुस्तफा ऊग्लू ने सफाई दी। वलीद ने सभा का रंग बदलते देखकर मुझसे कहा कि बहुत महत्वपूर्ण बातें हो रही थीं। आइए उसे जारी रखें।

मुस्तफा ऊग्लू हज़रत ग़ौस पर अवतरित होने वाली आयत पढ़ते गए और मैं उसका अनुवाद करता गया :

फ़रमायाः ऐ गौसुल आज़म! हमारे कुछ बन्दे ऐसे हैं जो न पैग़म्बर हैं और न रसूल। जिनके हालात से न दुनिया वाले अवगत हैं और न परलोक वाले, न जन्नत वालों में से कोई और न ही आग वालों में से ही कोई, उनके बारे में कुछ जानता है। न कोई

(अल्लाह का) निकट रहने वाले फ़रिश्ते रिज़वान को उनके बारे में कुछ पता है। उन्हें हमने न जन्नत के लिए पैदा किया है और न ही जहन्नम के लिए। न सवाब (पुण्य) के लिए और न अज़ाब (यातना) के लिए। न हूर (परी) के लिए और न महलों के लिए। इसलिए खुशखबरी है उन लोगों के लिए जो उनके ऊपर विश्वास करें चाहें उन्हें उनका बोध प्राप्त हो या न हो। ऐ गौसुल आज़म तुम उन्हीं लोगों में से हो। उनकी पहचान यह है कि उनके शरीर कम खाने पीने के कारण झुलसे हुए होंगे। उनकी इन्द्रियों के स्वाद और इच्छाएँ जल-भुन गयी होंगी और उनके दिल ख़तरों से सुरक्षित होने के कारण और उनकी आत्माएँ सांसारिक लज्ज़तों से रोकथाम के कारण झुलसी हुई होंगी। जान लो कि यही लोग *बका (अमर रहने)* वालों में से हैं जिनके अस्तित्व *लिका* (मिलन) के प्रकाश के कारण जल-भुन गये हैं।

अनुवाद समाप्त हुआ तो उन तीनों नौजवानों पर सन्नाटा छा गया। हज़रत दाउद (अलै०) की लय में मुस्तफा ऊग्लू की तिलावत ने पहली बार कुरआन के अतिरिक्त किसी और वह्य से परिचित कराया था।

क्या गौस-ए आज़म की वह्य का कोई संग्रह बाज़ार में मिल जाता है? हाशिम ने जानना चाहा।

बाज़ार में चाहे न मिले, लाईब्ररियों में तो मिल ही जाएगा। उसके बहुत से नाम हैं, रिसाला ग़ौसुल आज़म, फुतूहात-ए रब्बानी, इल्हामात-ए ग़ौसुल आज़म और इस तरह के विभिन्न नामों से छठीं सदी हि० से यह रिसाला उलमा और शैखों में लगातार मिलता रहा है, मुस्तफा ऊग्लू ने स्पष्ट किया।

तो क्या हमारे प्रतिष्ठित उलमा को इन बातों की जानकारी नहीं? डा० साज़ आप भी तो कुछ बोलिए। यह तो बड़ा गंभीर मामला है। हम तो यह समझते रहे हैं कि केवल गुलाम अहमद कादियानी जैसे लोग इस अपराध में लिप्त हुए हैं जिन्हें इस्लाम के उलमा ने दीन से बाहर कर दिया है। अब भाई मुस्तफा ने यह बताया कि इब्ने अरबी से लेकर शाह वलीउल्लाह तक बड़े-बड़े नाम अल्लाह से सीधे सम्पर्क के दावेदार हैं। इन बातों को हमने कैसे सहन कर रखा है। अल्लाह के लिए इस सवाल पर कुछ रौशनी डालिए।

हाशिम मानसिक रूप से बहुत बैचेन लग रहे थे। मुझे उनकी सच्ची भावना पर बेहद प्यार आया। मैंने उनके कंधे को थपथपाते हुए कहा, प्यारे भाई मेरी या किसी और की तलाश की हुई वास्तविकता पर आँखें बन्द करके विश्वास मत कीजिए जब तक आप स्वयं वास्तविकता की खोज में नहीं निकलते, आपके अन्दर सच्चाई के सिलसिले में आत्मविश्वास की भावना पैदा नहीं हो सकती। अब तक हमारी गुमराही का मूल कारण यही है कि हम बड़े नामों के पीछे चलने के आदी हैं। हम यह सोचते हैं कि जब बड़े-बड़े उलमा किसी बात की सच्चाई पर गवाही दे रहे हैं तो निश्चित रूप से यह सच होगा क्योंकि इतने सारे लोग मूर्ख और गुमराह तो नहीं हो सकते और विशेष रूप से

जब उन नामों के चारों ओर पवित्रता का घेरा भी बना हुआ हो। यदि उनकी बातों पर विश्वास करने के बजाए आपने मेरे दृष्टिकोण को फतवा के रूप में स्वीकार कर लिया तो फिर आप मनुष्यों के दृष्टिकोण के उन्हीं दायरों में घूमते रहेंगे। आवश्यकता इस बात की है कि आप स्वयं इन समस्याओं का समाधान तलाश करने का प्रयास करें। मेरा विचार एक व्यक्ति का विचार है, आप उसे भी बुद्धि के तराजू पर वह्य की रौशनी में परखिए। रहा आपका यह आश्चर्य कि इस्लाम धर्म में इतने दुस्साहसिक और क़ुरआन के विरुद्ध दावों को अब तक क्यों सहन किया जाता रहा है तो यह एक ऐसा रहस्य है जिसे समझने के लिए इस्लामी इतिहास की गहरी जानकारी, गिरोही और राजनैतिक प्रतिद्वन्द्विताओं के विश्लेषणपूर्ण अध्ययन और वस्तुनिष्ठ अध्ययन के अतिरिक्त क़ुरआन मजीद के ग़ैर साम्प्रदायिक और आँख खोलने वाले अध्ययन की आवश्यकता है। अभी तो आप केवल इतना समझिए कि आध्यात्मिक लोगों के इन बकवासों को जिन्होंने पैग़म्बरी की समाप्ति का खुले तौर पर उपहास किया  है। कभी शहतियात, कभी तफर्रुदात और कभी इल्मे बातिन के हवाले से प्रमाण प्रदान करने का प्रयास किया गया है। हालाँकि क़ुरआन मजीद का एक साधारण अध्येता भी यह समझे बिना नहीं रह पाता कि *फ़तूहात और फ़सूस* में इब्ने अरबी ने क़ुरआन की बातिनी (अप्रकट) व्याख्या के माध्यम से जाहिरी (प्रकट) अर्थ को पराजित करने का प्रयास किया है। जिस तरह इन लोगों ने कश्फ और इल्हाम (दैव ज्ञान और आकाशवाणी) के बहुत से दावे किए हैं, अल्लाह के निकट रहने वाले फ़रिश्तों की सभा से अपनी जानकारी की सूचना दी है, इन तमाम बकवासों के लिए कम से कम इस इस्लाम में कोई गुंजाइश नहीं है जो अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) को अल्लाह का अन्तिम पैग़म्बर और क़ुरआन मजीद को अन्तिम वह्य के रूप में प्रस्तुत करता है। लेकिन हमारे प्रामाणिक उलमा का हाल यह है कि कुछ तो सामाजिक निन्दा के डर से और कुछ ज्ञान और साहस की कमी के कारण वह यह कहकर इन खुराफात पर पर्दा डालते रहे हैं कि यह बड़ों की बातें हैं जिनपर मुँह खोलना हमें शोभा नहीं देता। वह स्पष्ट कहते हैं कि बुजुर्गों की ग़लतियों की पकड़ करना स्वयं अपने आप में ग़लती है। इसका परिणाम यह है कि तीसरी चौथी सदी की आपातकालीन परिस्थितियों में बौद्धिक विचलन की जो आँधी उठी वह आगे चलकर विचलन की धुंध में वृद्धि ही करती रही। फ़ातिमी और अब्बासी ख़लीफाओं की आपसी प्रतिद्वन्द्विताओं ने भूमिगत सूफी आन्दोलन के लिए रास्ता साफ किया। हर आने वाला सूफी पिछले सूफी के कंधों पर खड़ा होकर अपना कद ऊँचा करता रहा। उसने पिछले इल्हामी (आकाशवाणी वाले) दावों को झूठ सिद्ध करने और इन्कार करने के बजाए स्वयं उन्हीं बुनियादों पर अपने दावे की बुनियाद मजबूत की। परिणाम यह हुआ कि छोटे-बड़े, आलिम, विद्वान और जाहिल, अनभिज्ञ सभी की किताबें और संस्मरण कश्फ और इल्हाम के दावों से भर गयीं। फिर आगे जो इस्लाम चला वह इब्ने अरबी और अब्दुल कादिर

जीलानी का लाया हुआ इस्लाम था। जिसे अली हजवीरी, मौदूद चिश्ती, अहमद रिफाई, अहमद सरहिन्दी, शाह वलीउल्लाह, गंगोही, नानौतवी, मौलवी ज़करिया और उन जैसे सैकड़ों लोगों के कश्फ और इल्हाम ने रंग और पॉलिश उपलब्ध किया था। परिणाम यह हुआ कि अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) का शुद्ध दीन पीछे रह गया।

रात बहुत हो गयी थी लेकिन उन नौजवानों के चेहरों पर थकान के चिन्ह दिखायी नहीं दे रहे थे। बहुत ध्यान से बल्कि जिज्ञासापर्वूक और बैचेनी के साथ मेरी बातें सुन रहे थें। वलीद कभी आसमान में घूरता और कभी मेज़ पर पड़ी कॉफी की खाली प्याली पर उसकी निगाहें जम जातीं। साजिद आश्चर्यचकित दिखायी देता और हाशिम के बारे में तो न पूछिए, ऐसा लगता था जैसे उसके पैरों के नीचे से ज़मीन खिसक चुकी हो। विदाई के लिए हाथ मिलाते हुए उसने मेरा हाथ चूम लेने की कोशिश की और कल की मुलाकात के वादे के साथ हमारी कार होटल की ओर चल पड़ी।

## 13
# या अब्दुल कादिर जीलानी शैय्यन लिल्लाह
## (ऐ अब्दुल कादिर, जीलानी कुछ अल्लाह के लिए)

गलियों से निकलकर हमारी कार जब राजमार्ग पर आयी तो मैंने मुस्तफा ऊग्लू से कहाः मुस्तफा मुझे मालूम न था कि तुम कादरिया ग्रंथ के हाफिज़ भी हो। तुमने तो ऐसी तिलावत की कि समाँ बाँध दिया। वह मुस्कराया, कहने लगाः एक ज़माने में तो मुझे इल्हामाते कादरिया (कादरी आकाशवाणियों) की अधिकतर आयतें याद थीं। यह उन दिनों की बात है जब मैं शेख अली अल-अली का शिष्य था और मेरी प्रतिदिन की दिनचर्या में इनकी तिलावत भी सम्मिलित थी। बात यह है कि जब तक इन लोगों की बनावटी वह्य को वास्तविक वह्य के मुकाबले में न रखा जाए इनका घृणित होना स्पष्ट नहीं होता, उन पर पवित्रता का पर्दा पड़ा रहता है। मैं तो इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि बनावटी वह्य के यह सभी दस्तावेज और कश्फ और इल्हाम के यह सभी दावे क़ुरआन मजीद का ज़ोर तोड़ने के लिए बल्कि यह कहिए कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के मिशन को विफल करने के लिए किए गए हैं। इन देववाणियों में पढ़ने वाले को जो बातें मन में बिठाने के प्रयास किए गए हैं वह बुद्धि और वह्य के पूर्णतः विरुद्ध हैं और उसके द्वेषपूर्ण विरोध पर आधारित हैं। उदाहरण के लिए इसी कादरी ग्रंथ को लीजिए, जिसके अनुसार अब्दुल कादिर जीलानी ने जब अपने पालनहार से पूछा कि ऐ मेरे पालनहार तेरी नज़र में कौ़न सी नमाज़ बड़े रुतबे वाली है तो ख़ुदा का उत्तर था :

قال الصلاة التی لیس فیہا سوائی و المصلّی نفسہ غائب عنها

अर्थात ऐसी नमाज़ जिसमें मेरे सिवा कोई न हो यहाँ तक कि नमाज़ पढ़ने वाला भी उसमें से गायब हो। एक दूसरी आयत जिसका दावा उनको था, उसमें फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआला ने उनसे स्पष्ट कह दिया है कि विद्वानों के लिए अल्लाह के यहाँ कोई जगह नहीं है। मुस्तफा ऊग्लू ने फिर अच्छे क़ारियों वाला बनावटी भाव अपनाया और तरतील के साथ कुछ इस तरह बोले :

قال یا غوث الأعظم لیس لصاحب العلم عندی سبیل مع العلم
الا من بعد انکاره لأنہ لو لا ترک العلم عنده صار شیطانا ۔

फ़रमायाः ऐ ग़ौस-ए आज़म विद्वानों के लिए मुझतक पहुँचने का कोई रास्ता नहीं जबतक वह ज्ञान का वाहक है। हाँ यदि कोई रास्ता निकल सकता है तो वह ज्ञान का इन्कार करने के बाद, लेकिन यदि वह ज्ञान को छोड़ दे तो शैतान हो जाता है।

बुद्धि दंग रह जाती है कि कहने वाले ने कौन सी बात कह दी। लीजिए विद्वान पर तो अल्लाह तक पहुँचने का दरवाज़ा ही बन्द हो गया। ज्ञान के साथ अल्लाह के दरबार में उसका गुज़र नहीं और ज्ञान छोड़ देने की स्थिति में भी उसके शैतान बन जाने की चेतावनी। मानो एक बार ज्ञान यदि आपको छू भी गया तो काम से गए। इन्हीं शाह विलायत का एक कथन है कि العلم حجاب أكبر ज्ञान सबसे बड़ा पर्दा है। अब देखिए बात कहाँ से कहाँ पहुँच गयी। क़ुरआन तो हमें ज्ञान और खोज, विचार और चिन्तन पर लगाना चाहता है और ग़ौस-ए आज़म की वह्य ज्ञान के छू जाने को भी ऐसा अक्षम्य पाप बताती है जिसके बाद मुक्ति की कोई गुंजाइश बाकी नहीं रह जाती।

तो क्या कादरिया ग्रंथ या जिसे आप इलहामात-ए ग़ौस-ए आज़म कहते हैं। सूफ़ियों की सभाओं में सामान्य स्तुति का हिस्सा हैं, मैंने मुस्तफा ऊग्लू से पूछा।

नहीं! इस सिलसिले में नये आने वालों के लिए यहाँ स्तुति और गुणगान के विभिन्न संग्रह प्रचलित हैं, हाँ, विशेष लोगों के स्तर पर इन इलहामात को बहुत अधिक महत्व प्राप्त है। क़ुरआन मजीद की कुछ छोटी सूरतों और दुआओं की तिलावत के बाद इन आयतों की तिलावत भी सफल अनुभव के रूप में बताया जाता है और ग़ौसिया दुरूद की ईजाद के पीछे भी इसी तरह के इलहामात का हाथ है, मुस्तफा ऊग्लू ने स्पष्ट किया।

आपकी स्मरण शक्ति माशा अल्लाह बहुत ज़बरदस्त है। जब आप इन आयतों की तिलावत करते हैं तो ऐसा लगता है जैसे आप कभी बगदाद की दिशा में पढ़े जाने वाले ग़ौसिया दुरूद के इमाम रहे होंगे, मैंने उन्हें छेड़ने की कोशिश की।

बोले : इस तरह की खुराफात का भण्डार तो मेरे याददाश्त में अच्छा खासा है। थोड़ा रुकिए मैं अभी आपको एक चीज़ सुनवाता हूँ। निश्चित रूप से आपको मज़ा आएगा। यह कहते हुए उन्होंने अपनी कार में लगे ऑडियो प्लेयर के बटन को आगे पीछे घुमा दिया और तभी ढोल की धमक पर عرفت الهواء مذ عرفت الهواء अरफ्तुल हवाओ मुज अरफ्तुल हवाओ का प्रेरणादायक गाना प्रारम्भ हुआ।

و أما الذى أنت اهل له

व अम्मल लजी अन्तः अहल लहू

فكشف لى الحجب حتى أراك

फ कश्फक लिल हजबु हत्ता अराक ।

जी हाँ! संगीत तो जादू जगाने वाली है और काफिया रदीफ की ध्वनि का मेल भी बड़े ग़ज़ब का है। अब आनन्द की इस भावना में कहने वाला सब कुछ कह जाता है, वह भी जिसका कहना उसे शोभा नहीं देता, मैंने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट कर दिया।

यह मोरक्को के प्रसिद्ध सम्प्रदाय इब्ने अरबी (इब्ने अरबी बैण्ड) का लोकप्रिय गाना है। इन लोगों का दावा है कि उन्होंने स्पेन के इस ध्वनि संगीत को फिर से प्रचलित किया है जिसको इब्ने अरबी के स्पेन में बहुत अधिक ख्याति प्राप्त थी।

इब्ने अरबी का धर्म तो ग़ैर महसूस तरीके पर अपना काम कर रहा है। कहीं सूफी गानों, कहीं इलहामात और मलफ़ूज़ात (कथन संग्रह), कहीं देववाणी और चमत्कार की घटनाएँ कहीं ध्यान और हक़ का अवलोकन और कहीं हक़ वालों की शरीअत के विरुद्ध बकवास और उर्स और ज़ियारत के संगठित कारोबार के माध्यम से इसके प्रचार और प्रसार का काम लगातार जारी है। इसके विपरीत अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) का लाया हुआ धर्म विश्व परिदृश्य से पूरी तरह ग़ायब है। मुहम्मदी मिशन अल्लाह की वह्य के रूप में मौजूद और सुरक्षित तो है लेकिन हक़ हक़ कहने वालों की धमाल, फ़कीहों की क़ील और क़ाल, क़ुरआन की व्याख्या करने वालों की व्याख्याएँ और हदीसवेत्ताओं की शान-ए नुज़ूल (आयतों के अवतरित होने की भूमिका) की गढ़ी हुई रिवायतों में उसके अर्थ पर कठोर पहरे बैठा दिए हैं। अब देखिए हमारे यह प्रबुद्ध नौजवान जो धर्म की तलाश में इन आध्यात्मिक लोगों के आस-पास चक्कर लगा रहे हैं, ऐसे न जाने कितने लोग तरीकत के विभिन्न शैखों, पीरों फ़क़ीरों और बहुरूपियों के जाल में गिरफ़्तार होकर बेकार कामों में अपनी योग्यता नष्ट कर रहे हैं। कोई शेख की कल्पना में दिन भर बैठा है, किसी को 21,000 बार स्तुति दोहराने का काम मिला है, कोई किसी कब्र पर चिल्ला काट रहा है ताकि कब्र वाले से उसे उदारता और कृपा प्राप्त हो सके। और कोई सैकड़ों मील दूर बैठा शेख के दर्शन की मरीचिका और उसके सम्पर्क की ग़लतफहमी में पड़कर बुद्धि और वह्य के विपरीत कामों में लगा हुआ है। कैसी आश्चर्यजनक है यह स्थिति और कितना मज़बूत और घृणित है आध्यात्मिक लोगों का यह जाल जिसने पूरी उम्मत पर एक अफीमी नींद तारी कर रखी है, मैंने अपना दुख प्रकट किया।

बोले : मुसीबत यह है कि दीन के इन्कार का यह निन्दनीय कारोबार लगातार बढ़ रहा है। अब देखिए न यहाँ इस्ताम्बोल में विभिन्न सूफी ख़ानकाहें फिर से जाग उठी हैं। नक्शबन्दिया, मौलविया, कादरिया, जिलवतिया, शाज़लिया, रिफाइया और फिर इनकी विभिन्न शाखाएँ, इन सबके अपने अपने समूह हैं, प्रत्येक सूफी केन्द्र पर स्थानीय लोगों के अतिरिक्त यूरोप और अमेरिका से आने वाले ज़ायरीन की बहार है। अधिकतर सूफी सिलसिलों ने अपने केन्द्र यूरोपीय देशों में स्थापित कर रखे हैं जहाँ से उनके स्थानीय केन्द्र में ज़ायरीन का ताँता बँधा रहता है।

रूमी की बढ़ती लोकप्रियता और सूफी केन्द्रों के पुनरुद्धार का मूल कारण क्या है? मैंने मुस्तफा ऊग्लू से जानना चाहा।

कहने लगे : एक तो यही कि पश्चिम में किसी चीज़ की लोकप्रियता हमारे यहाँ भी लोकप्रियता का कारण बन जाती है क्योंकि हमारी सामान्य जनता बल्कि विद्वान लोगों की एक बड़ी संख्या पश्चिम के फैशन से प्रभावित रहती है। इसलिए उधर रूमी अमेरिका में प्रसिद्ध हुए और इधर पूरब के कहवाखानों में उसपर बातचीत चल निकली। दूसरा कारण यह है कि पश्चिम इस्लाम से अपनी लड़ाई को छिपाने के लिए सूफी इस्लाम को पर्दे के

रूप में प्रयोग करता है। जब इस्लाम को नकारने की इतनी संगठित संस्था पहले से ही इस्लामी दुनिया में काम कर रही है तो फिर इस्लाम को खतरा समझने वाले लोग क्यों न इसका सहारा लें। एक तीसरा और महत्वपूर्ण कारण यह है कि स्वयं पश्चिम वालों की दशा यह है कि उनके यहाँ सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और वैचारिक स्तर पर बड़ा शून्य पाया जाता है। सूफी नृत्य और आकर्षक गानों के धमाल में उन्हें इससे वंचित होने के एहसास की पूर्ति दिखायी देती है। अतः लोग खिंच-खिंचकर कभी योग और कभी ध्यान और कभी नृत्य और संगीत की आध्यात्मिकता का आनन्द लेने के लिए पूरब की ओर खिचे चले आते हैं। मुस्तफा ऊग्लू ने और अधिक स्पष्ट किया।

लेकिन पश्चिम के सामान्य लोग, जो सच्चाई की खोज में इस्ताम्बोल तक आते हैं, उनके दिल तो भेद-भाव और पक्षपात से साफ होते हैं। वह तो इस आन्दोलन को इस्लाम का आन्दोलन ही समझते हैं।

जी हाँ, साधारण लोगों के लिए तो हाव हू के इस हंगामे पर इस्लाम का पर्दा पड़ा हुआ है। इनकी सत्यनिष्ठा और इनकी सच्चाई को पाने की इच्छा सन्देहों से परे है लेकिन समस्या यह है कि सच्चाई तक उनकी पहुँच हो तो कैसे? उन्होंने बड़े दुख से कहा।

मुस्तफा ऊग्लू जब मुझे वापस पहुँचा गए थे। उस समय लगभग आधी रात का समय रहा होगा। थकान कुछ अधिक नहीं थी। अगले दिन की व्यस्तता को ध्यान में रखते हुए जल्दी सोने की कोशिश की लेकिन मन में विचारों की भीड़ कुछ अधिक हो गयी थी। हाशिम की बैचनी और वलीद के सन्देहों में डूबे हुए प्रश्न याद आए। कभी उनपर दुख होता कि वह किन छलपूर्ण सहारों की खोज में भ्रमण कर रहे हैं और कभी उन नौजवानों की सच्चाई की तलाश के शौक पर स्पर्धा का एहसास होता कि एक ऐसी परिस्थिति में जब साधारण लोग केवल खाने कमाने में लगे हैं, अल्लाह ने इन लोगों को जीवन की सामान्य डगर से ऊपर उठकर बड़े प्रश्नों पर चिन्तन करने का सौभाग्य प्रदान किया। तरस इसलिए आता कि वह एक शेख से निराश होकर दूसरे शेख की तलाश में निकले हैं। नक्शबन्दी हक्कानी को छोड़कर नक्शबन्दी खालिदी के सिलसिले से बैअत के लिए इस्ताम्बोल आए हैं। मानो ताड़ से गिरे और खजूर पर अटके। हिशाम कब्बानी और उनके शेख नाज़िम हक्कानी की तुलना में उन्हें महमूद आफन्दी के यहाँ सब कुछ तक़द्दुस में डूबा डूबा लगता है। जामेअ इस्माईल आग़ा में लम्बी दाढ़ियों, सफेद पगड़ियों, ढीली ढाली टखने से ऊपर शलवारों और उसपर लम्बे लम्बे जुब्बे पहने लोग इन नौजवानों को कितने धार्मिक और पवित्र लगते हैं। इस धार्मिक माहौल और नूरानी (प्रकाशमय) रात और दिन ने इन नौजवानों को किस तरह मोह लिया है। हिशाम कब्बानी और अब्दुल करीम कबरसी न सही महमूद आफन्दी के हाथों में उनका जीवन और मुक्ति का अधिकार देकर उम्मत और तीन नौजवानों की बहुमूल्य योग्यताओं से वंचित हो जाएगी।

हाशिम और उनके साथी तो इस परिदृश्य का एक बहुत छोटा अंग हैं। आध्यात्मिक लोगों के इस जाल में जिसका सिलसिला दुनिया में हर तरफ फैला हुआ है। प्रतिदिन न जाने कितने लोग शेख के अनुकरण के नशे वाली गोली खिलाकर सुलाए जाते हैं।

मैं जितनी ही सोने की कोशिश करता, विचारों की भीड़ बढ़ती जाती। आज पहली बार इस बात का एहसास हुआ की सुकून की नींद सोना कोई आसान काम नहीं। संभवतः यह उन्हीं लोगों के हिस्से में आती है जो किसी शेख की मुक्ति देने वाली नाव पर सवार होकर इस भरोसे पर सोते हैं कि वह सोएँ या जागें शेख के नेतृत्व में नाव की यात्रा मुक्ति की ओर जारी है। विवश होकर बिस्तर से उठ बैठा, खिड़की का पर्दा हटाया, दूर समुद्र के तट पर बल्ब की रौशनी में कुछ चलते फिरते इन्सानी साये नज़र आए। ऐसा लगा जैसे मेरी तरह वह भी बैचेन हों, जिनसे परिस्थितियों की कठोरता और समस्याओं की पेचीदगी ने रात का सुकून छीन लिया हो। देर तक बास्फोरस के किनारे उन रहस्यमय गतिविधियों पर नज़रें जमाए रहा।

संभवतः इसी दृश्य को देखकर अहमद ऊग्लू को यह समझ में आया हो कि इस्ताम्बोल में तटों पर तड़के सवेरे से पहले अल्लाह वालों के कदमों की चाप सुनाई देती है जो इस्ताम्बोल वालों की तसल्ली के लिए रात के अन्तिम पहर विभिन्न गली कूचों में चक्कर लगाते हैं। हाँ, बास्फोरस और खाड़ी के दोनों ओर तटों पर उनकी चलत फिरत कुछ अधिक होती है। ऊग्लू को तो इस बात पर इतना भरोसा है कि वह कई बार तड़के सवेरे से पहले वॉक वे का चक्कर भी लगा चुका है। उसका कहना है कि एक दिन सवेरे जब अल्लाह वालों की तलाश में विभिन्न वज़ीफे (स्तुति करने की दुआएँ) पढ़कर निकला। मुझे एक विचित्र स्थिति का सामना हुआ। एक सफेद दाढ़ी वाले बुजुर्ग बिल्कुल सफेद जुब्बा और सफेद पगड़ी में अपने हाथों में एक छड़ी लिए मेरी ओर आते दिखायी दिए। मुझपर खुशी, आश्चर्य और कुछ हद तक भय की स्थिति छा गयी, मारे डर के मैंने आँखे बन्द कर लीं, मुठिठयाँ भींच लीं। ऐसा लगा जैसे एक रौशनी मेरे पास से होकर गुज़र रही है। बहुत देर बाद मैं होश में आया। ऊग्लू कहता है कि उस समय से मैं रहस्यपूर्ण क्षणों में तट की ओर नहीं जाता। मैंने सोचा इन्सान भी कितना कमज़ोर और अन्धविश्वासी है और मनुष्य का मन भी कितना उपजाऊ और कितना पेचीदा है। स्वयं ही भ्रम पैदा करता है और स्वयं ही उसमें गिरफ्तार हो जाता है।

# 14
# होजा उस्मान

दूसरे दिन निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार एक बार फिर मस्जिद इस्माईल आग़ा में जाना था। शेख हमूद से वादा कर आया था। हाशिम और उनके दोस्त भी हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे लेकिन अचानक मुस्तफा ऊग्लू के टेलीफोन ने कार्यक्रम में परिवर्तन कर दिया। कहने लगे आज रात इस्ताम्बोल के एशियाई क्षेत्र में शेख अली दाग़िस्तानी की सभा है। इस्माईल आग़ा तो आप कभी भी जा सकते हैं, हाँ इस तरह की विशेष लोगों की सभाएँ प्रतिदिन आयोजित नहीं होतीं और उसमें प्रवेश करना आसान भी नहीं होता। अस्र की नमाज़ के बाद होटल में तैयार रहिएगा। यदि मैं न आ सका तो होजा उस्मान आपको लेने आयेंगे। मैं हाशिम को सूचित कर दूँगा कि वह शेख हमूद से आज की उपस्थिति लिए क्षमा माँग लें। यह कहकर मुस्तफा ऊग्लू ने टेलीफोन काट दिया।

अली दाग़िस्तानी? मैंने अपने मन पर ज़ोर डाला। हो सकता है कि ये हमीदुल्लाह दाग़िस्तानी के रिश्तेदार या शिष्य हों। मैंने कोई 7—8 साल पहले उन्हें काशिउन पहाड़ की मस्जिद इमाम महदी में ज़िक्र का नग्मा गाते सुना था। विशेष रूप से जब शेख اللہم صل علیٰ अल्लाह हुम्म सल्ल-ए अला पर रुककर محمد و علیٰ मुहम्मदिन व अला से दूसरा मिसरा बनाते और आल-ए मुहम्मद कहते ही फिर पहले मिस्रे में اللہم صل علیٰ अल्लाहुम्म सल्ले अला को इस तरह जोड़ते कि علیٰ علیٰ अला अला की ध्वनि साम्य से, जिसे पूरी सभा एक साथ गाती, सभा पर एक आह्लादपूर्ण भाव छा जाता। अली दाग़िस्तानी समरकन्द से आ रहे थे और निकट ही बुखारा की ज़मीन में नक्शबन्दी सिलसिले के संस्थापक बहाउद्दीन नक्शबन्दी की कब्र भी स्थित है। अर्थात् यह कह लीजिए कि मध्य एशिया के नक्शबन्दी मुख्यालय से एक प्रामाणिक आध्यात्मिक शेख इस्ताम्बोल के रहस्यमय शहर में उतर रहा था, निर्धारित समय से कुछ पहले ही मुस्तफा ऊग्लू होजा उस्मान के साथ आकर मुझसे मिले। होजा जो तुर्की भाषा में गुरु का वैकल्पिक शब्द है, किसी सम्मानित व्यक्ति को सम्बोधित करते हुए कहते हैं और बार-बार सम्बोधन के कारण कभी-कभी यह शब्द कुछ लोगों के नाम का अंग भी बन जाता है। होजा उस्मान भारी भरकम शरीर वाले एक विनम्र व्यवसायी निकले। लगभग 60—65 की लपेट में होंगे, उनका नक्शदार तुर्की टाइलों का बड़ा कारोबार है।

मैंने उनसे पूछाः आप दीवारों को सजाने और संवारने के लिए नक्शदार टाइलें बनाते हैं? कहने लगे हाँ, यह मेरा खानदानी व्यवसाय है। अल्लाह का दिया सब कुछ है। अब अधिकतर समय अल्लाह वालों की सेवा में व्यतीत करता हूँ।

आप दीवारों को सजाने और सँवारने के व्यवसाय से आत्मा को विकसित करने या उसको सँवारने सजाने की ओर कैसे मुडे?

फ़रमाया, जब तक अन्दर की आत्मा सुन्दरता और शान्ति से रिक्त हो, इन्सान अपने माहौल को सुन्दर नहीं बना सकता। यह जो आप इस्ताम्बोल में प्राचीन भव्य इमारतें देखतें हैं तो इन इमारतों की भव्यता वास्तव में हमारे आन्तरिक स्थायित्व को और दिल और नज़र की शान्ति और आत्मविश्वास को प्रकट करता है। यह उस ज़माने की यादगारें हैं जब हम यह समझते थे कि दुनिया हमारे लिए वशीभूत की गयी है और ख़िलाफत की राजधानी की हैसियत से इस्ताम्बोल को अन्तर्राष्ट्रीय राजधानी की हैसियत प्राप्त है। जब अन्दर का आत्मविश्वास जाता रहा तो हमारी भव्य इमारतें भी वीरान हो गयीं।

होजा उस्मान वास्तव में होजा निकले। उनका व्यक्तित्व क्या था जैसे नक्शदार और आकर्षक टाइलों से कोई सुन्दर पैटर्न बना रखा हो। बातचीत में भी ज्यामितीय पैटर्न। वही नापतौल शब्द-शब्द जँचा-तुला अपनी जगह पर फिट। मुस्तफा ऊग्लू से उनकी पुरानी दोस्ती थी। बल्कि कह लीजिए, एक ज़माने में मुस्तफा ऊग्लू उनके पीर भाई (एक ही पीर के मुरीद) बनते बनते रह गए थे लेकिन आज भी ध्यान और सरमस्ती की आध्यात्मिक सभाओं में वह उन्हें आमन्त्रित करना नहीं भूलते। होजा अपनी हास्य-व्यंग्य चेतना के कारण बहुत जल्द ही घुल-मिल गये। पूछा क्या तुम भी सेटेलाइट टेलीफोन वाले हो? फिर स्वयं ही स्पष्ट किया कि एक ज़माने में वह और मुस्तफा ऊग्लू दोनों लैण्डलाइन टेलीफोन में विश्वास रखते थे। यानी अल्लाह से सम्पर्क के लिए शेख का वास्ता प्रयोग करते। अब इधर कुछ वर्षों से जबसे मोबाइल फोन की लानत फैल गयी है, बहुतों के विश्वास हिल गए हैं। मुस्तफा कहता है कि मोबाइल और सेटेलाइट फोन के ज़माने में शेख के वास्ते की पुरानी व्यवस्था अब चलन में नहीं है। अब मेरी समझ में बात आयी कि होजा क्या कह रहे हैं।

मैंने कहा हाँ, ऐसा क्यों न हो, जब हमारे शेख तरीकत भी अल्लाह के पैग़म्बर से सम्पर्क के लिए मोबाइल फोन का प्रयोग करते हों। क्या आपने शेख नाज़िम का यह दावा नहीं सुना कि उन्होंने सीधे अल्लाह के पैग़म्बर से टेलीफोन पर बातचीत की है।

शेख नाज़िम! अल्लाह, अल्लाह! उन्होंने शेख का नाम कुछ इस तरह दोहराया जैसे वह एक विशेष मनोभाव में हों। कुछ क्षणों तक आँखें बन्द कर लीं, खामोश रहे। क्या पता किसी ने झूठा दुष्प्रचार किया हो, या सक्र (बेहोशी) की हालत में कोई बात उनके मुँह से निकल गयी हो, बड़े रुतबे हैं शेख नाज़िम के, वह सुनहरी ज़ंजीर की चालीसवीं

कड़ी हैं, उनका वंशानुक्रम मौलाना रूम और अब्दुल कादिर जीलानी से मिलता है, उन्हें वह कुछ दिखाई देता है, जिन्हें हमारी आँखे नहीं देख पातीं।

मुस्तफा ऊग्लू जो अब तक खामोशी से कार चलाते हुए हमारी बातें सुन रहे थे, कहने लगेः होजा! अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से टेलीफोन पर वार्ता की बात तो छोडिए, सन् 2004 में शेख नाज़िम तो एक सभा में यहाँ तक कह बैठे थे कि 'तुम लोग जिस खुदा की तलाश में हो वह मैं ही हूँ ।' उनके मुरीद (शिष्य) इस खबर को ले उड़े। कुछ दिनों तक इण्टरनेट पर पर बड़ी गर्मागर्मी रही। यहाँ तक कि न्यूयार्क में शेख के एक ख़लीफा अब्दुल करीम हक्कानी को एक विशेष सभा में इस विषय पर मुरीदों को चेतावनी देनी पड़ी।

फ़रमायाः यह कोई ऐसी बात नहीं जिसपर शोर मचाया जाए। हक वालों पर ऐसी स्थिति आती है जब खुदा और बन्दे के बीच दूरी समाप्त होती हुई महसूस होती है। पिछले साल अली दाग़िस्तानी की सभा में सूरः नज्म की व्याख्या में यह बात विस्तारपूर्वक आयी थी। शायद आप उसमें नहीं थे। बड़ा आध्यात्मिक बयान था। काब-ए कौसैन की वह व्याख्या मैंने न इससे पहले कभी सुनी और न ही उसके बाद कहीं पढ़ने या सुनने को मिली। कितना बारीक सा पर्दा है बन्दे और खुदा के बीच। शहेरग (गले की मुख्य नस) से भी निकट है वह! نحن أقرب اليہ من حبل الوريد नहनो अकरबु इलैहि मिन हबलिल वरीद (हम उससे शहे-रग से भी अधिक निकट हैं)। न था तो कुछ न था और फिर वह मुहम्मदी नूर में प्रकट हो गया। यह सब रहस्यों का रहस्य है मेरे भाई। होजा ने यह कहते हुए मेरे कन्धों को स्नेहपूर्वक थपथपाया। फ़रमाया। इस रहस्य से वही लोग अवगत हो सकते हैं जो फाँसी के फन्दे पर अनल हक (मैं ही सत्य हूँ) कहने का साहस रखते हों। जब जीवन और मृत्यु का पर्दा उठ जाता तब मनुष्य पर यह गाँठ खुल जाती है कि ما فی جبتی إلا اللّٰہ मा फि जुब्बती इल्लल्लाह और फिर अकस्मात स्वयं उसके मुँह से अपने ही व्यक्तित्व की प्रशंसा में इस तरह के शब्द निकल पड़ते हैं कि سبحانی ما أعظم شانی सुब्हानी मा आज़मो शानी। यह कहते हुए होजा उस्मान काफी गंभीर हो गए।

या मौलाना शेख नाज़िम! होजा ने मस्ताना नारा लगाया। "या मौलाना" के शब्द उनके मुँह से कुछ इस तरह निकले मानो वह श्रद्धा की चाशनी में लथपथ हो गए हों।

लेकिन यह तो दिलवालों के साथ सदियों से होता आया है, शेख नाज़िम इस मामले में अकेले नहीं। मैंने मुस्तफा ऊग्लू की तरफ देखते हुए कहा। हमारे यहाँ दिल्ली के एक प्रामाणिक आलिम शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी जो नक्शबन्दी सिलसिले से सम्बन्ध रखते हैं। उन्होंने अपने पिता शाह अब्दुल रहीम के हवाले से लिखा है कि एक दिन जब वह अपने कुछ मुरीदों के साथ सैर के लिए निकले और सच्चाई की खोज की इस यात्रा में अस्र की नमाज़ का समय हो चला। रास्ते में एक मस्जिद में नमाज़ के बाद आपने

अपने मुरीदों से पूछा कि तुम लोग यह संघर्ष किस लिए कर रहे हो, किसकी खोज में दौड़-भाग कर रहे हो, सबने एक साथ कहा कि अल्लाह की तलाश में। यह सुनकर शाह अब्दुल रहीम उठ खड़े हुए। फ़रमाया वह मैं ही तो हूँ और यह कहते हुए उन्होंने लोगों की ओर हाथ मिलाने के लिए अपना हाथ बढ़ा दिया। शाह साहब का यह आध्यात्मिक लतीफा सुनकर मुस्तफा ऊग्लू के चेहरे पर शरारत भरी मुस्कुराहट उभर आयी और होजा उस्मान को संभवतः यह सहारा मिला कि चलिए शेख नाज़िम इस दावे में अकेले नहीं, उनके पीछे सच्चे लोगों की आध्यात्मिक परम्परा मौजूद है।

अब हम लोग शहर से बाहर पहले की अपेक्षा वीरान क्षेत्र में आ गए थे। सड़कें संभवतः प्रयोग न होने के कारण स्ट्रीट लाइटों से खाली और कहीं-कहीं टूटी हुई थीं। एक वीरान पहाड़ी पर वीरान खंडहर में किसी ने सफेद काग़ज़ पर Tekke लिखकर लगा दिया था। दरवाज़े पर दो बड़ी मशालें जल रही थीं और अध टूटे हुए दरवाज़ों के अन्दर रास्ते में परम्परागत शमादान लगे हुए थे। अन्दर कुछ बड़े हॉल में आरामदायक गद्दों पर चाँदनी बिछी थी। फर्श पर उच्च स्तर की तुर्की कालीनों से एक छोटा सा मंच बना लिया गया था जिसके पीछे दोनों ओर आतिशदान रौशन थे। खिड़कियों और ताकों में कहीं कहीं छोटी छोटी मशालें लगी थीं। अभी शेख अली का आगमन न हुआ था इसलिए लोग छोटे छोटे समूहों में आपस में बात करने में लगे हुए थे। वीरान खानकाह, रात का दृश्य, टूटे हुए दरो-दीवार जिन्हें आवश्यक मरम्मत के बाद इस्तेमाल के योग्य बना लिया गया था, आतिशदान और शमा की रौशनी में एक रहस्यपूर्ण दृश्य प्रस्तुत कर रहे थे। शेख के आगमन से पहले ही एक तरह के रहस्य ने माहौल को अपनी लपेट में ले रखा था। अचानक कुछ हलचल सी हुई। कुछ लोग दरवाज़े की ओर बढ़े और बहुत से लोगों ने हॉल में ही सम्मान और श्रद्धा के प्रदर्शन के लिए अपनी जगह पर पोज़ीशन ले ली। इधर शेख अली फर्श पर बने मंच पर पधारे और उधर हाथ चूमने बल्कि कदम चूमने के लिए कतार लग गयी।

कुछ देर बाद जब माहौल थमा और श्रद्धा प्रकट करने की सभी रीतियाँ अदा हो गईं तो शेख अली ने तेज़ आवाज़ वाले ज़िक्र से सभा आरम्भ की। खामोश वीराने में अल्लाहू अल्लाहू की आवाज़ कुछ इस शान से गूँजी कि हू की हर चोट पर उसके प्रत्युत्तर में परोक्ष की पुकार का आभास तेज़ से तेज़तर होता जाता। पुकारने वालों ने बहुत पुकारा, अतिशयोक्ति और तेज़ी में फेफड़े की सारी हवा निकाल दी लेकिन उत्तर पाने से वंचित रहे। अब शेख अली ने अपने दिल में ज़िक्र करने का आदेश दिया। फ़रमायाः जैसा कि आप लोग अवगत हैं ज़ोर ज़ोर से गुणगान करने के पीछे उद्देश्य यह है कि आपको आध्यात्मिक अनुभवों के लिए वार्म अप किया जाए। वास्तविक गुणगान तो दिल का ही गुणगान है जो आपके दिल में खुदा को कुछ इस तरह बिठाता है कि अल्लाहू के बिना भी आपका दिल खुदा के प्रकाश का केन्द्र बन जाता है। अर्थात् पहले तो मुँह से

तेज़ आवाज़ में गुणगान से दिल की गन्दगियों को धो लें फिर खामोश दिल के गुणगान के माध्यम से अल्लाह को उसमें बसायें और फिर तीसरा चरण यह है कि न तेज़ आवाज़ में गुणगान हो, न दिल में गुणगान हो, आपका दिल केवल खुदा, अकेला खुदा के प्रकाश का केन्द्र बन जाए। फ़रमाया, अब अल्लाहू का ध्यान प्रारम्भ होता है, अल्लाह के व्यक्तिगत नाम का ध्यान। आँखें और मुँह बन्द रखें, दिल की आँखें खोल लें ।

खामोश दिल के गुणगान में अल्लाहू की चोट अब सीधे दिल पर लग रही थी। उपस्थित जनों की एक बड़ी संख्या बैठे-बैठे, दायें-बायें, हल्के-हल्के हिलती। कुछ लोग आँखें बन्द किए हुए दायें और बाँयें कन्धे को इतने ज़ोर से लगातार झटके दे रहे थे जैसे हू का कोड़ा निरन्तर उनके दिल पर चोट कर रहा हो। 15-20 मिनट के बाद जब दिल की कुछ पिटायी हो चुकी तो शेख अली ने اللّٰهم صل علىٰ (*अल्लाहुम्म सल्ले अला)* का गुणगान शुरु किया। हिलते-उचकते कन्धे अचानक रुक गए। फ़रमायाः होश दरदम! हमारे शैखों का यह तरीक़ा रहा है कि कोई साँस अल्लाह के गुणगान के बिना न आए, हमें हर साँस का हिसाब देना है, हमें उस पद पर पहुँचना है जहाँ स्वयमेव हर साँस के साथ अल्लाह का गुणगान सम्मिलित रहे। दूसरा सिद्धान्त 'नज़र-ब-कमद' का है अर्थात् निगाहें अपने पैरों की ओर हों, इधर-उधर देखने की आवश्यकता नहीं और न ही इस बात पर ध्यान देना है कि कोई आपके बारे में क्या कह रहा है। साधारण मुसलमान केवल नमाज़ की स्थिति में अपने मन को केन्द्रित रखते हैं। जब वह खड़े होते हैं तो उनकी आँखें सामने ज़मीन में गड़ी होती हैं। रुकू (झुकने) की स्थिति में वह अपने पैर के पिछले हिस्से को देखते हैं, सजदा की स्थिति में उनकी नजरें अपनी नाक पर टिकी होती हैं और जब वह बैठने की स्थिति में होते हैं तो वह अपनी गोद को देख रहे होते हैं। यह साधारण मुसलमानों का ध्यान केन्द्रित करने का तरीका है जो उन्हें केवल नमाज़ में प्राप्त होता है। हम अल्लाह को पहचानने वालों के लिए यह एक स्थायी स्थिति है, हमें हर समय नमाज़ में रहना होता है। हज़रत रबीय बिन कासिम के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह हर समय अपना सिर कुछ इस तरह झुकाए रहते थे कि जो लोग उनको जानते न थे वह यह समझते थे कि संभवतः यह अंधे हों और यही अर्थ है पवित्र आयत قل للمؤمنين يغضوا من أبصارهم *कुल लिल मोमिनीन यग़िज्जू मिन अबसारिहिम का* (ईमानवालों से कह दो कि वह अपनी नजरें नीची रखें) तीसरा सिद्धान्त सफर दर वतन कहलाता है। तात्पर्य यह है कि खुदा को तलाश करने वाला अपनी अन्तरात्मा की पड़ताल करता रहे। गर्व और अहंकार, बड़प्पन और घमंण्ड, पद और सम्पत्ति के, प्रेम से दूर रहे और जब दुनिया की कोई इच्छा उसकी अन्तरात्मा में सिर उठाये तो उसपर *ला* की चोट लगाए और *इल्लल्लाह* को प्रकट करके अपने पालनहार की पहचान तलाश करे। याद रखिए अल्लाह को पाने का इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं कि अल्लाह के पैग़म्बर और अल्लाह के औलिया के प्रेम से अपने दिल को सजाया जाए। दान और भलाई के कामों

से उसको गतिमान किया जाए। अल्लाह के वलियों (दोस्तों) की ज़ियारत की जाए और अपने आप को अल्लाह के गुणगान में व्यस्त रखा जाए। यदि ऐसा हुआ तो हम अपने आप को खिलवत दर अंजुमन (सभा के अन्दर भी अकेलापन) की स्थिति में पायेंगे। सोते-जागते, उठते बैठते दिल के अन्दर खुदा का गुणगान हमारे जीवन का अंग बन जाए। सूफी प्रत्यक्ष रूप से तो लोगों के बीच में होता है। लेकिन वास्तव में वह कहीं और होता है। यही वह लोग हैं जिनका उल्लेख कुरआन मजीद में इस तरह आया है رجال لا تلهيهم تجارة ولا بيع عن ذكر ا لّٰله *रिजालुन ला तुलहीहिम तिजारतुन वला बैउन अन ज़िक्रल्लाह* (यह ऐसे पुरुष हैं जिनको व्यापार और क्रय-विक्रय अल्लाह की याद से असावधान नहीं करता) हमारे हज़रत ख्वाजा नक्शबन्द का कहना है कि उनके मुरीदों को ऐसा होना चाहिए कि प्रत्यक्ष रूप से तो हाथ व्यापार में व्यस्त हों लेकिन दिल से लगातार अल्लाहू की आवाज़ आती हो। अगला चरण *याद कर्द* का है واذكروا ا لّٰله كثيرا علكم تفلحون *वज़्र कुरुल्लाह कसीरन लअल्लकुम तुफलिहुन।* अल्लाह को अधिकता से याद करो, यहाँ तक कि तुम उस तक पहुँच जाओ या वह तुम्हें अपने दर्शन का सौभाग्य प्रदान कर दे। सूफीवाद की शब्दावली में इस प्रक्रिया को सच्चाई का अवलोकन भी कहते हैं। अगली मंजिल *बाज़गश्त* की है। जब आप गुणगान के आदी हो जाएँ और आपके दिल पर अल्लाहू का खामोश गुणगान एक प्राकृतिक प्रक्रिया बन जाए तो फिर अल्लाह से यह कहते रहिए कि ऐ अल्लाह मैं तेरा इच्छुक हूँ। तेरी खुशी चाहता हूँ। इस मनोभाव को अपने अन्तकरणः में इतनी अच्छी तरह बसाइए कि हर पल इस मनोभाव की प्रतिध्वनि सुनाई दे। इसके बाद की *मंजिल निगहदाश्त* के नाम से जानी जाती है। इस चरण में अल्लाह को तलाश करने वाला नकारात्मक विचारों और कल्पनाओं को अपने दिल से धक्के मार-मार कर बाहर निकालता है। भय, लोभ और इस प्रकार के सांसारिक प्रेरकों से जब दिल साफ हो जाता है तो फनाये कल्ब की मंजिल आती है। फिर संसार अपने हर तरह के आकर्षणों के बावजूद मक्खी के एक पर के बराबर भी महत्व नहीं रखता। मानव शरीर भूख प्यास और इन जैसी अन्य मानवीय आवश्यकताओं से बड़ी सीमा तक बेपरवाह हो जाता है। फिर अल्लाह की खोज करने वाले के लिए खयालों के भटकने का कोई अवसर नहीं रहता। उसका व्यक्तित्व सरापा स्मरण बन जाता है जैसा कि अल्लाह तआला ने कहा है,هو معكم أينما كنتم *हुव मअकुम ऐनमा कुन्तुम* (वह तुम्हारे साथ होता है चाहे तुम कहीं हो)। जब यह स्थान प्राप्त हो जाए तो हमारे शैखों ने हमें यह शिक्षा दी है कि हम हर पल इस बात की पड़ताल करते रहें कि पिछला पल अल्लाह की याद में व्यतीत हुआ या नहीं और इस कृपा पर निरन्तर हमारे मुँह आभार के शब्द और क्षमा-याचना के शब्द में डूबे रहें। मानो हम अब किसी सीमा तक अल्लाह के सामने प्रस्तुत होने योग्य हो गए हों।و تنظر نفس ما قدمت غد *वलतन्जुर नफ़्सुन मा*

*क़द्दमत लिग़द* (और हर जान देख ले कि वह कल के लिए क्या ले जा रहा है) में इसी बिन्दु की ओर इशारा करने का उद्देश्य है। इस चरण को शैखों की शब्दावली में *वक़ूफ़-ए ज़मानी* (समय का ठहर जाना) कहते हैं। लेकिन हम दिलवालों की यात्रा यहीं समाप्त नहीं होती। अगली मंजिल *वक़ूफ़-ए अददी* (संख्या का रुक जाना) की है। नफी या इस बात के गुणगान को विषम संख्याओं में कीजिए। अल्लाह विषम है और विषम संख्या से उसको विशेष लगाव है। एक साँस में तीन से इक्कीस बार गुणगान कीजिए। रुकना पड़े तो किसी विषम संख्या पर रुकें। पहले तीन से आरम्भ कीजिए फिर पाँच और इसी तरह धीरे-धीरे एक साँस में इक्कीस बार गुणगान करने का लक्ष्य प्राप्त कीजिए। संख्याओं के रहस्यों के रहस्य से मात्र विशेष लोगों को अवगत कराया गया है या वह लोग जो *रासिख़ून फ़िल इल्म* (जो लोग ज्ञान में गहराई में उतरे हुए हैं) हैं। आपका काम इक्कीस की संख्या तक पहुँचना है और यदि फिर भी वांछित परिणाम प्राप्त न हों तो यह समझना चाहिए कि हमारा दिल अभी मूक हृदय के गुणगान से पूरी तरह अनुकूल नहीं हो पाया है। खुदा की तलाश करने वाले को चाहिए कि नये सिरे से वह अपने आप को पूरी आमादगी के साथ इस रास्ते पर डाले। हाँ यदि वक़ूफ़-ए अददी से परिणाम प्राप्त हो जाए तो खुदा की तलाश करने वाले को चाहिए कि वह अपने आप को अंतिम मंजिल अर्थात *वक़ूफ़-ए क़ल्बी* के लिए तैयार करे। इस चरण में दिल को अल्लाह के अतिरिक्त किसी और चीज़ की आवश्यकता नहीं रह जाती। मौलाना रूमी ने सच कहा है कि अल्लाह की प्रशंसा तो गाय और गधे भी करते हैं फिर इन्सान भी यदि उसी चेतनहीनता से साथ गुणगान करें तो मनुष्यों और पशुओं में क्या अन्तर रह जाता है।

प्यारे बन्धुओं! हमें नक्शबन्दी ख्वाजाओं ने यह सिखाया है कि हम अल्लाह के गुणगान में विशेष लोगों में से विशेष लोगों का स्थान प्राप्त करें। निश्चित रूप से यह कोई आसान काम नहीं। लेकिन नक्शबन्दी शैखों के वास्ते से और ख्वाजाओं की पवित्र आत्माओं के माध्यम (तवस्सुल) से यह सब कुछ बहुत आसान हो जाता है। शेख ने इस वाक्य पर बहुत बल दिया, निगाहें छत की ओर उठायीं, एक पल के लिए रुके और फिर तेज़ आवाज़ में फ़रमायाः ऐ अल्लाह नक्शबन्दी ख्वाजाओं के सम्मान में और फिर اللّٰہم صل علیٰ अल्लाहुम्म सल्ले अला......... محمد و علیٰ मुहम्मदिन व अला एक विशेष लय में सभा में सम्मिलित लोगों के मुँह से एक साथ जारी हो गया।

कुछ देर तक दिल और निगाह को दरुद और सलाम के झटके लगते रहे, फिर फ़रमाया اللّٰہم صل علیٰ محمد अल्लाहुम्म सल्ले अला मुहम्मदिन् मानो यह इस बात का संकेत था कि अब सोहबत का अगला भाग प्रारम्भ होने ही वाला है। उपस्थित लोग फिर ध्यान लगाकर बैठ गए। फ़रमायाः वसीले में बड़ी ताकत है। इस प्रक्रिया के माध्यम से आप क़ायनात की प्रेरक शक्ति से अपना सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं। अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) से लेकर उनके सबसे करीबी साथी अबू बक्र सिद्दीक और

जाफर सादिक से लेकर शेख बहाउद्दीन नक्शबन्दी और फिर सुनहरी कड़ी के सभी बुजुर्ग जिनमें शेख अब्दुल्लाह दाग़िस्तानी और हमारे मौलाना शेख नाज़िम नक्शबन्दी सम्मिलित हैं, अल्लाह उनकी उम्र लम्बी करे, आपकी पीठ पर आ खड़े होते हैं। सभी नक्शबन्दी ख्वाजाओं की पवित्र आत्माएँ हरपल आपकी सहायता और रक्षा के लिए तैयार रहती हैं और हमारे शेख नाज़िम जिनका सम्बन्ध शेख अब्दुल कादिर जीलानी से भी है, एक तरह से इन दो बड़ी कड़ियों के सभी चमत्कारों को अपने अन्दर समेटे हुए हैं। अल्लाह अल्लाह! कितने सौभाग्यशाली हैं आप लोग। हमारी सहायता कीजिए, हमारी सहायता कीजिए ऐ सभी ख्वाजाओं के ख्वाजा। मदद कीजिए ऐ अब्दुल कादिर जीलानी, ऐ अल्लाह के पैग़म्बर! शेख ने रो-रोकर और गिड़गिड़ाकर पवित्र आत्माओं को पुकारा। उनके चेहरे पर क्रोध और बैचेनी के मिले-जुले भाव उभरे। अधिकतर उपस्थितजनों ने आध्यात्मिक रूप से अपने आप को उत्साह की स्थिति में महसूस किया और फिर अकस्मात सभा पर اللّٰہم صل علیٰ अल्लाहुम्म सल्ले अला.... علیٰ و محمد ٗ मुहम्मदिन अला का जोश भरा गुणगान जारी हो गया।

फिर कहा शेख से तवस्सुल (वसीला) के लिए सबसे अच्छा समय तहज्जुद के बाद का है। यदि दो बार तवस्सुल किया जाए तो अधिक अच्छा है। तवस्सुल का तरीका यह है कि पहले एक बार सूरः फातिहा और तीन बार सूरः इख्लास पढ़े फिर कहें कि ऐ अल्लाह मैंने जो कुछ पढ़ा उसका पुण्य पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की पवित्र आत्मा को पहुँचा दे, सभी पैग़म्बरों, रसूलों की आत्माओं, अल्लाह के निकटवर्ती फ़रिश्तों, सहाबा और उनके बाद वालों, अल्लाह के वलियों और भले लोगों, विशेष रूप से नक्शबन्दी ख्वाजाओं और हमारे शेख मौलाना नाज़िम के गुरु शेख अब्दुल कादिर दाग़िस्तानी की आत्मा को पहुँचा दें। फिर कहें: ऐ अल्लाह सभी गुनाहेगारों के गुनाह माफ कराने वाले की प्रतिष्ठा में! ऐ अल्लाह समय के ग़ौस ज़माने के क़ुतुब शेख बहाउद्दीन नक्शबन्दी और सभी नक्शबन्दी शैखों की प्रतिष्ठा में। बेहतर है कि शैखों का अलग-अलग नाम लिया जाए। जो लोग नियमित रूप से इस अमल को दुहराते हैं, उन्हें मालूम है कि ऐसा करने से शेख से तवस्सुल न भी प्राप्त हो तो कम से कम आरम्भिक चरण में उसे शेख की तवज्जोह (ध्यान) प्राप्त हो जाती है।

प्यारे साथियों! ध्यान की दो क़िस्में हैं। एक तो यह कि शेख अपने तसर्रुफ से तुम्हारे दिल को बदल दे, लेकिन यह दशा स्थायी नहीं होती। दूसरा तरीक़ा यह है कि तुम शेख का आज्ञापालन करो, उसकी पसंद और नापसंद का ख़याल रखो, उसे अपने दिल में बसाओ, उसको खुश रखो, उससे अपने आप शेख के दिल में तुम्हारा प्रेम पैदा हो जाएगा। तुम्हारा ख़्याल शेख के दिल में लगा रहेगा। तो जब अल्लाह तआला की नज़र शेख की ओर होगी और वह शेख को अपनी विशेष कृपा प्रदान करेगा तो जब तुम उसके दिल में पहले से बैठे रहोगे तो तुम्हें भी उस कृपा से अपना हिस्सा मिल जाएगा।

शेख से तवस्सुल, तवज्जोह और सम्पर्क (राबिता) के लिए नक्शबन्दी ख्वाजाओं के मज़ारों की ज़ियारतें उद्देश्य की प्राप्ति के लिए लाभदायक समझी गयी हैं। हमारे मौलाना शेख नाज़िम को उनके शेख अब्दुल कादिर दाग़िस्तानी ने छह महीने तक शेख अब्दुल कादिर जीलानी के पवित्र मज़ार पर ध्यान लगाने (मुराक़बा) का आदेश दिया था। शेख के व्यक्तित्व में आप जो कश्फ और करामात देखते हैं, यह उन्हीं बुजुर्गों की आत्माओं की कृपा का परिणाम है। हमारे शेख वह कुछ देखते हैं जिसके देखने की सामान्य आँखे साहस नहीं कर सकतीं। वह हमें भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं से भी अवगत कराते हैं और उनकी निगाहें अपने शैखों की कृपा के कारण अल्लाह के निकटवर्ती फ़रिश्तों की सभा पर भी होती हैं। यह जो आप अल्लाहहू का गुणगान करते हैं इसे मामूली मत समझिए। *कुन* (हो जा) की आवाज़ ने इस ब्रह्माण्ड की रचना की और हू की सरमस्त फ़कीराना आवाज़ उसके भविष्य का निर्णय करती है। नादान लोग कहते हैं कि तुम यह क्या अल्लाहहू अल्लाहहू करते हो, यह कौन सा इस्लाम है। नादान तो नादान ही होते हैं। वह इस बात से परेशान हैं कि वास्तविक इस्लाम लोगों में लोकप्रिय हो रहा है। एक ऐसा इस्लाम जो लोगों को अनुकरण करना सिखाता है। जहाँ लोगों के लिए अपनी व्यक्तिगत पसंद और नापसंद की गुजांइश बाकी नहीं रह जाती। यह पैग़म्बर का इस्लाम है, अल्लाह के औलिया का इस्लाम है जो उनके क़दमों में बैठने से ही मिलता है। हमारे पैग़म्बर (सल्ल०) ने कहा है कि अन्तिम ज़माने में मुसलमान 72 सम्प्रदायों में बँट जायेंगे, आज वही हो रहा है। कोई कहता है कि मैं कमालिस्ट (कमालवादी) मुसलमान हूँ, कोई कहता है मैं सेकूलर मुसलमान हूँ, कोई कहता है कि मैं मुसलमान तो हूँ लेकिन इसके साथ ही कम्यूनिस्ट भी हूँ, डेमोक्रेट भी हूँ, फेमिनिस्ट भी हूँ। अल्लाह, अल्लाह कितनी क़िस्में हो गयी हैं मुसलमानों की। यह सब भटके हुए हैं, वास्तविक इस्लाम अल्लाह के पैग़म्बर का इस्लाम है जिसे नक्शबन्दी ख्वाजाओं की सुनहरी कड़ी ने हमें सीना ब सीना पहुँचाया है। आज सारी दुनिया वास्तविक इस्लाम से भयभीत है। अब यहूदियों को लीजिए, वह कहते हैं कि तुम्हारे मुसलमान रहने से हमें कोई परेशानी नहीं है लेकिन कुरआन में कुछ ऐसी आयतें हैं जो हमारे लिए स्वीकार्य नहीं। उनका कहना है कि हमإن الدين عند اللّٰہ الإسلام *इन्नदीन इन्दल्लाहिल इस्लाम* (निस्सन्देह अल्लाह के निकट दीन तो इस्लाम है) पर विश्वास न करें, अब आप बताइए चौदह सौ वर्षों से हम जुमा के खुतबे में यह कह रहे हैं कि इस्लाम के अतिरिक्त कोई धर्म प्रामाणिक नहीं है, अल्लाह के यहाँ स्वीकार्य नहीं है। वह कहते हैं कि माडरेट मुसलमान बनो।

उन्हें हमारे पहनावे पर भी आपत्ति है। वह चाहते हैं कि हम देखने में उन्हीं शैतानों की तरह लगें। मैं कहता हूँ कि तुम्हारी बेसबॉल हैट तुम्हें मुबारक, तुम्हारे सिर बेसबॉल की तरह लगते हैं, आध्यात्मिकता से रिक्त। तुम उन पर जो चाहो रखो, वह चाहते हैं कि हम ये ढीले-ढाले कपड़े पहनना छोड़ दें जिसको पहनकर मर्द की वजाहत स्पष्ट होती है।

वह चाहते हैं कि उनकी तरह तंग चिपकी हुई जिन्स में हमारा भी रक्त-प्रवाह रुक जाए और धीरे-धीरे पश्चिम वालों की तरह हम भी अपना पुरुषत्व खो दें। वास्तव में उन्हें मर्दों से डर लगता है, और मुसलमान मर्द होते हैं। वह चाहते हैं कि उनके आस-पास मर्दों की बजाए केवल औरतें दिखायी दें। मर्द-औरतें, जिनपर आसानी से नियन्त्रण पाया जा सके। और फिर यही लोग मर्द और औरत की बराबरी का नारा लगाते हैं। औरतों से माँग करते हैं कि वह मर्दों की तरह रहें। यह शैतानी योजना है, दुनिया पर नियन्त्रण की शैतानी योजना। क्या आपको नहीं मालूम कि अल्लाह का आपसे यह वादा है कि जब तक इस ज़मीन पर एक मोमिन मर्द भी मौजूद होगा अल्लाह के नूर (प्रकाश) को कोई नहीं बुझा सकता। जब तक मुसलमानों का फिरक-ए नाजिया (सफल होने वाला सम्प्रदाय) इस ज़मीन पर जीवित रहेगा और पैग़म्बर (सल्ल०) की सुन्नत जारी रहेगी बातिल (झूठी विचारधाराओं) को सफलता नहीं मिल सकती। आज सुन्नत का अनुकरण करने वालों में नक्शबन्दी मुरीदों से बढ़कर और कौन है? हम सुन्नत के अनुसार पहनते ओढ़ते, खाते-पीते और चलते फिरते हैं। इस बात का ध्यान रखते हैं कि आप (सल्ल०) की कोई सुन्नत हमसे छूटी न रह जाए। रसूल (सल्ल०) के सच्चे अनुगामी कभी झुकाये नहीं जा सकते। उनके दिल खुदा के प्रकाश से भरे होते हैं। उनके पीछे क़ायनात की ताक़त होती है। यदि वह जलाल (प्रताप) में आ जाएँ तो पलक झपकते परिदृश्य बदल जाए लेकिन हमें अपने जलाल को नियन्त्रण में रखने का आदेश दिया गया है। क्या आप उन हदीसों से अवगत नहीं कि प्रतिष्ठित सहाबा (पैग़म्बर के साथियों) के सामने कई बार ऐसे अवसर आते जब उनके लिए अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) के जलाली क्षणों में आपके सामने बैठना संभव न होता। अल्लाह के पैग़म्बर जब जलाल की स्थिति में बोलते तो ऐसा लगता कि पूरी क़ायनात काँप रही हो। यह है ईमान वालों का वह जलाल जो हमें विरासत में मिला है। यह लोग हमें अपनी तरह औरत बनाना चाहते हैं जहाँ उनके बच्चे कहते हैं मेरे बाप तो बिल्कुल मेरी माँ की तरह हैं। इनसे डर क्या लगे वह तो स्वयं मेरी माँ से डरते हैं। यह एक तरह की बीमारी है, एक महामारी है जो पश्चिम में फैली हुई है। इसका इलाज हकीमों की दवाओं और वियाग्रा से नहीं हो सकता। यह हमारी वर्तमान स्थिति देखकर समझते हैं कि मुस्लिम उम्मत भी नामर्दी का शिकार है लेकिन ऐसा नहीं है। अभी अल्लाह के कुछ बन्दे इस ज़मीन पर बचे हुए हैं और बहुत से ऐसे हैं जो परोक्ष से बाहर आने के लिए उपयुक्त समय की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

भाईयों! परिस्थितियाँ गंभीर हैं। हम लोग आखिरी ज़माने में हैं। अल्लाह के पैग़म्बर ने फ़रमाया कि आखिरी ज़माने में जब मेरी सुन्नत भुलायी जा रही होगी............... क्या फ़रमाया आपने (सल्ल०)? "सुन्नत"! सुन्नत है क्या? क्या दाढ़ी रखना सुन्नत है? जी हाँ बिल्कुल। क्या पगड़ी बाँधना सुन्नत है? बिल्कुल। क्या दतुअन करना सुन्नत है? निःसन्देह। अपने अन्तःकरण के साथ-साथ सुन्नत के अनुसार अपनी वाह्य रूप-रेखा को

भी सँवारिये। कुछ नासमझ कहते हैं कि हमारे प्रत्यक्ष व्यक्तित्व को न देखो, हमारे दिलों को देखो। यह एक ग़लतफ़हमी है, शैतान का वसवसा है। कुछ कहते हैं कि यदि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) आज हमारे बीच होते तो यह करते, वह करते। इस तरह रहते और इस तरह पहनते। गुमराहों! यह तुम क्या कह रहे हो? क्या अल्लाह के पैग़म्बर काफ़िरों के पहनावे को अपनाते, उनकी तरह दिखाई देते? अल्लाह की पनाह कैसी बुरी बातें हैं यह सब, जो यह भटके हुए पश्चिमी देशों से प्रभावित मुसलमान करते हैं। इन वसवसों से अपने दिलों को पाक कीजिए। इस्लाम में अगर-मगर की कोई गुंजाइश नहीं। वास्तविक इस्लाम तो एक ही है। याद रखिए! इस्लाम में 500 नेकियों को अपनाने और 800 बुराईयों से दूर रहने की शिक्षा दी गयी है, जो लोग इस मार्ग पर चलना चाहते हैं, अल्लाह उनका मार्गदर्शन करता है। आज यदि कोई व्यक्ति चाहे कि वह इस्लाम पर पूरी तरह अमल करने वाला बने, सुन्नत का पालन करे तो उसका सड़कों पर चलना कठिन हो जाए। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया कि आने वाले दिनो में सुन्नत के अनुसार कपड़ा पहनना उतना ही कठिन होगा जैसे कोई व्यक्ति अपने सिर पर आग लेकर चल रहा हो। आज हम ऐसे ही ज़माने में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। सूट-टाई पहने हुए आप जिधर जाएँ, हर तरफ़ शान्ति दिखायी देती है। लेकिन सुन्नत के अनुसार कपड़ा पहनकर निकलने वालों पर सारी दुनिया की सवाल करने वाली नज़रें लगी होती हैं। सुन्नत का पालन करना कोई आसान काम नहीं। यह एक बड़ा मुश्किल काम है लेकिन हम उसे किसी कीमत पर छोड़ नहीं सकते।

उसके बाद اللّٰهم صل علىٰ محمد و علىٰ آل محمد و سلم، اللّٰهم صل علىٰ محمد و علىٰ अल्लाहुम्म सल्ले अला / मुहम्मदिन व अला / आल-ए मुहम्मदिन वसल्लिम, अल्लाहुम्म सल्ले अला / मुहम्मदिन व अला के परिवृत्तीय गुणगान ने एक बार फिर सभा को अपनी लपेट में ले लिया। कुछ देर अल्लाह हक, अल्लाह हय्य हय्य हय्य हय्य..... हक हक हक............ या या हय्य व या कय्यूम की आवाज़ से सभा गूँजती रहीं। फिर शेख ने أشهد أن لا إلہ إلا اللّٰہ و أشهد أن محمداً عبده و رسولہ अश्हदु अल्ला इलाह इल्लल्लाह व अशहदु अन्न मुहम्मदन अब्दुहू व रसूलुहू का कलिमा ऊँची आवाज़ में पढ़ा और लोग अगले कार्यक्रम के लिए तैयार हो गए।

शेख का जलाल अब कुछ बढ़ चुका था। फ़रमाया, जो लोग हमें मिटाने पर तुले हुए हैं, वह जान लें कि अल्लाह ने हमारे अन्दर एक नूर (प्रकाश) रख दिया है जिसे मिटाया नहीं जा सकता। तुम्हें क्या मालूम कि दुनिया नूर से बनायी गयी है। तुम इसे एटम कहो या मालिक्यूल, सूरज और चाँद में, ज़मीन और आसमान में हर तरफ़ नूर अपना काम कर रहा है। एटम के एक कण को जब वैज्ञानिकों ने तीन भागों में तोड़ा तो पता चला कि यह अलग होकर भी एक-दूसरे से निरन्तर सम्पर्क में थे। इस आकाशगंगा से बाहर और इसके अन्दर हर चीज़ नूर प्रकट कर रही है और हमारे अन्दर वही

मुहम्मदी नूर जो वास्तव में खुदा का नूर है, क़ायनात की रचना का नूर है, ख्वाजाओं और नबियों के सिलसिले से आया है। अल्लाह स्वयं नूर है, اللہ نورالسمٰوات و الأرض अल्लाहु नूरुस्समावाति वल अर्ज़ (अल्लाह आसमान और ज़मीन का प्रकाश है)। वह जिसे चाहता है अपने नूर से सन्मार्ग प्रदान करता है। हमारे बिना यह क़ायनात बची नहीं रह सकती। शैतानों की योजना कदापि सफल नहीं हो सकती।

हक और बातिल (सत्य और असत्य) की आखिरी लड़ाई का समय आ पहुँचा है। महदी (अलै०) अपने 99 खलीफाओं के साथ प्रकट होने के लिए अनुमति की प्रतीक्षा कर रहे हैं। शेख नाज़िम हक्कानी ने हमें यह शुभ सूचना दी है कि उनके आगमन का समय अब निकट आ पहुँचा है। वह अरब प्रायद्वीप के रूबउल खाली में एक बहुत गहरी गुफा के अन्दर शरण लिए हुए हैं। हज़ारों जिन्न उनकी सुरक्षा के लिए नियुक्त हैं, जल्द ही आखिरी लड़ाई अर्थात आर्मीगादून का बिगुल बजने वाला है। दुनिया उलट-पलट हो जाएगी। हाँ, ईमानवालों को कोई हानि नहीं पहुँचेगी। जो लोग नक्शबन्दी रास्ते से जुड़े हैं वह वास्तव में महदी की नाव पर सवार हैं जो वास्तव में अल्लाह की नाव है और जिसका पतवार स्वयं अल्लाह ने अपने हाथों में ले रखा हो और जिस काम पर अल्लाह के वली लोग नियुक्तहों उन्हें किस बात का डर है !

أَلَا إِنَّ أَوْلِيَاءَ اللَّهِ لَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ

अला इन्न औलिया अल्लाह ला खौफुन अलैहिम वला हुम यहज़नून (और जान लो कि निस्सन्देह अल्लाह के दोस्तों के लिए न तो कोई डर है और न वह दुखी होंगे) यह कहते हुए आप कुछ क्षणों के लिए रुक गए, फिर तेज़ आवाज़ में एक विशेष शैली में अल्लाह अल्लाह अल्लाह की आवाज़ लगाई। फिर कुछ लय के साथ أستغفراللہ أستغفراللہ अस्तग़फिरुल्लाह अस्तग़फिरुल्लाह का गुणगान प्रारम्भ हुआ। फिर अस्तग़फिर को विशेष उतार चढ़ाव के साथ अदा किया गया। सभा में सम्मिलित सभी लोग अस्तग़... ...... फि........... रुअल्लाह का गुणगान इस तरह करते रहे जैसे पास-ए अन्फास (प्राणायाम) में हू का झटका लगाते हैं। फिर खत्म ख्वाजगान की प्रचलित दुआओं का सिलसिला शुरू हुआ। पूरा वातावरण يا مفتح الأبواب، يا مسبب الأسباب، يا غياث المستغيثين या मुफत्तिहुल अबवाब, या मुसब्बिबुल असबाब या ग़यासुल मुस्तग़ीसीन के विलाप से गूँजता रहा। अचानक शेख ने शहादत की उँगली (तर्जनी) उठायी। फ़रमायाः

وَ أُفَوِّضُ اَمْرِیٓ اِلَی اللّٰہِ ؕ اِنَّ اللّٰہَ بَصِیْرٌۢ بِالْعِبَادِ

वउफव्वज़ो अमरी इलल्लाह इन्नल्लाह बसीरुन बिल इबाद। फिर अपनी तर्जनी का इशारा ज़मीन की ओर किया, एक पल रुकने के बाद फ़रमाया :

رابطۃ الشریفۃ مع السید شیخ محمد ناظم الحقانی و سیدی سلطان الأولیاء السید الداغستانی

राबिततुश्शरीफः मअ अस्स सैय्यदशैख मुहम्मद नाज़िम अल हक्कानी व सैय्यदी सुल्तानुल औलिया अस्सैय्यद अद्- दाग़िस्तानी। थोड़ी थोड़ी देर के बाद विभिन्न क़िस्म के स्मरण और फ़ातिहा का सिलसिला चलता रहा। कभी ورفعنا لک ذکرک व रफअना लक ज़िकरककी आवाज़ उठती और कभी وعلمتنی من تاویل الاحادیث व अल्लम्तनी मिन तावीलिल अहादीस वाली आयत पढ़ी जाती। यहाँ तक कि खत्म ख्वाजगान पर सभा सम्पन्न हो गई।

हाव हू के इस गूँजते हुए हंगामें में समय इतनी तेज़ी से गुज़रा कि पता ही न चला कि रात के दो बजने वाले हैं। सभा में सम्मिलित लोगों पर आनन्द और सुख का वही भाव छा रहा था। सामूहिक माहौल पर थकान या बोरियत का कोई एहसास न था। बल्कि कुछ लोग तो इस प्रकार ओत-प्रोत थे कि अपने आप को पहले से कहीं अधिक खुश और खुर्रम और आन्तरिक रूप से कहीं अधिक ताक़त महसूस कर रहे थे। यह गुणगान की सभा जो कभी हू के शब्द की आवाज़ से गूँजती और जिसपर कभी अपने दिल में गुणगान की खामोशी सन्नाटा फैला देती, कभी उपदेश की सभा का रूप ले लेती, विभिन्न रंगों और शैलियों के कारण सुनने और सुनाने वाले को समान रूप से भागीदारी का एहसास दिलाती रही। शेख अली ने जब उफव्वेज़ो अमरी इलल्लाह इलल्लाह कहते हुए अपनी तर्जनी आसमान की ओर उठायी थी तो आधी बन्द आँखों वाले बहुत से मुरीदों की प्रत्यक्ष दशा से ऐसा लगता था जैसे शेख अली के माध्यम से वह बुजुर्ग और महान अल्लाह के सम्पर्क में आ गए हों। कम से कम होजा उस्मान के चेहरे पर तो वही भाव और सन्तुष्टि थी जो मोमिन को अपने मामले अल्लाह के हवाले कर देने के बाद होती है। हाँ, जब शेख अली ने ज़मीन की ओर तर्जनी से इशारा किया और अपने शेख से सम्पर्क में आने की कोशिश की तो उसमें यह भाव न था। वह स्वयं भी जल्द ही कुछ चल-चलाव में इस चरण से आगे बढ़ गए। कहते हैं कि राबिता मअश्शैख (शैख के साथ सम्पर्क) प्रत्येक व्यक्ति के बस की बात नहीं होती। समय के या शेख ख्वाजाओं के ख्वाजा और इस माध्यम से अल्लाह के पैग़म्बर से सम्पर्क कम ही किसी के हिस्से में आता है। लेकिन मुरीदों को यह आदेश दिया गया है कि वह निराश न हों। अपना प्रयास करते रहें।

सभा एक असाधारण शुभ सूचना पर सम्पन्न हुई थीं। लोग आशावान थे। खुश व खुर्रम एक ओर अपने मामले अल्लाह के हवाले कर देने का सन्तोष था और दूसरी ओर ख्वाजाओं के ख्वाजा की मदद और सहायता, अल्लाह के पैग़म्बर का समर्थन और इस माध्यम से अल्लाह के समर्थन पर भी किसी सीमा तक भरोसा था जो उनकी सहायता के लिए अब बहुत जल्द महदी को सामान्य प्रकटीकरण की अनुमति देना ही चाहता था। इसलिए लोग किसी हद तक सन्तुष्ट थे कि आने वाला अब जल्द ही आ जाएगा और उनकी दशा सुधार देगा। लेकिन हमारे होजा उस्मान को न जाने क्या सूझी कि शेख अली

से विदा होने पर हाथ मिलाते समय उनका हाथ पकड़कर बैठ गए। निवेदन की शैली में कहने लगेः ऐ मेरे सैय्यद अब परिस्थितियाँ सहन नहीं हो रही हैं। शेख नाज़िम से कहिए कि वह अल्लाह से दुआ करे, शेख नक्शबन्दी से कहें, पीरों के पीर से विनती करें और सुनहरे सिलसिले के सभी शैखों को इस बात के लिए प्रेरित करें कि वह अल्लाह के पैग़म्बर की सेवा में हमारी बेबसी का मामला रखें। शेख नाज़िम ग़ौस-ए आज़म के चहेते हैं। उन्होंने बग़दाद में उनकी कब्र की मुजावरी की है, समय व्यतीत किया है, कृपा प्राप्त की है। अल्लाह अल्लाह कैसा ऊँचा स्थान है, ग़ौस-ए आज़म का। सभी वलियों की गर्दने उनके कदमों के नीचे हैं। यदि वह मचल जाएँ तो आश्चर्य नहीं कि अल्लाह महदी को प्रकट होने की अनुमति दे दे। बहुत हो गया ऐ मेरे सरदार, अत्याचार की इन्तहा हो गयी। ग़ाज़ा पर इसराईली बमबारी का इक्कीसवां दिन है। सारी दुनिया खामोश तमाशा देख रही है। अफग़ानिस्तान तबाह हो चुका, इराक निरन्तर उपद्रव और गृहयुद्ध का सामना कर रहा है, खाते पीते खुशहाल परिवार नष्ट हो गए। यतीम निर्दोष बच्चे और बेसहारा औरतें शरणार्थी कैम्पों में शरण लिए हुए हैं। पूरी दुनिया में प्रवास, शरणार्थी या रिफ्यूजी बन जाने वाले लोगों में 80 प्रतिशत लोगों का सम्बन्ध मुहम्मद (सल्ल०) की उम्मत से है। इस्लामी दुनिया पर अमेरिकी साम्राज्यवाद के शिकंजे सख्त हैं। अब तो कोई इस परिस्थिति पर विरोध प्रदर्शन भी नहीं कर सकता, कि कहीं ग्वान्तानामो बे के यातनागृह और इस तरह के अनगिनत यातना के केन्द्र उसे शिक्षा प्राप्त करने की निशानी बनाकर रख दें। यदि अब भी महदी न आए तो आखिर कब आयेंगे? यह कहते हुए होजा उस्मान का गला बैठ गया। उन्होंने शेख अली के हाथ को भावावेश में अपनी आँसू भरी आँखों और पेशानी से एक बार फिर चूमा। सिर उठाया, उनकी ओर देखा, संभवतः वह दुआ के लिए हाथ उठाये हों लेकिन ऐसा कुछ न हुआ।

शेख अली ने उनकी पीठ थपथपाते हुए कहाः उस्मान हमें सब्र का आदेश दिया गया है। हमें अल्लाह के आदेश में हस्तक्षेप की अनुमति नहीं। यह एक ऐसा रहस्य है जिसे इस ज़मीन पर इस समय शेख नाज़िम के अतिरिक्त कोई नहीं जानता। हमारे ख्वाजाओं से यह परिस्थिति छिपी हुईं नहीं। वह इन रहस्यों से अच्छी तरह अवगत हैं। उन्हें पता है कि अभी समय नहीं आया है। प्रतीक्षा करो हो जा प्रतीक्षा! क्योंकि हमारा काम प्रतीक्षा करना है, सब्र करते रहना है। अल्लाह के वलियों को बड़े चमत्कार प्रदान किए गए हैं और हमारे ख्वाजाओं के ख्वाजा पर तो अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की विशेष कृपा है। वह चाहें तो पलक झपकने में अपनी जलाली ताक़तों से दुश्मनों को नष्ट कर दें। लेकिन वह ऐसा नहीं कर सकते।

जिनके रुतबे हैं सवा उनकी सवा मुश्किल है।

होजा उस्मान एक क्षण तक विवश होकर शेख अली की ओर देखते रहे। फिर विवश होकर उठे, भारी क़दमों और दिल के बोझ के साथ बाहर आए। होजा की बैचेनी

और उम्मत के लिए उनकी चिन्ता ने मेरे दिल में उनके लिए सम्मान और प्रेम के भाव पैदा कर दिए थे। मुझे ऐसा लगा कि होजा एक सच्चे तलाश करने वाले, परिस्थितियों से परेशान, रास्ते की तलाश में भटक रहे हैं। कार में बैठते हुए मैंने प्रेम और सम्मान से वशीभूत होकर उनका हाथ दबाया और अकस्मात मेरे मुँह से निकलाः اللہ یحفظکم یا شیخ عثمان *अल्लाहु यहफिजकुम या शेख उस्मान* (ऐ शेख उस्मान अल्लाह आपकी रक्षा करे) पूछा, तुम अपनी सुरक्षा और बलाओं से बचने के लिए कौन सी दुआ पढ़ते हो। मैंने कहा मेरी दुआओं में सबसे प्रिय दुआ اللّٰہم أرنی الأشیاء کما هي *अल्लाहुम्म अरिनी अल अशियाओ कमाहेय* (ऐ अल्लाह हमें चीज़ों को वैसा ही दिखा जैसी कि वह हैं) है जो मुहम्मद (सल्ल०) की दुआ भी है अर्थात ऐ मेरे पालनहार मुझे चीज़ों की मूल वास्तविकता बता दे। कहने लगे बड़े पते की बात है। यह स्थान आसानी से हाथ नहीं आता। अल्लाह के औलिया को अल्लाह ने चीज़ों की वास्तविकता बता रखी है। हमारे शेख नाज़िम को अल्लाह ने यह क्षमता दी है, वह सैकड़ों मील दूर मुरीदों की दशा के बारे में अवगत हो जाते हैं, उनकी समस्याओं का समाधान करते हैं, ऐसी कई घटनाएँ मुझे मालूम हैं कि ठीक मृत्यु के समय मुरीदों को देखा कि शेख उन्हें जन्नत में ले जाने के लिए आ गए हैं।

जन्नत में? मैंने चकित होकर पूछा।

फ़रमायाः हाँ! मरणासन्न स्थिति में पर्दे हट जाते हैं। मरने वाला जो कुछ देखता है। वह हम नहीं देख सकते। ऐसी कई घटनाएँ सामने आयी हैं जब मरने वाले पर मौत का डर छाया हुआ था। लेकिन अचानक उसके चेहरे पर सन्तोष की लहर आयी। उसने कहा लो वह आ गए हमारे शैख। लेकिन यह कैसे पता चला कि मरने वाले ने क्या देखा?

वह अपने शेख को देखता है तुम्हें नहीं मालूम। वास्तव में तुम उस दुनिया के आदमी नहीं। मरते समय बेचैनी की हालत बहुत कठिन होती है। लेकिन यदि तुमने किसी चमत्कार वाले शेख के हाथ पर बैअत कर रखी है तो सभी मरहले आसान हो जाते हैं कि उस समय तुम्हारी जान मौत का फ़रिश्ता नहीं निकालता बल्कि तुम्हारा शेख तुम्हारे प्राण निकालकर मृत्यु के फ़रिश्ते के हवाले कर देता है। ऐसा इसलिए कि तुमने शेख से बैअत के कारण अपने ऊपर तसर्रुफ का पूरा अधिकार दे रखा है। यह तो साधारण शेख की बात है। हमारे शेख नाज़िम की तो बात की कुछ और है। वह तो कब्र में भी अपने मुरीदों का विशेष ध्यान रखते हैं। जब कब्र में दो फ़रिश्ते मुन्कर नकीर सवाल जबाब के लिए आते हैं और पूछते हैं कि तुम्हारा पालनहार कौन है? तुम्हारा दीन क्या है? तो शेख नाज़िम चुपके से अपने मुरीद के कान में बता देते हैं। मैं इसीलिए तो तुमसे कहता हूँ कि तुम भी जल्द से जल्द कोई शेख ढूँढ लो। इस तरह बेआसरा न फिरो। जीवन और मृत्यु का कुछ भरोसा नहीं।

यह कहते हुए होजा उस्मान ने मेरा कंधा थपथपाया। मैंने देखा कि वह काफी गंभीर हैं। इससे पहले कि वह मेरे लिए शेख का पता बताएँ और मेरी मुक्ति की पक्की व्यवस्था कर दें मैंने बात बदलते हुए कहा, अच्छा यह तो बताइए महदी का नक्शबन्दी सिलसिले में आना तो तय है जैसा कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने जाग्रत अवस्था में शैख नाज़िम को शुभ सूचना दी है और जैसा कि अहमद सरहिन्दी का भी यही आग्रह है। लेकिन इसका कैसे निर्धारण होगा कि उसका सम्बन्ध नक्शबन्दियों के किस समूह से होगा। वह हक्कानी नक्शबन्दी होगा या खालिदी, मुजद्दिदी होगा या असलमी, क्योंकि यदि वह खालिदी सिलसिले में आया तो नाज़िम हक्कानी का दामन थामने से क्या फायदा? फिर तो महमूद आफन्दी के पास चलना चाहिए। लेकिन वह तो कहते हैं कि महदी इस सदी में नहीं आएगा।

मेरी इस आपत्ति पर होजा उस्मान कुछ खामोश से हो गए। ऐसा लगा जैसे वह किसी उत्तर की तलाश में हों। मैंने सोचा पता नहीं होजा उस्मान से फिर मुलाकात हो या न हो। क्यों न चलते चलाते उनके हाथों में कुछ प्रश्न थमा दूँ कि प्रश्न यदि अपनी सभी विमाओं के साथ संकलित हो जाएँ तो सालिक (अल्लाह की तलाश करने वाले) के लिए वास्तविकता तक पहुँचने में देर नहीं लगती। इसलिए यह सोचकर मैंने होजा से कहाः होजा एक बात बताऊँ? उन्होंने अधूरी बन्द आँखों से मेरी ओर देखा, जेब से छोटी सी सुन्दर तस्बीह निकाली और उसे उँगलियों से घुमाते हुए पूरी तरह आश्चर्य बनकर बैठ गए।

मैंने कहा : होजा! सच बता दूँ! अब कोई न आएगा। आने वाला आ चुका। वह अल्लाह का अन्तिम पैग़म्बर था जो अल्लाह का आखिरी सन्देश हमारे हवाले करके जा चुका है। अब संसार के निर्माण और सुधार का काम हमें सम्पन्न करना है। हम जो उसके अनुगामियों में हैं, उसके उत्तराधिकारियों में हैं, हमारे हाथों में क़ुरआन मजीद के रूप में वह्य की तजल्ली थमा दी गयी है। यह सारे काम अब हमें सम्पन्न करने हैं। कोई मसीह, कोई महदी और कोई गायब इमाम अब आने वाला नहीं है। होजा ज़रा सोचो तो सही उम्मत के 1400 वर्षों के इतिहास में अनेक ऐसे गंभीर मोड़ आए जब उम्मत का चिराग़ बुझना चाहता था। पैग़म्बर की मृत्यु के ठीक बाद उम्मत अनिश्चितता का शिकार थी। फिर हज़रत उस्मान के क़त्ल के उपद्रव ने हमारे इस सामूहिक जीवन का तानाबाना बिखेर कर रख दिया। फिर वह दिन भी आया जब हुसैन असहाय और बेबसी की हालत में शहीद कर दिए गए। जब हुसैन के शहीद होने पर आसमान से हस्तक्षेप न हुआ। जब मंगोलों के हाथों बगदाद की पराजय के बाद भी कोई महदी प्रकट न हुआ, मुगल साम्राज्य का चिराग़ बुझा। तुर्क खिलाफत की बिसात लपेट दी गयी, हर दुर्घटना एक से बढ़कर एक थी जिसने हमारे सामूहिक जीवन की व्यवस्था बिखेर कर रख दिया, लेकिन महदी जब भी अनुमति की प्रतीक्षा करता रहा। ज़रा सोचो तो सही जब पैग़म्बर के दिल के

टुकड़े हुसैन की मदद के लिए आसमान से हस्तक्षेप न हुआ तो हम जैसे गुनाहगारों के लिए क्यों होगा।

होजा ने आश्चर्य से मेरी ओर देखा, ऐसा लगा जैसे कुछ कहना चाहते हों। आधी बन्द आँखों के साथ कुछ क्षणों के लिए चुप रहे। फिर मेरी सुरक्षा और मदद के लिए दुआ की। अपनी सुन्दर बहुमूल्य तस्बीह हाथों में थमाते हुए बोले : तबर्रुक है तबर्रुक इसे रख लो ज़िक्र करने में काम आएगी। मैं तुम्हारी किताबें पढ़ूँगा और तुम मेरी तस्बीह पर ज़िक्र पढ़ना।

होजा का यह उपहार सुनकर अचानक मुझे अपने पुराने सूफ़ी मित्र हाशिम महदी याद आए जिनके घर में एक बार इब्ने तैमिया की किताबें देखकर जब मैंने आश्चर्य प्रकट किया तब उन्होंने कहा था कि आजकल मैं इब्ने तैमिया को पढ़ रहा हूँ और इब्ने तैमिया कब्र में मेरी किताबें पढ़ रहे हैं। इससे बढ़कर और फ़रमाया कि एक दिन मैंने सपने में देखा कि इब्ने तैमिया मुझसे नाराज़ हैं, मैंने सफाई दी। मैंने कहा कि आदरणीय शेख आपको ग़लतफहमी हुई है, आप मेरी किताबें देखिए। मैंने उन्हें अपनी किताबें दीं जिसके उत्तर में इब्ने तैमिया ने अपनी किताबों का सेट मुझे दिया। इसलिए आजकल में उन्हें पढ़ रहा हूँ और वह कब्र में मेरी किताबों के अध्ययन में व्यस्त हैं। मेरे आश्चर्य पर हाशिम ने बताया कि क्या तुम्हें मालूम नहीं कि शिक्षा-दीक्षा का सिलसिला मृत्यु के बाद भी जारी रहता है।

लेन-देन के मामले में अधिकतर दिलवालों को मैंने नकद सौदे का आदी पाया है, इस हाथ दे और उस हाथ ले, इसलिए यह सोचकर मैंने होजा की दी हुई तस्बीह का उपहार शुक्रिया के साथ अपनी जेब में रख ली।

सुबह समुद्र के किनारे टहलते हुए मुझे बार-बार होजा उस्मान की याद आई जो हुसैन की याद पर पूरी तरह आश्चर्यचकित हो गए थे। भला हुसैन इब्ने अली (रज़ि०) से बड़ा सैय्यद और कौन होगा। यदि आध्यात्मिक लोगों के यहाँ सम्पर्क (राबिता), सच्चाई का प्रकटीकरण (कश्फ), मिलाप (तवस्सुल) की कोई हक़ीकत है तो उनसे बड़ा इस आध्यात्मिक दुनिया का रहस्य जानने वाला और कौन होगा। होजा अपनी बैचेनी को शब्दों में समेटने में असफल रहे। प्रत्यक्ष रूप से तो उन्होंने आधी बन्द आँखों वाले ध्यान में शरण ले रखी थी लेकिन उनकी बैचेनी से पता चल रहा था कि वह कुछ उसी तरह के असमंजस का शिकार हैं जो मिथकों की मारी क़ौमों की नियति हुआ करती है। कहते हैं कि नाज़ी जर्मनी में यहूदियों के रबाइयों और धर्मनिष्ठ यहूदियों को इस बात पर बहुत अधिक आश्चर्य था कि जब वह अल्लाह के चहेते बन्दे हैं और उन्हें तौरात के वाहक होने का सौभाग्य प्राप्त है तो यह कैसे संभव है कि अल्लाह उनके दुश्मनों को उनके नरसंहार की खुली छूट दे दे। ओशविट्ज़ के कैम्प में, जहाँ नाज़ियों के हाथों यहूदियों का सुनियोजित नरसंहार का सिलसिला जारी था, अधिकतर यहूदी बच्चे और बूढ़ों के होठों

पर गुणगान और दुआए जारी रहती। जिस किसी को तौरात का जितना भी भाग याद था या कहीं से कोई पन्ना हाथ आ जाता, वह उसको पढ़ने में लगा रहता। यहूदियों को विश्वास था कि अल्लाह अपने चहेतों को बचाने के लिए आसमान से सीधे हस्तक्षेप करेगा। लेकिन एक समूह के बाद दूसरा समूह गैस चैम्बर में डाला जाता और बचे रह जाने वालों के होठों पर गुणगान और तौरात के उच्चारण में और अधिक वृद्धि होती जाती। अन्ततः जब यहूदी क़ौम की एक बड़ी संख्या मौत के घाट उतार दी गयी तो यहूदी विद्वानों और चिन्तकों के लिए इस प्रश्न ने बुनियादी महत्व प्राप्त कर लिया कि वह खुदा के प्रिय बन्दे हैं भी या नहीं और यदि तौरात के वाहक होने के कारण वास्तव में उनका चुना हुआ समूह होना स्वीकार्य है तो अल्लाह ने अपने प्यारों को बचाने की व्यवस्था क्यों नहीं की। कहते हैं कि इस घटना ने यहूदियों की फ़िक्ही चिन्तनशैली को हिलाकर रख दिया। उनका धर्मज्ञान और उनका सृष्टि ज्ञान कठोर संकट की चपेट में आ गया। आज कुछ यही स्थिति और संशय महदी के उन प्रतीक्षा करने वालों के सामने है जो गढ़ी हुई रिवायतों के कारण सदियों से एक मसीहा की राह देख रहे हैं।

¼izdk'k dh uko½

एक दिन अपने होटल के झरोखे से बास्फोरस की धीमी लहरों को देख रहा था। समय लगभग तीसरे पहर का होगा। हल्की वर्षा के कारण क्षितिज धुला-धुला सा लगता था। धीरे-धीरे सूर्यास्त ने बादलों की धुंध में अपनी सुनहरी किरणों को इस तरह समोया जिसे देखकर न जाने क्यों कश्फ और करामात वालों की वह कहानियाँ याद आ गयीं जब उनकी रात की इबादत के कारण अंधेरी कुटिया से प्रकाश का एक मार्ग आसमान की ओर जाता हुआ प्रतीत होता है। क्या पता दूर ऊलू दाग़ की पहाड़ियों पर कोई आध्यात्मिक व्यक्ति ध्यानमग्न बैठा हो। मुस्तफा ऊग्लू ने पिछले कई दिनों से निरन्तर यह उम्मीद दिला रखी थी कि वह जल्द ही केशिशदाग़ (ऊलू दाग़) अर्थात राहिब पर्वत के सम्बन्ध में कोई बड़ी सूचना लाने वाले हैं। कहते हैं कि इन पहाड़ियों पर, जो पुराने ज़माने से ईसाई भिक्षुओं का आवास रहा है, आज भी परोक्ष के मनुष्यों के रहस्यपूर्ण क़दमों की चाप सुनाई देती है। वैसे तो ऊलू दाग़ आज पर्यटकों के लिए सर्दी के मौसम के मनोरंजक स्थान की हैसियत से प्रसिद्ध है। जहाँ चिकनी फिसलती बर्फ पर स्कॉटिंग का आनन्द लेने के लिए दूर दूर से लोग आते हैं। लेकिन दिलवालों के लिए यह एक गुप्त रहस्यमय स्थान है जहाँ कभी कभी कुतुबों के कुतुब और काशिउन पर्वत के चालीस अबदाल अपनी वार्षिक सभा के लिए एकत्र होते हैं। इन सभाओं में हम जैसे लोगों का तो गुज़र नहीं होता। हाँ कभी-कभी बास्फोरस की लहरों पर उन आध्यात्मिक लोगों की कोई प्रकाशित नाव जोश और मस्ती के संगीत और हाव हू के गाने से ओत-प्रोत दूर से गुज़रता दिखायी दे जाता है। कुछ लोग कहते हैं कि यह भी मात्र एक मरीचिका है। हाँ होजा उस्मान का कहना है कि उन्होंने इस नूरानी (प्रकाशित) नाव को एक बार अपनी आँखों से स्वयं देखा है। मैं अभी इन्हीं कल्पनाओं में खोआ हुआ था कि देखें मुस्तफा ऊग्लू आज क्या ख़बर लाते हैं। इसी दौरान टेलीफोन की घंटी बजी। दूसरी ओर वलीद और साजिद बोल रहे थे। कहने लगे कि हम लोग सुल्तान अहमद के क्षेत्र में आए थे। सोचा कि यदि आप होटल में मौजूद हों और सलाम दुआ की गुंजाइश हो तो हाज़िरी दे डालें। जल्द ही मुस्तफा ऊग्लू भी वहाँ पधारे। आज वह कुछ अधिक जोश में न थे। संभवतः अभी उनके हाथ वह बड़ी खबर न लगी थी जिसकी तसल्ली बल्कि शुभ सूचना वह कई दिनों से मुझे दे रहे थे। उन्हें कुछ बुझा-बुझा सा देखकर मैंने पूछाः लगता है कि काशिउन पर्वत के राहिबों का अभी इस्ताम्बोल आगमन नहीं हुआ है। फ़रमायाः 14

सितम्बर को अब कुछ ही दिन बचे हैं। कुछ और सब्र कीजिए अलबत्ता आज की रात आध्यात्मिक लोगों की एक सभा में आपके निमन्त्रण की व्यवस्था हो गयी है। चाहें तो वलीद और साजिद को भी ले लें। बास्फोरस पर नूर की नाव में समाअ की महफिल के साथ डिनर की कल्पना कुछ ग़ैर दिलचस्प भी नहीं।

विभिन्न कॉन्फ्रेन्सों में भाग लेने के लिए जब भी मैं इस्ताम्बोल आया किसी न किसी बहाने से बास्फोरस पर रात्रिभोज का समारोह आयोजित हो गया। हाँ, आज के रात्रिभोज का रंग-ढंग पूरी तरह अलग था। नाव के अर्द्धगोलाकार हॉल में चारों ओर दीवारों के किनारे कुर्सियाँ सजी थीं। एक किनारे जहाँ मंच का दृश्य था, समाअ में लगे हुए लोग अपनी गर्दनें झुकाए हुए श्रद्धापूर्ण समर्पण का एहसास दिला रहे थे। उपस्थित जनों में एक उल्लेखनीय संख्या जुब्बा और पगड़ी पहनने वालों की थी जिनकी ऊँची टोपियों और लम्बी और सफेद दाढ़ियों के कारण वह खुदा के तलाश करने वाले शेख मालूम हो रहे थे। वहाँ उपस्थित लोगों में मर्द और औरत दोनों थे। हाँ उनमें अरब मूल के पश्चिमी लोगों की अधिकता थी। कभी गोरे पश्चिमी भी दिखाई दे जाते थे। जल्द ही यह रहस्य खुला कि अल्लाह की तलाश करने वालों के वे विशिष्ट लोग जो जराही, नक्शबन्दी, मौलवी, क़ादरी और विभिन्न सिलसिलों से सम्बन्ध रखते हैं और जिनके केन्द्र अमेरिका और यूरोप में स्थापित हैं, वह अपने सिलसिलों की खानकाहों की जियारत (दर्शन) के लिए इस्ताम्बोल आते रहते हैं। इधर कुछ वर्षों से बास्फोरस की लहरों पर चलने वाले रात्रिभोज में परम्परागत बैली डांसर के आमने-सामने मौलवी नृत्य का तत्व भी सम्मिलित हो गया है। हाँ ऐसे रात्रि भोज कम होते हैं और इनका आयोजन स्थानीय खानकाहों के सहयोग से कभी कभी आध्यात्मिक पर्यटकों के आगमन पर हुआ करता है।

नाव ने तट को अलविदा कहा, थोड़ी देर कुछ हलचल की सी स्थिति रही। शीशे के प्यालों में विभिन्न रंगों के शर्बतों की ट्रे लिए फिरने वाली सेविकाओं के कदम रुके, लोगों ने अपना निर्धारित स्थान ग्रहण किया और एक युवक, जो चेहरे मोहरे से स्थानीय तुर्क लग रहा था, अरबी भाषा में मेहमानों के स्वागत के लिए मंच पर सामने आया। समाअ में व्यस्त लोगों ने अपनी झुकी हुई गर्दनों को सीधा किया और ढोल की धमाल पर ऊँची आवाज़ में संगीत के साथ *अरफ्तुल हवा* का बोधजनक गाना प्रारम्भ हुआ।

عرفت الھویٰ مذ عرفت ھواک ----- و اغلقت قلبی عمن عداک

अरफ्तुल हवा मुज़ अरफ्तुल हवाक...............व अग़्लक्तो कल्बी अम्मन अदाकवही लय, वही जोश, वही जज्बा, वही मस्ती। ऐसा लगा जैसे यह गाना पहले भी कहीं सुना हो। कहने वाला कह रहा था

و قمت أنا جیک یا من تری  خفا یا القلوب و لسنا نراک

أحبک حبین۔ حب ا□ھوی          و حبا لا نک أھل لذاک

व कुम्तु अनाजीक या मन् तरा   खफायल कुलूबु व लस्ना नराक

अ हब्बुक हुब्बैने- हुब्बुल हवा  व हुब्बन ले अन्नक अहलु लिज़ाक

ढोल की थाप लगातार तेज़ हो रही थी। सुनने वालों के दिल नाच रहे थे। कुछ लोग अपने शरीर हिलाकर इस बात का आभास करा रहे थे।

فاما الذی ھو حب الھویٰ      فشغلنی بذکر اک عمن سواک

फ अम्मल्लज़ी हुव हुब्बुल हवा.........      फशग़लनी बिज़िकराक अम्मन सिवाक

और जब गायक इस शेर पर पहुँचेः

و اما الذی انت اھل لہ --- فکشفک لی الحجب حتی اراک

فلا الحمد فی ذا و لا ذاک لی --- ولکن الحمد فی ذا وذاک

व अम्मल लज़ी अन्त अह्ल लहू............      फ कश्फुक ली अल हजबो हत्ता अराक

फलल् हम्दुफी ज़ा व ला ज़ाक ली.......  व ला किन्न अल हम्दु फी ज़ा व ज़ाक

तो ऐसा लगा जैसे दर्शन पर नियन्त्रण के सारे बाँध टूट गए हों। कुछ तो चलती हुई नाव का हिचकोला, कुछ जोश जगाने वाली संगीत की धमक और उस पर श्रोताओं की मस्ती और फिर ठीक इसी बीच सुनने वालों का नाचने में लीन हो जाना। रंग बिरंगी बदलती रोशनियों के वृत्त, सिमटते और बढ़ते दायरे, कुछ पल के लिए ऐसा लगा मानो हम इस्ताम्बोल के तट पर न हों, मोरक्कों के किसी जाविए में सभा में बैठे हों या फिर सदियों पहले इब्ने अरबी के स्पेन में हों, दर्शन के इच्छुक, देखने के शौकीन ।

'अरफ्तुल हवा' का जोश जगाने वाला गाना संभवतः एक तरह का आरम्भ करने वाला गाना था या सुनने वालों को वार्म-अप करने का प्रयास था क्योंकि वास्तविक नियमित कार्यक्रम तो इसके बाद आरम्भ हुआ।

एक बुजुर्ग, जो अपने रंग-रूप से समूह के सरदार या सभा के सभापति मालूम पड़ रहे थे, खिला हुआ रौबीला चेहरा, लम्बी सफेद दाढ़ी, ऊँची टोपी जिसके केन्द्र में नक्शबंदी टोपियों की तरह हल्का सा उभार, जुब्बा मोरक्कों की शैली का, हाँ चोग़ा परम्परागत सूफियों जैसा पहन रखा था, मंच पर पधारे। आते ही गाने की लय में दुरूद सलाम का जाप किया और कुछ राजनीतिक नेताओं की तरह सभा में उपस्थित लोगों की ओर हाथ उठाये शुभ सूचना दीः लोगों! अनीश्वरवाद और भौतिकतावाद की इस दुनिया में जहाँ हर तरफ सुन्नत को रौंदा जा रहा है और अल्लाह को न पहचानने के प्रदर्शन सामान्य रूप से हो रहे हैं, आप लोगों को इस प्रकाशित नाव की सवारी मुबारक हो। फ़रमायाः आप जिस नाव पर सवार हैं, उसकी हैसियत नूह की नाव जैसी है जो आ गया वह बच गया, इसके अतिरिक्त अब और कोई शरण का स्थान नहीं है। आइए आज इस रहस्य से पर्दा उठा दूँ, उन बातों को बयान कर दूँ जिनके सुनने की हिम्मत संभवतः नाव से बाहर रह जाने वालों को न हो। दरूद और सलाम हो उस पैग़म्बर (सल्ल०) पर जिसने हमें अपने उत्तराधिकार के लिए चुना है। यह कहते हुए एक बार फिर उन्होंने गाने

की लय में दरूद और सलाम से उपस्थित लोगों के दिलों को गर्मा दिया। फिर फ़रमाया : लोगों! हम अहल-ए सुन्नत वल जमाअत वाले चार ख़लीफ़ाओं को मानने वाले हैं, चार इमामों को अनुकरण योग्य समझते हैं। इसलिए समझ लो कि जिस तरह प्रत्यक्ष फ़िक्ह जाहिरी में अबू हनीफा (रह०), इमाम मालिक (रह०), शाफई (रह०) और इब्ने हम्बल (रह०) का अनुकरण अनिवार्य है उसी तरह परोक्ष (बातिनी) फ़िक़्ह में नक्शबन्दी, सुहरवर्दी, क़ादरी और चिश्ती सिलसिले की बैअत को हमारे लिए अनिवार्य किया गया है। जो लोग आन्तरिक फ़िक़्ह के महत्व से अवगत नहीं और जो केवल प्रत्यक्ष रूप से मुसलमान बने रहने को पर्याप्त समझते हैं। वह गंभीर ग़लती पर हैं। उनका धर्म अधूरा और नाक़िस है। यह क़ायनात के सीने का वह रहस्य है जिससे दिलवालों के अतिरिक्त और कोई अवगत नहीं है।

मर्दों और औरतों! आप लोगों ने हज़रत उवैस कर्नी का नाम तो सुना होगा, जी हाँ! वही उवैस कर्नी जो अल्लाह के पैग़म्बर से सीधी मुलाक़ात के बिना सहाबी होने का स्थान प्राप्त कर चुके हैं। जो अपनी बूढ़ी माँ की सेवा के कारण अल्लाह के पैग़म्बर के दरबार में उपस्थित न हो सके थे, जिन्हें अल्लाह ने ऐसा व्यक्ति बनाया जिनकी दुआएँ स्वीकार होती थीं और जो सृष्टि की निगाहों से इसलिए छिपे रहते कि कहीं लोग अपनी जायज और नाजायज इच्छाओं को लेकर उनसे दुआ कराने के इच्छुक न हों कि जब उनके हाथ अल्लाह के सामने उठ जाते तो दुआओं का स्वीकार होना निश्चित होता।

अब सुनिए कि उवैस कर्नी का महत्व हम कश्फ वालों के यहाँ इतना अधिक क्यों है। जिन लोगों ने जामी की شواهد النبوة शवाहिदुन नुबूव्वः (पैग़म्बरी की गवाहियाँ) और अत्तार की تذكرة الأولياء (तज़किरतुल औलिया) पढ़ी होगी वह इस वास्तविकता से अवश्य अवगत होंगे कि अल्लाह के पैग़म्बर स्वयं उवैस कर्नी से मिलने के इच्छुक थे। मृत्यु के समय आप (सल्ल०) ने अपनी मुबारक खिलअत उमर (रज़ि०) और अली (रज़ि०) को इस वसीअत के साथ सौंपी थी कि वह उसे उवैस कर्नी की सेवा में पहुँचा दें और उनसे उम्मत के लिए मुक्ति की दुआ कराने की याचना करें। कहा जाता है कि उन दोनों सहाबियों ने हज़रत उवैस कर्नी की सेवा में यह खिलअत पहुँचा दी। उम्मत के लिए मुक्ति की दुआ की याचना की जिसके उत्तर में हज़रत उवैस ने अल्लाह के दरबार में अपने हाथ उठा दिए। अल्लाह के सामने कुछ इस तरह सजदे में गिरे और इतनी देर तक गिरे रहे कि उमर और अली को यह सन्देह हुआ कि संभवतः आपकी आत्मा तत्वों के पिजड़े से उड़ चुकी है। निकट जाकर देखने का प्रयास किया। जिससे उवैस कर्नी की इबादत में व्यवधान पड़ गया। आपने सजदे से सिर उठाया। फ़रमायाः मैं तो अल्लाह से आज यह हठ किए बैठा था कि जब तक तू मुहम्मद मुस्तफा की वसीअत की लाज नहीं रखेगा, पूरी मुहम्मदी उम्मत की मुक्ति का वादा न करेगा, मैं सजदे से सिर नहीं उठाऊँगा और न ही तेरे प्रिय पैगम्बर के पवित्र कुर्ते को पहनूँगा। अल्लाह तआला ने फिर भी

मुझसे यह वादा किया है कि वह कबीला बनी रबिया और कबीला बनी मुजिर के भेड़ बकरियों के बालों की संख्या के बराबर मुहम्मद (सल्ल०) की उम्मत के पापियों को क्षमा कर देगा। यह सुनकर उमर फारूक़ और अली मुर्तज़ा ने खुशी से तकबीर का नारा लगाया। वलायत की तुलना में, जो अल्लाह ने उवैस कर्नी को प्रदान की, और जिसको प्रमाणित करने के लिए वलायत की खिलअत उमर और अली उनकी सेवा में लेकर आए, उस वलायत के मुक़ाबले में उन्हें खिलाफत बहुत कमतर चीज़ दिखायी दी। कुछ रिवायतों में है कि वलायत की तुलना में जब खिलाफत के महत्व की कमी हज़रत उमर फारूक़ के समक्ष स्पष्ट हो गयी तो उन्होंने बद्-दिल होकर खिलाफत छोड़ने का इरादा कर लिया। लेकिन फिर उवैस कर्नी के बार-बार कहने पर और इस विचार से कि ख़िलाफत न होने के कारण लोग भटक जायेंगे। आपने इस भार को सँभाले रखा। यह है वह महान अमानत जिसके हम वाहक हैं। उवैस कर्नी की यह वलायत की यह खिलअत सीना ब सीना नस्ल ब नस्ल विभिन्न रास्तों और सिलसिलों से होते हुए हम तक पहुँची है। यह एक बड़ा सम्मान है जो अल्लाह ने हमें पैग़म्बर से मुहब्बत के कारण प्रदान किया है। लोगों! बात लम्बी हो जाएगी। लेकिन एक घटना सुनाए बिना रहा भी नहीं जाता। कहते हैं कि उमर (रज़ि०) व अली (रज़ि०) को इस बात पर आश्चर्य हुआ कि उवैस कर्नी के मुँह में कोई दाँत नहीं। पूछने पर पता लगा कि जब उन्हें उहद के युद्ध में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) के पवित्र दाँतों के शहीद होने की सूचना मिली तो वह बहुत बैचेन हो गए। उन्हें यह बात सहन न हुई कि अल्लाह के पैग़म्बर के तो दाँत टूटे हों और उनके दाँतों पर इसका प्रभाव भी दिखायी न दे। पैग़म्बर (सल्ल०) के अनुकरण में सुन्नत के पालन के विचार से उन्होंने अपने दो दाँत तोड़ डाले फिर यह सोचा कि क्या पता आप (सल्ल०) के कौन से दाँत शहीद हुए हों और मैंने कौन सा दाँत तोड़ लिया हो, इसलिए इस विचार से उन्होंने जब तक अपने सारे दाँत न तोड़ डाले उन्हें अपनी सुन्नत की पैरवी पर सन्तोष न हुआ। कहते हैं कि इस प्रेम की कहानी को सुनकर उमर (रज़ि०) और अली (रज़ि०) के आँखों से आँसू जारी हो गए। उन्हें अपने समर्पण और पैग़म्बर (सल्ल०) के अनुकरण की भावना तुच्छ नज़र आई। लोगों! यह है वह पैग़म्बर (सल्ल०) का वह प्रेम जिसपर प्रत्यक्षतः दीवानगी और जुनून का गुमान होता है। लेकिन इसके बिना वलायत की खिलअत मिलती भी नहीं। यह जो हमारे दुरूद और सलाम के हंगामें हैं, जिन्हें ऊपरी नजर से देखने वाले अतिशयोक्ति बताते हैं और जिसे सुनकर वहाबियों का इस्लाम जाता रहता है, या रसूलल्लाह शैअन लिल्लाह की यही वह दीवानगी है जो हमें वलायत की खिलअत का भागी बनाती है। वलायत वह चीज़ है जिसके आगे दुनिया का पद और सत्ता, समय की ख़िलाफत तुच्छ है। जिसे वलायत की परख आ जाए वह कभी खिलाफत के लिए दौड़-भाग नहीं कर सकता। आपको संभवतः याद हो कि हज़रत उस्मान के क़त्ल के बाद जब लोग हज़रत अली (रज़ि०) के पास यह निवेदन करने के लिए आए

कि वह ख़िलाफत का पद स्वीकार कर लें तो उन्होंने स्पष्ट कहा कि उन्हें ख़लीफा बनने की बजाए मंत्री और परामर्शदाता की हैसियत से परामर्श देना अधिक पसन्द है। मुबारक हो कि आप वह सौभाग्यवान लोग हैं जिन्हें अल्लाह ने वलायत के कारवाँ के लिए चुना है। प्रेम और मस्ती की राह पर डाला। यहाँ शेख की हस्ती में समर्पित हो जाना, पैग़म्बर की हस्ती में निछावर हो जाना वास्तव में बचे रहने की ज़मानत है। आइए एक बार फिर सुरूर और मस्ती के साथ जोश में मुहम्मद (सल्ल०) के आल (सन्तान) पर दुरूद और सलाम भेजें। जिनके हाथ में विलायत की यह अमानत थमायी गयी है। यह कहते हुए उस समूह के शेख ने मुहम्मद (सल्ल०) की आल पर दुरूद का नग्मा कुछ इस तरह छेड़ा कि शेख हब्बूश की याद ताज़ा हो गयी ।

कुछ वर्षों पहले शेख हब्बूश अपने समूह के साथ लंदन आए थे। संभवतः 2005 ई० की बात है। लंदन के भूमिगत मार्ग में बम धमाकों की घटना अभी ताज़ा थी। इस्लाम और मुसलमान सन्देहों के घेरे में थे। उन्हीं दिनों रमज़ान की रातों में शेख हब्बूश ने يا أبا الحسن حياك *या अबल हसन हय्याक* का नारा लगाया और ऐसा महसूस हुआ जैसे लंदन के भयभीत वातावरण में अबुल हसन के अनुयायियों के सहमे-ठिठुरे जीवन को फिर से ऊर्जा मिल गयी हो, जीवन का पहिया सभी विरोधों को पार करता हुआ आगे की ओर चल पड़ा हो। विशेष रूप से शेख हब्बूशकी जादुई आवाज़ में जब क़सीदा आगे बढ़ा और ढोल की तरंग पैदा करने वाली थाप पर उन्होंने سبحانک یا دائم سبحانک علام الغیوب ۔سبحانک یا مفرج القلوب ۔ سبحانک من لهم فی کل شئ آیۃ *सुब्हानक या दायम सुब्हानक अल्लामुल गय्यूब सुब्हानक या मुफर्रिजल कुलूब सुब्हानक मन लहुम फी कुल्ले शैइन आयतुन* की आवाज़ लगाई और इसके साथ ही इस समाअ में भाग लेने वालों का नृत्य शुरु हुआ तो उपस्थित लोगों पर वह कैफ़ियत तारी हुई कि उन्हें इस बात का अनुमान ही न हो सका कि कब अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से सिफारिश करने की माँग का मामला मदद माँगने तक जा पहुँचा। मदद मदद या रसूलुल्लाह की जादुई आवाज़ में समाअ में सम्मिलित लोग नाचते रहे। शेख हब्बूश का गाना लय के साथ जारी रहा। ऐसा लगा जैसे कुछ देर के लिए उपस्थित लोग एक ऐसी शरणस्थली में जा पहुँचे हैं। जहाँ भय का कोई सन्देह नहीं। दिलवाले कहते हैं कि لا خوف علیهم ولا هم یحزنون *ला खौफुम अलैहिम वला हुम यहज़नून* (उन्हें कोई डर नहीं होगा और न वह दुखी होंगे) का अल्लाह का वादा जब सूफियों की सभाओं में इतना सच्चा-सच्चा सा लगता है तो फिर आखिरत में अल्लाह के औलिया के लिए क्या कुछ न होगा। मैं जब भी इन गानों को सुनता हूँ तो कविता और संगीत के जादूपन पर मुझे आश्चर्य होता है। अच्छे-अच्छों के होश खो जाते हैं और बुद्धि काम करना बन्द कर देती है। कितनी वशीभूत करने वाली ताक़त है इस जोश जगाने वाले गाने में। स्पष्ट रूप से तो यह दीन (धर्म) है।

पैग़म्बर से प्यार का श्रद्धापूर्ण प्रकटीकरण है और अंदर से गाने की धार्मिक भाषा में दीन के इन्कार की पूरी व्यवस्था।

इस समूह के मुखिया जो प्रत्यक्ष रूप से अपने ज्ञान भरी और सूफियाना भाषण के कारण शेख तरीकत मालूम होते थे। अब जो उन्होंने भाषण के बाद गायकों की शैली में दुरूद और सलाम का गान शुरू किया तो पता चला कि यह भाषण तो वास्तविक गाने की भूमिका मात्र था। उन्होंने शेख हब्बूश की तरह अबुल हसन को आवाज़ देने के बजाए विशेष लम्बी लय में फ़रमाया :

نادیت للبعض روحی لحیم عطشانہ
قاصد حمیٰ بغداد
لیأ تو بکأس الحال اروانی
کرمال جد ک یا باز حوِّلو علینا النظر
و أنا المحسوب جیلانی

नादैतु लिल-बअज़ि रुही लहीमुन अतशानहू
कासिदुन हमा बग़दाद
लेयतूब कासिल हाल अरवानी
करिमालिन् जद्दक या बाज़ हव्विलू अलैना अन्-नज़र
व अनल महसूबु जीलानी

फिर अल्लाह, या अल्लाह की आवाज़ कुछ देर तक कोरस (समवेत स्वर) में एक साथ गूँजती रही। फिर मूल गान कुछ इस तरह शुरू हुआ।

أخذت العهد فی اول زمانی --- لقیت العہد غالی یا اخوانی
دخلت حمارضاهم بالآمال --- و نلت منای من طیب الوصال
و فی دیوانهم شیخی الرفاعی --- و شیخی القادری الباز الجیلانی
فقیل یا فقیر من هم مشایخک --- فقال الباز الأشہب و الرفاعی

अखज्तुल अहदो फी अव्वल ज़मानी....
लकैतुल अहद ग़ाली या इख्वानी
दखल्तो हमन् रिज़ाहुम बिल आमाली............
व नलतो मनाय मिन तय्यबिल विसाली
व फी दीवानेहिम् शैखि र्रिफाई.......
व शैखिल क़ादरी अलबाज़ल जीलानी
फ कील या फकीरो मिन हुम मशाएखक...
फ क़ालल बाज़ अल अश्हबो वल रिफाई

अचानक गायकों ने गाने की लय बदली। सारंगी पर

يا شمس الاحسان يا قطب العرفان -- يا عبد القادر يا غوثی! يا بشریٰ جیلان

या शमसुल एहसान या कुतुबुल इरफान या अब्दुल क़ादिर या ग़ौसी! या बुशरा या जीलानी के गाने गाए जाने लगे।

شیخی عالی الجاه-- غوثاه یا غوثاه

أنتم للملهوف غوث--- أنتم أهل اللّٰہ

शैखी आली अल-जाह....... ग़ौसाहू या गौसाहू

अन्तुम लिलमलहूफी ग़ौसिन्........ अन्तुम अहलुल्लाह

की आवाज़ पर गायकों का ध्यान और सारंगी की लय दोनों तेज़ हो गयी। श्रोताओं पर एक तरह का भाव और मस्ती छाती जा रही थी। ज्यों-ज्यों मस्ती में वृद्धि होती, मरे हुए शैखों से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की माँग तेज़ होती जाती :

أدركنا شیخی یا رفاعی --- یا شیخ العرجاء

یا أہل الإمداد -- جودوا با أسیاد

نظرة منکم أهل الهمة-- قل عندی الزاد

یا أحباب اللّٰہ -- أنتم أهل الجاه

أهواکم و الشوق الیکم فی قلبی و اللّٰہ

अदरकना शैखी या रिफाई....या शैखिल इरजाअ......

या अहलल इमदाद......जूदू बिल असियाद

नजरतुन मिनकुम अहलुल हिम्मः....कुल इन्दी अलज़ाद

या अहबाबल्लाह............अन्तुम अहलुल जाह

अहवाकुम वश्शौकु इलैकुम फी कल्बी वल्लाह

अन्त में يا عبد القادر يا رفاعی يا بشریٰ جیلان *या अब्दल क़ादिर या रिफाई या बुश्रा जीलान* कई बार पढ़ने के बाद गाने का यह सत्र समाप्त हुआ। एक के बाद दूसरे गाने की बारी आती रही। कभी तुर्की भाषा में धमाल डाली गयी और कभी फारसी में मनक़बत (प्रसंशा गीत) सुनी गयीं। हाँ अधिकतर भाग अरबी के प्रशंसा गीतों पर आधारित रहा। संभवतः इसका कारण यह रहा हो कि मेहमानों में अरब मूल के अमेरिकी लोग अधिक थे। कुछ लोगों ने मोरक्कों वासियों जैसे जुब्बे भी पहन रखे थे। गायकों ने जिस ध्यान से गाने गाए, श्रोताओं ने उससे कहीं अधिक जोश और मस्ती की भावना में उसका स्वागत किया। अन्त में اللّٰہ یا اللّٰہ अल्लाह या अल्लाह की धमाल पर अचानक ढोल की आ़वाज ठहर गयी। समाअ में भाग लेने वालों नें गर्दनें झुकाकर सलाम करके विदाई ली। तालियों की ज़बरदस्त गड़गड़ाहट में रंगीन रौशनियों के बदलते वृत्त अचानक

गायब हो गए। अधूरा अन्धकार, रहस्यमय वातावरण, ट्यूब लाईट की सफेद भावहीन रौशनी में अचानक लुप्त हो गया। ऐसा लगा जैसे हम लोग किसी सपने से अचानक जाग उठे हैं।

ख्वाब था जो कुछ कि देखा जो सुना अफ़साना था ।

देखते-देखते सभा में उपस्थित लोग अपनी-अपनी सीटों से उठ खड़े हुए। कार्यकर्ताओं ने गोल मेज़ के चारों ओर कुर्सियों की व्यवस्था बदली और पलक झपकते में समाअ की मजलिस खाने की दावत में बदलती दिखायी दी। अब तक समाअ के दौरान नाव के बाहरी भाग से कबाब की सुगन्ध कभी-कभी अंदर आ जाया करती। अब कबाब की अच्छी तरह सजी-सजायी प्लेटें अन्दर आ रही थीं। मुस्तफा ऊग्लू ने नाव की छत पर अपेक्षाकृत खुले वातावरण में एक मेज़ की ओर इशारा किया और हम चारों ने उसपर अपना अधिकार जमा लिया। एक अधेड़ उम्र के ईरानी जोड़े ने मेज़ के पास दो खाली कुर्सियों को इस तरह देखा जैसे वह पूछ रहे हों कि क्या हम इसपर बैठ सकते हैं। हमने खुशी से उन्हें अपनी मेज़ पर भागीदार बनने की अनुमति दे दी। गर्मजोशी प्रदर्शन में यह भी पूछ बैठे कि यह मजलिस कैसी रही। कहने लगे गायकों की कला और समाअ के नृत्य में प्रत्यक्ष रूप से तो कोई कमी न थी लेकिन मस्ती पर ध्यान इतना केन्द्रित न था जो फिज़ की मजलिसों की विशेषता हुआ करता था।

फिज़? तो क्या आप मोरक्को के रहने वाले हैं, मैने जानना चाहा।

नहीं रहने वाला तो शीराज़ का हूँ। मेरा नाम जाफर है औरे मेरे साथ मेरी पत्नी फातिमा हैं। हम लोग लॉस एंजलिस में लगभग 20 वर्षों से रहते आ रहे हैं। मोरक्को, सीरिया, मिस्र, सूडान आदि देशों में बहुत अधिक आना-जाना रहा है।

तो क्या आप अरबी भाषा अच्छी तरह जानते हैं?

फ़रमाया : यदि मैं ईरान में होता तो उलमा के लिबास में आयतुल्लाह कहा जाता। कुम के मदरसे से पढ़ाई की है और छात्र जीवन में मिस्र और मोरक्कों में समय व्यतीत किया है।

फिर तो आप आयतुल्लाह जाफर शीराज़ी हुए। मुस्तफा ऊग्लू ने सद्‌आचरण प्रकट करते हुए उनकी ओर हाथ मिलाने के लिए हाथ बढ़ाया।

फ़रमाया : आयतुल्लाह न कहो केवल जाफर। और यह शीराज़ी तो मैंने इसलिए रखा है कि कभी-कभी कविताएँ लिख दिया करता हूँ।

जाफर शीराज़ी कुम के मदरसे से पढ़ाई करने के बाद एक आयतुल्लाह हैं और वह सुन्नियों की नूह की नाव पर सवार हैं। मेरे मन में अचानक कई प्रश्न उभर आए। पूछा अभी मजलिस के दौरान आपने जिन चार तरीकत के सिलसिलों के बारे में सुना क्या उनमें से किसी से आपका कोई नियमित सम्बन्ध है। फ़रमायाः सूफीवाद और इरफान (बोध) की परम्परा हम शीया लोगों के यहाँ बहुत पुरानी और बहुत गहरी है और सच

बताऊँ तो वास्तविकता यह है कि इस घाटी में शीया सुन्नी सब एक जैसे हैं। हमारी नज़र से देखिए तो यह सब कुछ अली के जलवे का प्रकटीकरण है। विस्तृत विवरण की बारीकी में मत जाइए। अली से वफादारी के बिना इरफान (बोध) निरर्थक है।

सूफिए बासफा मनम दम हमा दम अली अली

वलीद और साजिद जो अब तक जाफर शीराज़ी की बात बहुत ध्यान से सुन रहे थे, कहने लगे जी हाँ, हमारे यहाँ पाकिस्तान में भी अली (रज़ि०) दे दमदम अन्दर.... के बिना उर्स का समारोह और समाअ की कोई मजलिस सम्पन्न नहीं होती।

अरब दुनिया हो या भारतीय उपमहाद्वीप यहाँ इरफान (बोध) की मजलिसों के नाम पर जो कुछ भी पाया जाता है, उसका आरम्भिक विकास तो प्राचीन फारस (वर्तमान ईरान) में हुआ। पुराना फारस जिसमें ईरान के अतिरिक्त मध्य एशिया का बड़ा भाग सम्मिलित था। सभी उच्चकोटि के कलाकार दिलवाले कवि इसी क्षेत्र से उठे। उन्होंने अरब और ग़ैर अरब, पूरब और पश्चिम हर तरफ अपने प्रभाव डाले। अब यह और बात है कि किसी विशेष ज़माने में यह कला किसी विशेष क्षेत्र में अपनी पूर्णता को पहुँच जाए जैसा कि पिछली कई यात्राओं में मुझे मोरक्कों में महसूस हुआ। लेकिन आज भी मध्य एशिया की भाषाओं में प्राचीन कवियों की प्रशंसाएँ सुनिए तो आत्मा पर जोश के भाव तारी हो जाते हैं। जाफर शीराज़ी ने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया।

तो क्या आपको कभी वकालतुल ग़ौरी के सूफी नृत्य में भाग लेने का अवसर भी मिला है। मैंने उनके व्यापक अनुभव को देखते हुए जानना चाहा।

बोले : काहिरा की बात कर रहे हैं? वकालतुल ग़ौरी! बिल्कुल भावहीन फुसफुसा। वहाँ तबलों की धमाल भी है, हाव हू के हंगामें भी हैं परन्तु ये आपकी अन्तरात्मा को नहीं जगाते, यह सब कुछ एक स्वादहीन यान्त्रिक प्रक्रिया प्रतीत होती है। हाँ फिज़ की बात और है, या अबू शेख के संग्रह को लीजिए। जब गायक रोता है तो श्रोताओं का पूरा अस्तित्व विलाप बन जाता है। आँसू नहीं थमते। पैग़म्बर के प्रेम के ऐसे प्रकटीकरण से वकालतुल ग़ौरी को दूर का भी वास्ता नहीं। इसके विपरीत नासिर खुसरो की शायरी को किसी खुले मन वाले गायक की जुबान से सुनिए तो ऐसा लगता है जैसे आपकी दूषित आत्मा निरन्तर स्वच्छ और प्रकाशित होती जा रही हो।

जाफर शीराज़ी तो सूफीवाद के समुद्र से मोती निकालने वाले निकले। भारत पाकिस्तान से लेकर मोरक्को तक और मलेशिया से लेकर पश्चिम का संभवतः ही कोई प्रसिद्ध सूफी गायक हो जिससे वह परिचित न हों। मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। जब उन्होंने साबिरी भाईयों की खास लय में *भर दे झोली मेरी या मुहम्मद* (सल्ल०) की कुछ पंक्तियाँ भी सुना डालीं। अगर उनकी शैली पर ईरानी बोल की छाप न होती तो यह मानना कठिन होता कि उनकी उर्दू भाषा की जानकारी बस थोड़ी सी है।

मैंने पूछा कि विभिन्न देशों की आध्यात्मिक यात्राएँ, समाअ की मजलिसों में भाग लेना, दिलवालों से निकटता में उनकी इतनी दिलचस्पी का कारण क्या है? क्या वह वास्तव में समझते हैं कि इस्लाम का यह आध्यात्मिक साँचा ही इसका मूल साँचा है?

मेरे इस सवाल पर जाफर शीराज़ी कुछ सँभल से गए। फ़रमाया, कुछ लोग गाना सुनने के रसिया होते हैं। बोलना, बिना थके बोलना उनके लिए ख़ुशी की बात होती है। बोलने की अपेक्षा सुनना एक अभ्यास चाहता है। अधिक बोलने से दिल की आँखें वीरान हो जाती हैं जबकि अधिक सुनने से दिल की दुनिया प्रकाशित और ज्योतिर्मय हो जाती है। और जब आपके कान एक बार बोधपूर्ण गायन के रसिया हो जाएँ तो फिर इरफान (बोध) से कमतर कोई चीज़ निगाहों में जँचती ही नहीं। फिर समाअ जोश और मस्ती का सामान भी है। शब्दों पर मत जाइए कि गायक क्या कहता है। कौन सी बात शरीअत के विरुद्ध है और कौन सी बात विवेक के विरुद्ध। समाअ वाले जब अपनी इश्तेकाज की मंजिल पर जा पहुँचते हैं तो वे शब्द और अर्थ उन तक नहीं पहुँचते बल्कि केवल मस्ती और सुरूर भरी कैफियत उन तक पहुँचती है। यही वह चीज़ है जो मुझे विभिन्न देशों की विभिन्न सभाओं में लिए फिरती है। और हाँ एक राज की बात बताऊँ, यह कहते हुए उनकी आँखों में एक विशेष चमक पैदा हो गयी, चेहरे पर एक रहस्यपूर्ण मुस्कुराहट उभर आयी। फ़रमायाः यह सब मौलिक रूप से है तो अली का ही जलवा। यह अली का जादू है जो आज सिर पर चढ़ कर बोल रहा है। ज़रा देखिए तो सही, नक्शबन्दियों ने अपने सिलसिले से अली को हटाकर अबू बक्र सिद्दीक (रज़ि०) को रख दिया। लेकिन अहल-ए बैत (पैग़म्बर के घरवालों) के बिना उनका काम न निकल सकता था। इसलिए जाफर सादिक़ से उन्हें अपना सम्बन्ध जोड़ना पड़ा। और यह जो अभी आपने उवैस कर्नी की कहानी सुनी यह सब काल्पनिक बातें हैं। यह एक काल्पनिक और मिथकीय किरदार है जो अली की महानता कम करने के लिए गढ़ा गया। लेकिन अन्त में परिणाम क्या निकला। अली अली ही रहे। आज भी उम्मत पर अल्वी सैय्यदों की आध्यात्मिक सत्ता स्थापित है। स्वयं सुन्नियों का कोई जुमे का खुत्बा (भाषण) पंजतन के उल्लेख के बिना सम्पन्न नहीं होता। सच पूछो तो इस्लाम अली है और अली इस्लाम।

साजिद जो इस पूरे तमाशे में स्पष्ट रूप से गुमसुम से बैठे थे। वापसी में कहने लगे एक बात समझ में नहीं आती बल्कि बहुत सी बातें समझ में नहीं आयीं।

संभवतः इसीलिए जोश का भाव तुम पर अधिक प्रभाव जमाए रहा, मैंने उसे छेड़ने की कोशिश की। क्योंकि सूफीवाद के रहस्यों का बड़ा रहस्य यह है कि जो जितना कम समझता है वह उतना ही अधिक सुरक्षित होता है।

बोलेः नहीं यह बात नहीं है। वास्तव में मुझे आज एक बहुत भावनात्मक धक्का लगा है। अब तक तो मैं यह समझता आया था कि दाता मेरे दाता कहने वाले या ग़ौस-ए आज़म दस्तगीर का नारा लगाने वाले या सख़ी शहबाज़ से मदद के इच्छुक

नासमझ और अनपढ़ पाकिस्तानी मुसलमान हैं और यह सब कुछ उनकी अज्ञानता और इस्लाम से दूरी के कारण है। लेकिन आज यह जानकर आश्चर्य हुआ कि या ग़ौसाहू कहने वाले या रिफाई और अब्दुल क़ादिर से मदद माँगने वाले लोगों की अरब दुनिया में भी कमी नहीं। जब अरब अजम (ग़ैर अरब) हर जगह अल मदद या रसूलुल्लाह, या अब्दुल कादिर जीलानी शैअन लिल्लाह की आवाज़ उठ रही है तो फिर इस्लाम बचा कहाँ। आज पहली बार यह बात मुझपर स्पष्ट हुई कि ''दाता मेरे दाता'', की ध्वनि से केवल लाहौर का दाता दरबार नहीं गूँज रहा है बल्कि पूरी इस्लामी दुनिया सिवाय कुछ अपवाद के, एक अल्लाह को छोड़कर मुर्दों की पूजा के निरर्थक कार्य में लिप्त हैं। मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि फिर इस्लाम बचा कहाँ?

साजिद की यह प्रतिक्रिया यद्यपि स्वाभाविक थी लेकिन मुझे यह अनुमान नहीं था कि सफीन-ए नूर (प्रकाश की नाव) के हंगामें में प्रत्यक्ष रूप से गुमसुम बैठे इस युवक के दिल में विचारों का यह तूफान बरपा था। मैंने उसे तसल्ली देते हुए कहाः तुम्हारा कहना पूरी तरह ठीक है। हम मुसलमानों ने भी व्यावहारिक रूप से अल्लाह को उसके पद के अनुसार उसके कार्यों से निलम्बित कर रखा है। जिस तरह हिन्दूओं ने ब्रह्मा को ब्रह्माण्ड की रचना के बाद लम्बी छुट्टी पर भेज रखा है और उनके यहाँ विभिन्न देवी-देवता लोगों की आवश्यकताएँ पूरी कर रहे हैं। इसी तरह मुसलमानों में ग़ौस-ए आज़म को सबसे बड़ी मूर्ति की हैसियत प्राप्त हो गयी है जो अपने विभिन्न शिष्यों और वलियों के माध्यम से कुछ इस शान से हमारी आवश्यकताएँ पूरी कर रहे हैं कि सभी वलियों की गर्दनें उनके पवित्र कदम के नीचे आ गई हैं।

लेकिन यह जाल तो बहुत बड़ा है, साजिद ने अपनी बैचेनी प्रकट की।

हाँ! और तुम्हें यह जानकर और अधिक आश्चर्य होगा कि सामान्य रूप से जिन लोगों के बारे में यह प्रसिद्ध है कि वह सूफीवाद के विरोधियों में से हैं, वह भी इस जाल से बाहर नहीं। इब्ने तैमिया से तो तुम परिचित हो जिन्हें सल्फी आन्दोलन ने सूफीवाद का विरोधी प्रचारित कर रखा है। वह भी उसी सूफी सिलसिले के विस्तार हैं, वलायत के सम्प्रदाय के समर्थकों में से हैं, मुस्तफा ऊग्लू ने अपनी जानकारी से जलती आग पर तेल छिड़कने का प्रयास किया।

इब्ने तैमिया? तो क्या वह भी किसी सिलसिले में बैअत थे? साजिद अब पूर्ण रूप से आश्चर्य में डूब चुके थे।

वही खिरक-ए वलायत, जिसका आज नाव पर ज़िक्र आता रहा, अब्दुल क़ादिर जीलानी से अबू उमर बिन कुदामा और उनके बेटे इब्ने अरबी उमर बिन कुदामा के सिलसिले से इब्ने तैमिया को पहुँचा और उन्होंने आगे उसे अपने विशिष्ट शिष्य इब्ने कय्यिम अल जौज़ीया को स्थानान्तरित किया जो मदारिजुल सालिकीन (सूफी पुस्तक منازل السائرين मनाज़िलुस्सायरीन की व्याख्या) के लेखक की हैसियत से प्रसिद्ध

हैं।بداء العلقة بلبس الخرقة बदाउल अलकः बिलब्सिल खिरकः (लेखक यूसुफ बिन अब्दुल हादी) में इब्ने तैमिया की यह स्वीकारोक्ति और उनके विस्तृत प्रमाण मौजूद हैं कि उन्हें क़ादरी सिलसिले समेत विभिन्न सूफ़ी सिलसिलों से सम्बन्ध का लगाव था।

साजिद के लिए यह सब कुछ एक खोज से कम न थी। कहने लगाः आज से पहले मुझे इस बात का अनुमान न था कि आध्यात्मिक लोगों ने इतने बड़े पैमाने पर अपना जाल फैला रखा है। जिसमें बड़ी से बड़ी मक्खी आकर चन्द पलों में अपना दमखम खो देती है। अब मैं सोचता हूँ तो आश्चर्य होता है कि पूरी दुनिया में लाखों लोग अनगिनत कब्रों की मुजावरी के काम में व्यस्त हैं। कव्वालियों की मजलिसें आयोजित हो रही हैं, धमाल डाले जा रहे हैं, उर्स और जियारतों का सिलसिला जारी है। समाअ और गानों की कला अपने शिखर पर है। समझ में नहीं आता कि इतने बड़े पैमाने पर मुसलमानों की ऊर्जा और उनका पैसा आखिर किस काम में नष्ट हो रहा है।

साजिद के विवरण के साथ ही उसकी बैचेनी बढ़ती जा रही थी। वह उम्र के जिस चरण में था उसके लिए अपनी भावनाओं पर नियन्त्रण रखना कठिन था। सफीना-ए नूर (प्रकाश की नाव) की यात्रा उसके लिए एक अजीब अनुभव थी, एक आँखें खोल देने वाला अनुभव। और मुस्तफा ऊग्लू के अनुसार इस अनुभव में वास्तव में उसके अन्दर का फ्यूज उड़ गया था।

## 16
# अल्लाह के पैग़म्बर
## और बुख़ारी का दर्स

इधर हाशिम फातेह के क्षेत्र में ही रह गए थे। बार-बार उनका फोन आ रहा था कि यदि संभव हो तो सुलूक (अल्लाह की प्राप्ति का मार्ग) की सात मजलिसों में अपने भाग लेने का कार्यक्रम निर्धारित कर लूँ। उनका कहना था कि यह एक अनोखा अवसर है जब नक्शबन्दी शैखों के बड़े-बड़े व्यक्तित्व सात विभिन्न सभाओं में इच्छुक लोगों को सुलूक के रहस्यों से अवगत करा रहीं हैं। ढाई दिन के इस विशिष्ट कार्यक्रम का उन्होंने जिस श्रद्धापूर्वक उल्लेख किया, उसने मेरे शौक को बड़ी सीमा तक बढ़ा दिया। कहने लगे कि आज रात की मजलिस एक तरह का उद्घाटन सत्र था जिसमें तरीकत के महत्व से सालिक लोगों को अवगत कराया गया। हमें यह बात भी बताई गई कि मानव जीवन को चार विभिन्न स्तरों पर व्यतीत करना संभव है। मानो यह चार अलग अलग संसार हैं जो अलग भी हैं और एक दूसरे पर आच्छादित भी हैं। अवाम कल अनाम (जनता जानवरों की तरह होती है) की दुनिया, नासूत (भौतिक) की दुनिया है जिसकी पहुँच पाँच इन्द्रियों से आगे नहीं। हाँ सालिक अपने अभ्यास और संघर्ष के माध्यम से मलकूत (आध्यात्मिक) दुनिया में पहुँच सकता है जहाँ तस्बीह (गुणगान) और तहलील (कलिमा ला इलाह इल्लाल्लाह) और खड़े होने और सजदा करने तक पहुँचकर उसके कदम रुक जाते हैं। यदि सालिक की आध्यात्मिक यात्रा जारी रही तो उसपर जबरूत (महानता) की दुनिया के दरवाज़े खुल जाते हैं जहाँ ज़ौक और शौक प्रेरणा और मदहोशी और भूल और यश उसकी सम्पूर्ण पूँजी होती है। अगली मंजिल लाहूत की दुनिया की है जो वास्तव में स्थान से परे है, जहाँ न बातचीत है और न ही जिज्ञासा और तलाश। हाशिम कहने लगेः बड़ी गहरी बातें हैं। काश आप इस कार्यक्रम में भाग लेते। यहाँ बड़े पुराने सालिक लोग हैं और सच्चाई के ऐसे खोजने वाले हैं जिन्होंने चालीस-चालीस वर्ष तक अल्लाह के गुणगान और संघर्ष में व्यतीत किया है। उन लोगों का कहना है कि जो बातें उन्हें वर्षों बुजुर्गों के साथ रहने में न मिलीं वह इस छोटी सी मजलिस में सहल-ए मुम्तनअ (इतना आसान कि उसे आसान कहना संभव न हो) के रूप में बता दी गयी हैं और सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि वह्य व इलहाम द्वार प्राप्त ज्ञान की शिक्षा के साथ ही ध्यान (मुराकबे) और अभ्यास (मुजाहदे) का कार्यक्रम भी रखा गया है ताकि सालिक के मन में किसी तरह का कोई भ्रम बचा न रहे। सच पूछिए तो ऐसा लग रहा है जैसे मुकाशफे का उचित मार्ग

अब जाकर मालूम हुआ है। कल हममे से प्रत्येक व्यक्ति पर एक सफेद चादर डाल दी गयी। लगभग एक घण्टे अंधेरे कमरे में हम लोग अपनी अपनी चादरों के अन्दर कश्फे-कब्र का अभ्यास करते रहे। कल्पना की दुनिया में कोई शेख सरहिन्दी की कब्र पर पहुँचा, किसी ने बहाउद्दीन नक्शबन्दी की कब्र पर ध्यान लगाया और किसी ने अपने जीवित शेख को अपने ध्यान का केन्द्र बनाया। मेरे साथ परेशानी यह थी कि मैं अब तक शेख से वंचित हूँ इसलिए मैंने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की बरकत वाली कब्र को अपने अभ्यास के लिए चुना।

बहुत खूब! मेरे मुँह से अकसमात निकल पड़ा। फिर परिणाम क्या हुआ मैंने जानना चाहा ।

बोलेः मुझे तो कुछ अधिक सफलता न मिली, बस हरे गुम्बद का दृश्य नज़रों में घूमता रहा। हाँ जिन लोगों ने जीवित शैखों को अपने ध्यान का केन्द्र बनाया था, उनका कहना है कि उन्हें इस दौरान कई बार ऐसा लगा जैसे उनके तरीकत के शेख कभी मूर्त रूप में और कभी वास्तव में उसके सामने आ पहुँचे हों। एक साहब ने तो यह भी बताया कि उनके शेख जो कैलिफोर्निया में रहते हैं वह अरबी भाषा में कुछ कह रहे थे जिसके अर्थ तक उनकी पहुँच न हो सकी। एक बात यह भी है कि इस सम्बन्ध में अपने अनुभव को किसी के सामने प्रकट करना उचित नहीं माना जाता। इसलिए बहुत कम लोग इसपर मुँह खोलते हैं, हाँ जब मैंने अपने अनुभव की असफलता का उल्लेख किया तो कुछ साथियों ने बताया कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से सीधे सम्पर्क स्थापित करना हम जैसे लोगों के वश की बात नहीं। इसके लिए किसी ऐसे शेख का दामन थामना आवश्यक है जो तुम्हें अल्लाह के पैग़म्बर के दरबार तक पहुँचा सके। बहरहाल दूसरे साथियों की तुलना में मेरी हैसियत तो नव आगंतुक की है। इस तरह देखा जाए तो अनुभव बुरा भी नहीं।

हाशिम के मुँह से सात मजलिसों का यह प्रारम्भिक अनुभव सुनकर मेरा शौक और बढ़ गया। सोचा इस अनोखे अवसर से अवश्य लाभ उठाना चाहिए। रात की उद्घाटन मजलिस सफीन-ए नूर में भाग लेने के कारण पहले ही हाथ से जाती रही थी। इसलिए अगली सुबह उपस्थित होने के वादे के साथ मैंने टेलीफोन बन्द कर लिया। वलीद और साजिद जो अब तक मेरी बात शौक और जिज्ञासा से सुन रहे थे, बोलेः क्या वास्तव में कल आप फातेह आयेंगे? फिर तो बहुत मज़ा आएगा लेकिन मुसीबत यह है कि हम दोनों इस कार्यक्रम में भाग नहीं ले सकते। हमें नए लोगों के साथ रखा गया है। पता नहीं आपको भी इसमें रसाई (पहुँच) मिल पायेगी या नहीं। हो सकता है शेख हमूद का माध्यम काम आ जाए। वह आपसे बहुत प्रभावित हैं।

नए लोगों के पाठ्यक्रम में तुम्हें क्या पढ़ाया जा रहा है? मैंने साजिद से जानना चाहा।

मेरे लिए पाँच हजार बार अल्लाह के नाम का गुणगान निर्धारित किया गया है और वलीद को प्रतिदिन इक्कीस हज़ार बार नफी-इस्बात यानी ला (नहीं) और इल्लल्लाह (सिवाय अल्लाह के) को बार-बार दुहराना है। इक्कीस हज़ार बार, मैंने आश्चर्य प्रकट किया ।

कितनी देर लगती है इक्कीस हज़ार बार अल्लाह का नाम लेने में ?

अभी तो आधा दिन निकल जाता है। हाँ अभ्यस्त लोग तीन घण्टे में इस प्रक्रिया को पूरा कर लेते हैं।

फिर जो लोग सुलूक के ऊँचे दर्जों में पहुँचते हैं। उन्हें तो बहुत समय खर्च करना पड़ता होगा?

जी हाँ! उन्हें गुणगान (जिक्र) के साथ-साथ ध्यान (मुराकबा) लगाना, कश्फ, ध्यान और सम्पर्क (राबिता) के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ता है। लेकिन कहते हैं कि यदि एक बार आप उचित मार्ग पर चल निकले और शेख की कृपा आपको प्राप्त हो गयी तो फिर जीवित और मरे हुए बुजुर्गों, कब्र वालों यहाँ तक कि अल्लाह के पैग़म्बर की जियारत (दर्शन) संभव हो जाती है। बल्कि पूर्ण वली तो सीधे खुदा के सम्पर्क में आ जाता है। अल्लाह से लेता और उसके बन्दों को बाँटता है। लेकिन इन सब बातों के लिए भरोसा और विश्वास की आवश्यकता है और इसी की अपने अन्दर कमी की शिकायत है। वलीद ने अन्दरूनी मुस्कुराहट के साथ विश्वास और सन्देह में लिपटी हुई बात कही।

वैसे शेख ने यह भी बताया है कि कश्फ-ए कब्र के लिए कब्र से निकटता उत्प्रेरक का काम देती है। हाँ एक बार यदि इस प्रक्रिया में सफलता मिल जाए तो कृपा का सिलसिला फिर रुकता नहीं, वलीद ने और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा।

तुम्हें यह मालूम करके आश्चर्य होगा कि हमारे कुछ प्रामाणिक उलमा ने कश्फ के माध्यम से बड़ी बड़ी मंजिलें तय की हैं। शाह वली उल्लाह का तो यह दावा है कि उन्होंने बिना किसी माध्यम के स्वयं अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से क़ुरआन मजीद पढ़ा है। और अब्दुल क़ादिर जीलानी का तो नियमित रूप से प्रशिक्षण अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) के हाथों हुआ है। बाद के उलमा में कासिम नानौतवी के बारे में कहा जाता है कि उन्हें कुछ कश्फ के माहिर लोगों ने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से बुखारी का पाठ पढ़ते हुए देखा है।

वली उल्लाह देहवली? मुस्तफा उग्लू ने आश्चर्यपूर्वक पूछा। वास्तव में उन्होंने ऐसी कोई बात स्वयं कही है या विरोधियों का दुष्प्रचार है? पक्के अकीदे वाले मुसलमानों का तो उनपर बहुत अधिक भरोसा है।

जी हाँ! उन्होंने अल फौजुल कबीर और फुयूजुल हरमैन में स्पष्ट शब्दों में यह बात कही है। बल्कि इसी पर क्यों जाइए शाह साहब ने तो अपनी किताब در ثمين فى مبشرات النبى الأمين दुर्रुन समीन फ़ी मुबश्शिरातिन् नबी (पैग़म्बर की शुभ सूचनाओं

में बहुमूल्य मोती) में ऐसी चालीस हदीसें नकल की हैं जो उनके पिता शेख अब्दुल रहीम ने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से सीधे सुनी हैं।

वास्तव में? यह सब कुछ हमारे प्रामाणिक उलमा की किताबों में मौजूद है? वलीद ने आश्चर्य प्रकट किया।

फिर तो कश्फ एक ऐसा चोर दरवाज़ा है जिसके माध्यम से इस्लाम में विभिन्न किस्म के उल्टे सीधे विचारों को प्रवेश करने का अवसर मिल सकता है। जिसका जी चाहे अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से एक नयी सूचना जोड़ दे। फिर तो सुन्नत का दायरा सीमाओं से बाहर निकल जाएगा। सिहाहे सित्ता (6 सही हदीस की किताबें) की रिवायतों पर तो आप बहस करते हैं। कभी रिवायत करने वाले की प्रामाणिकता सन्देह के घेरे में आ जाती है। यहाँ तो मामला यह है कि सुनने वाले ने सीधे अल्लाह के पैग़म्बर से सुना है और यदि कश्फ विश्वसनीय माध्यम है तो इन हदीसों का इन्कार भी नहीं किया जा सकता।

साजिद हमारी बातें बहुत ध्यान से सुन रहा था। वही गुमसुम जैसा रवैया जैसे यह बातें उसके लिए आविष्कार का दर्जा रखती हों। कहने लगा कि मैने सुना है कि शेख महमूद के यहाँ भी अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) स्वयं आते रहते हैं। एक बार संभवतः विवाह का या ऐसा ही कोई समारोह था, लोग अचानक उठ खड़े हुए। मजलिस में कुछ हलचल की कैफियत रही। पता चला कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) मुबारकबाद देने के लिए आए थे जिन्हें इस अवसर पर मौजूद सैय्यदों की आँखों ने देखा। क्या वास्तव में यह सब संभव है? आपका इस बारे में क्या विचार है। साजिद ने अपनी बैचेनी प्रकट की।

मैंने कहा कि चूँकि इस प्रश्न से बहुत से प्रश्नों के तार जुड़े हैं इसलिए इसपर गहन चिन्तन और शोध के बाद ही कोई दृष्टिकोण कायम करना चाहिए और चूँकि यहीं से दीन में बिगाड़ का चोर दरवाज़ा खुलता है और यह समस्या संवदेनशील और नाजुक भी है। इसलिए आवश्यक है कि तुम इस बारे में मेरा या किसी और का फ़तवा स्वीकार करने की बजाए एक शोधक की तरह सच्चाई की तलाश के माध्यम से इस रहस्य का समाधान तलाश करो। कुरआन मजीद की कसौटी पर कश्फ के दावेदारों को परखो। दूध का दूध और पानी का पानी अलग हो जाएगा। मैने उसे सन्तुष्ट करने का प्रयास किया।

लेकिन यह तो उम्मत का सर्वसम्मत अकीदा है कि आप (सल्ल०) अपनी कब्र में जीवित हैं? वह अपने सवाल पर ज़ोर देता रहा।

देखो सर्वसम्मत अक़ीदा तो केवल वह है जो स्पष्ट रूप से कुरआन मजीद में बयान कर दिया गया है। इसके बाहर जो कुछ है वह लोगों के अपने अनुमान हैं। इसका आधार किसी साहित्यिक विरासत या किसी रिवायत पर है। जिसपर शोध और आलोचना का अन्तिम कार्य करना अभी शेष है। हाँ तुम्हारी जानकारी के लिए यह बताता चलूँ कि बहुत

से बरेलवी उलमा की तरह, जिन्हें देवबन्दी लोग कब्र के पुजारी कहते हैं, देवबन्दी उलमा का भी यह अक़ीदा है, जैसा कि उनकी किताब *अल मुहन्नद अलल मुफ़न्नद* में लिखा है, कि आप (सल्ल०) अपनी कब्र में जीवित हैं और यह कि आपका यह जीवन सांसारिक जीवन की तरह है। यह बरज़ख जैसा नहीं है। जब एक बार यह बात फैल गयी कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) जीवित हैं तो फिर कश्फ वालों को आप (सल्ल०) से मुलाकात का सैद्धान्तिक आधार हाथ आ गया। इस तरह की एक प्रसिद्ध घटना शेख अहमद रिफाई की है। सन् 555 हि० में जब उन्होंने पवित्र कब्र पर खड़े होकर यह कविता पढ़ी :

فی حالۃ البعد روحی کنت أرسلها
تقبل الأرض  عنی و هي نائبتی
و هذه دولۃ الأشباح قد حضرت
فامدد یمینک کي تحظي□ها شفتي

फी हालतिल बुअदे रुही कुन्तो अर सलहा तकब्बलल अर्ज अन्नी व हेय नायबती
व हाज़ेही दौलतुल इश्बाह कद हज़रत फ अम्दद यमीनक कय तख्ता बेहा शफ़ती

अर्थातः मैं दूरी के कारण अपनी आत्मा को पवित्र पैग़म्बर की सेवा में भेजा करता था। वह मेरा प्रतिनिधि बनकर मुबारक कब्र को चूमती थी। अब शरीर की उपस्थिति की बारी आयी है अपना मुबारक हाथ दीजिए ताकि मेरे होंठ उसको चूम सकें।

कहते हैं कि इस कविता के उत्तर में मुबारक कब्र से आप (सल्ल०) का हाथ बाहर निकला जिसे शेख रिफाई ने चूम लिया। लेकिन शेख रिफाई तो फिर भी ज़माने की दूरी के कारण वास्तविक से कहीं अधिक मिथकीय चरित्र के वाहक हैं। सूफीवाद की किताबों में उनकी अप्राकृतिक घटनाओं का एक बड़ा भण्डार मौजूद है। हमारे ज़माने में वर्तमान युग के इतिहास में तबलीगी जमात के मौलवी ज़करिया ने बिल्कुल जागने की हालत में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से अपनी मुलाकात के दावे कर रखे हैं। ऐसे चालीस कश्फ की घटनाओं का उल्लेख बहजतुल कुलूब नामक किताब में उनके एक शिष्य मुहम्मद इकबाल ने मौलवी ज़करिया के व्यक्तिगत दिनचर्या की रौशनी में संकलित कर दिए हैं। मुझे कश्फ की सभी घटनाएँ तो याद नहीं। किताब बहुत पहले देखी थी, एक आध याद रह गए हैं। सुन लो! सुरक्षित होने के लिए इतना पर्याप्त है। लिखा है कि अब्दुल हई से कश्फ में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया कि ज़करिया की सेवा करते रहो। उसकी सेवा मेरी ही सेवा है और यह भी फ़रमाया कि मैं अधिकतर उसके कमरे में जाता रहता हूँ। कश्फ की कुछ घटनाओं में तिथि के निर्धारण के साथ लिखा है कि आज अमुक दिन जुहर के समय पवित्र पैग़म्बर मदरसे में मेरे आवास पर आए और मेरी ओर संकेत करके फ़रमाया कि मैं उन्हें जुहर की नमाज़ पढ़ाने आया हूँ। इस तरह के लतीफों पर आधारित कश्फ की बातों का एक बहुत लम्बा सिलसिला है जो विभिन्न बुजुर्गों के मुँह से

हमारे धार्मिक साहित्य में एक नस्ल के बाद दूसरी नस्ल में स्थानान्तरित होता रहा है। आपके यहाँ पाकिस्तान में तो अभी पिछले दिनों की बात है कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०), मिनहाजुल कुरआन के लेखक के कथनानुसार, उनकी वार्षिक सभा में भाग लेने के लिए प्रतिवर्ष पाकिस्तान आते रहे हैं।

यह बातें सुनकर साजिद कुछ दंग सा रह गया। कहने लगा कि यह तो बताइए कि यदि यह बातें सच हैं तो इनकी पुष्टि का तरीक़ा क्या है और यदि झूठ हैं तो उन्हें हमारे उलमा रद्द क्यों नहीं करते? इन रिवायत करने वालों को क़त्ल का अधिकारी क्यों नहीं ठहराया जाता। उन्हें उम्मत में प्रतिष्ठा और पवित्रता का अधिकारी क्यों समझा जाता है?

साजिद के प्रश्न की धार लगातार तेज़ होती जा रही थी। मैंने सोचा कि इससे पहले कि ये प्रश्न मुझे घायल करें, क्यों न उसे उचित दिशा में मोड़ दिया जाए। मैंने कहा, यही तो सबसे बड़ा प्रश्न है और तुम्हें एक सच्चे शिष्य की हैसियत से इस प्रश्न का उत्तर तलाश करना चाहिए।

# 17
# कब्रों का कश्फ़

दूसरे दिन निर्धारित समय पर मैं फातेह पहुँच गया। कार्यक्रम बस आरम्भ हुआ चाहता था। कुछ लोग इधर उधर खड़े गपशप करने में व्यस्त थे, सम्मेलन में भाग लेने वाले बहुत-से लोग हॉल के अन्दर फर्श पर सजी मजलिस में अपनी जगह ले चुके थे। एक ओर फर्श पर मंच बनाया गया था, जहाँ फर्श पर लगे सुन्दर मेज़ पर लैपटॉप और प्रोजेक्टर जैसी वस्तुएँ रखी थीं। शैख-ए तरीकत के आते ही दरुद सलाम की गूँज से सभा नियमित रूप से आरम्भ हो गयी। स्टेज के पीछे लगे बड़े स्क्रीन पर हरे गुम्बद का चित्र उदय हुआ और जब दुआओं का सिलसिला ख्वाजाओं की आत्माओं तक पहुँचा तो स्क्रीन पर ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबन्दी और सुनहरे सिलसिले के अन्य शैखों की कब्रों की तस्वीरें एक के बाद एक उभरने लगीं। कुछ देर तक सभा पर पूरी तरह सन्नाटा छाया रहा। संभवतः यह इस बात की ओर संकेत था कि सालिकीन मूक गुणगान या हृदय के गुणगान में लीन हैं। कुछ लोगों ने बताया कि खामोश रहने की यह अवधि वास्तव में सम्पर्क (राबिता) और शेख की कल्पना (तसब्बुरे-शेख) के लिए समर्पित थी कि कल पहली सभा में यह बात समझायी गयी थी कि शिष्य के लिए यह अनिवार्य है कि वह बन्द आँखों से अपने शेख की कल्पना करे। फ़ना फिश्शैख (शैख में विलीन) होना फ़ना फिल्लाह (अल्लाह में विलीन) होने की पहली मंजिल है। शेख से जितनी अधिक अनुकूलता होगी उतना ही उसके अन्तःकरण से कृपा प्राप्त हो सकेगी क्योंकि पीर की छाया हक के गुणगान से बेहतर है। उवैस कर्नी अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की कल्पना से कृपा प्राप्त करते थे। कश्फ प्राप्त करने वाले अल्लाह के औलिया की मज़ारों से कृपा प्राप्त करते हैं लेकिन चूँकि अल्लाह की तलाश करने वाले सामान्य लोग ऐसा नहीं कर सकते इसलिए उनको अपने शेख को बीच में रखना पड़ता है।

और अल्लाह ही बेहतर जानता है कि किसकी कल्पना में क्या था, मैं तो 15 मिनट की खामोशी में बन्द आँखों से भी यही दुआ करता रहा कि *अल्लाहहुम्म अरिनी अल अशयाओ कमा हेय* (ऐ अल्लाह मुझे चीज़ों को वैसा ही दिखा जैसी की वह हैं) उसी समय शेख तरीकत ने अल्लाहुम्म सल्ले अला की आवाज़ लगाई। सालिकीन के मुँह से दुरूद और सलाम के शब्द जारी हो गए। उधर स्क्रीन पर मौलाना रूमी का चित्र उभरा। क़ौनिया के कुछ दृश्य बदले और फिर मसनवी का पहला शेर स्क्रीन पर आकर रुक

गया। शेख तरीक़त ने बहुत अच्छे राग के साथ मसनवी के आरम्भिक शेर कुछ इस तरह पढ़े कि पीर अलाउद्दीन के मसनवी पाठ की याद ताज़ा हो गयी। फ़रमाया लोगो! हम नक्शबन्दी ख्वाजाओं के दास लोगों को शिक्षा देने के लिए नियुक्त नहीं हैं। शिक्षा देने और शिक्षा प्राप्त करने के लिए तो विश्वविद्यालय स्थापित हैं, जगह-जगह कॉलेज खुले हैं। शोध संस्थान काम कर रहे हैं। हमारा काम तो केवल आप को अपने आप से अवगत करवाना है। ऐसी युक्ति बतानी है कि आपके अन्दर छिपी हुई अदृश्य ताकतें जागृत हो जाएँ जिसे शैखों की भाषा में लतीफों की जागृति कहा जाता है। यदि केवल दिल का लतीफा जाग जाए तो आपके अन्दर लोगों के विचार पढ़ लेने की, उनके दिल का हाल जान लेने की योग्यता पैदा हो जाती है। लेकिन यह तो कश्फ का मात्र एक दर्जा है। अब जिसके सातों लतीफे जारी हो जाएँ उसकी ऊँचाई और महानता का क्या कहना। हाँ इस रास्ते पर कोई कदम आगे बढ़ाने से पहले हमें यह मालूम होना चाहिए कि हम हैं कौन? यदि हम सभी पर्दों को हटाकर ज़मीन से आसमान तक देखने की कोशिश कर रहे हैं और यदि हम यह समझते हैं कि हमारे लिए लम्बी दूरी को क्षणों में तय करना, व्यापक वातावरण में उड़ना, पानी की सतह पर चलना और वह सब कुछ करना संभव है जिसे सामान्य व्यक्ति की बुद्धि समझ नहीं सकती तो उसकी मौलिक वैधता क्या है? रूमी कहते हैं कि बाँसुरी से सुनो, वह क्या किस्सा सुनाती है। कहती है कि जब से मुझे जंगल से काटकर अलग किया गया है, मेरा विलाप सुनकर मर्द और औरतें रोते हैं। जो कोई अपने मूल से दूर हो जाता है वह अपने मिलन के दिनों को फिर से तलाश करता है। लोगों हमारी दशा भी इसी बाँसुरी की सी है। मनुष्य की आत्मा भी मौलिक रूप से एक प्रकाशीय सृष्टि है। जबसे हमें अपने मूल से काटकर इस दुनिया में भेजा गया है हमारा अन्तःकरण वियोग और अलगाव के कारण टूटा हुआ है। हम अपने प्रिय से मिलन अर्थात अपने मूल से मिलने के लिए बेचैन हैं। हमारी यह दुखी आत्माएँ जब किसी पूर्णता प्राप्त वली के साथ बैअत का सम्बन्ध स्थापित करती और अल्लाह की ओर ध्यान लगाती हैं तो उनपर अल्लाह से मिलन और उसकी कृपा की वर्षा आरम्भ हो जाती है। यहाँ तक कि उन्हें आत्माओं की दुनिया की सभी हालतें महसूस होने लगती हैं। ऐसे लोगों को चाहे वह जीवित हों या मरे हुए हों, आत्मा हों या शरीर, काल और स्थान.... पर उनको अधिकार प्राप्त हो जाता है। वह पलक झपकते ही तैउल अर्ज़ की कठिनाई पर विजय पा लेते हैं। (अर्थात कहीं से कहीं चले जाते हैं) इस यात्रा की पहली मंजिल शेख की कल्पना (शैल के ध्यान में लीन होना) है। तरीकत वाले लोगों के माध्यम के बिना यह सब कुछ संभव नहीं। यह कहते हुए शेख ने *सल्लू अलन नबी* (नबी पर दुरूद भेजो) का मस्ताना नारा लगाया। सालिकीन के मुँह से एक बार फिर दुरूह और सलाम जारी हो गया।

फ़रमाया, मेरे प्रिय लोगों! आप लोग सौभाग्यवान हैं कि आपको उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सबसे निकट और सबसे छोटे मार्ग की जानकारी दी जा रही है। हमारे मुजद्दिद

अल्फसानी (शेख अहमद सरहिन्दी) ने अपने पत्रों में लिखा है कि नक्शबन्दी तरीका सब रास्तों से निकट है। क्योंकि यहाँ माध्यम (वसीला) अबू बक्र सिद्दीक (रज़ि०) का व्यक्तित्व है जो पैग़म्बरों के बाद सबसे अच्छे इंसान हैं। हमारे नक्शबन्दी ख्वाजाओं ने अल्लाह से दुआ की थी कि उन्हें ऐसा तरीका दिया जाए जो सबसे निकट भी हो और मिलाने वाला भी। जिसके उत्तर में आपके ऊपर अल्लाह तआला ने यह आकाशवाणी की कि तुम सुलूक पर भावनाओं को वरीयता प्रदान करो। सूफीवाद के दूसरे तरीके अल्लाह को चाहने वालों को पहले बड़ी कठिनाईयों और अभ्यासों में डालते हैं। जैसे चालीस दिन लगातार दिन रात जागते रहना या लगातार भूखा रहना। दूसरे तरीकों में मन को पहले साफ किया जाता है लेकिन हमारे यहाँ मुरीद पहले दिन से ही अल्लाह के नाम के गुणगान के माध्यम से और शेख की कृपा के कारण, फ़ना (विलीन होना) और बक़ा (शेष रह जाना) का गुण प्राप्त कर लेता है। हज़रत मुजद्दिद ने हज़रातुल क़ुदूस में लिखा है कि उन्हें कश्फ से यह पता चला कि अल्लाह के नाम को भावना से अधिक अनुकूलता है। इसलिए हम नक्शबन्दियों के यहाँ पहले दिन से ही अल्लाह के व्यक्तिवाचक नाम को बार बार पढने की शिक्षा दी जाती है। नफी (इंकार) और इस्बात (इकरार) का नबंर बाद में आता है। हमारे यहाँ सुलूक की मंजिल जल्दी तय होने का कारण यह है कि शेख की कल्पना के कारण मुरीद को अपने शेख के अभ्यास से भी हिस्सा मिलने लगता है। हज़रत मुजद्दिद साहब ने हमें यह भी बताया है कि कभी कभी सिलसिले के दूसरे शैखों अर्थात कृपा प्राप्त हस्तियों की आत्माएँ सालिक के पास उपस्थित होकर मदद करती हैं। इसी प्रशिक्षण विधि का कमाल है कि कुछ सालिकों का प्रशिक्षण ऐसी आत्माओं के द्वारा होता है जो सदियों पहले अपने पालनहार से मिल चुकी हैं। सैय्यद अहमद बरेलवी के बारे में कहा जाता है, जैसा कि सिरात-ए मुस्तकीम में शाह इस्माईल शहीद देहलवी ने लिखा है, कि उनके आध्यात्मिक प्रशिक्षण के सिलसिले में ग़ौसुस सकलैन और ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबन्द की आत्माओं के बीच लगभग एक महीने तक इस बात पर मतभेद रहा कि कौन उन्हें आध्यात्मिक प्रशिक्षण के लिए अपनी निगरानी में ले। अन्ततः एक महीने की खींचतान के बाद इस बात पर समझौता हो गया कि दोनों मिलकर यह ज़िम्मेदारी अदा करेंगे। अतः एक दिन दोनों लोगों की आत्माएँ उनपर प्रकट हुईं और वह एक ही साथ दोनों सिलसिलों के रिश्तों का सौभाग्य प्राप्त कर सके। यह जो आप सूफीवाद की दुनिया में सुनते हैं कि अमुक व्यक्ति का फारुकी सिलसिले से सम्बन्ध है और अमुक व्यक्ति को सिद्दीकी सिलसिले से सम्बन्ध है अथवा अमुक को दो सिलसिलों की कृपा प्राप्त है तो इसका यही अर्थ होता है कि इन लोगों को बुजुर्गों की आत्माओं ने अपनी कृपा और मदद प्रदान की है। अब ज़रा विचार कीजिए नक्शबन्दी सिलसिले से जुड़कर आप कितने ऊँचे दर्जे के शैखों और कितनी ताक़तवर आत्माओं की तुरन्त मदद के हक़दार हो जाते हैं।

हमारे नक्शबन्दी बुजुर्गों में से एक बुजुर्ग इम्दादुल्लाह मुहाजिर मक्की ने रिसाल-ए मक्कीया में स्पष्ट रूप से लिखा है कि मुरीद को जानना चाहिए कि शेख की आत्मा किसी विशेष स्थान पर सीमित नहीं है। आध्यात्मिक दुनिया में निकट और दूर निरर्थक शब्द हैं जहाँ मुरीद होगा वहाँ शेख भी होगा। मुरीद को बोध प्राप्त हो या न हो। शेख को और उनके बुजुर्गों की आत्माओं को तो बोध प्राप्त होता ही है। फिर यह स्पष्ट रूप से संभव है कि शेख अपने मुरीद की सहायता के लिए तुरन्त उपस्थित हो जाए। शेख इम्दादुल्लाह ने यह भी निर्देश दिया है कि मुरीद हर समय शेख को याद रखे, इस तरह शेख से आत्मिक सम्पर्क स्थापित हो जाएगा। उसके व्यक्तित्व से हर समय लाभ प्राप्त होता रहेगा। और उसे जब कोई उलझन आएगी तो शेख को अपने दिल में उपस्थित मानकर अपनी स्थिति की भाषा में सवाल करेगा और इस तरह शेख की आत्मा अल्लाह के आदेश से उसको उन उलझनों का समाधान बता देगी। हाँ इसके लिए निरन्तर सम्पर्क अर्थात 'रब्त-ए दवाम' शर्त है। और हाँ मेरे प्यारों! यह भी जान लो, मुजद्दिद अल्फ सानी ने हमें सूचना दी है कि बुजुर्गों की आत्माओं से जब भी मदद माँगी जाए वह मदद के लिए तुरन्त पहुँच जाती हैं।

सूफीवाद की दुनिया में आत्माओं से कृपा प्राप्त करने का मामला कोई नया नहीं है। हाँ इसके विभिन्न चरण हैं, सबसे पहले आपका शेख जिसपर आपको पूरा भरोसा होना चाहिए, यह समझिए कि आपने अपने आप को पूरी तरह उसके हवाले कर दिया। आप शेख की आँख के इशारे को समझने लगे हैं। उसके हर आदेश का पालन करने के लिए अपने अन्दर श्रद्धापूर्ण आमादगी पाते हैं। उठते बैठते आपका शेख आपकी नज़रों के सामने रहता है। इस स्तर की आमादगी जब तक प्राप्त न हो, यह समझिए कि आपने अभी इस मार्ग में पहला कदम भी नहीं रखा।

दूसरा चरण बड़े शैखों की आत्माओं से कृपा प्राप्त करने का है। कब्रों के कश्फ का आसान तरीका यह है कि दो रकअत नफ्ल नमाज़ पढ़कर कब्र में दफन व्यक्ति की आत्मा को उसका पुण्य भेजा जाए। फिर कब्र पर उसके चेहरे के सामने बैठकर ध्यान लगाया जाए। इसी तरह कुछ नफ्लों की अदायगी के बाद आप अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की पवित्र कब्र की ओर अपना चेहरा करके बैठ जाएँ और बन्द आँखों से ध्यान मग्न अवस्था में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करें। यदि आपकी कल्पना और ध्यान ठोस होगा तो आपको कश्फ के माध्यम से अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त होगा। फिर आप उनके सामने अपनी दुआओं का प्रार्थना-पत्र भी रख सकते हैं और आप जानते हैं कि दोनों लोकों के सरकार की दुआ अल्लाह के सामने अवश्य स्वीकार होती है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की भेंट, आपसे बात करने का सौभाग्य प्राप्त करना, दुआओं की दरख्वास्त करना कोई सामान्य सौभाग्य नहीं। इसके लिए कठिन परिश्रम की आवश्यकता होगी लेकिन आप

घबराएँ नहीं, हिम्मत न हारें, नक्शबन्दी ख्वाजाओं की आत्माएँ आपको उस मार्ग पर आगे बढ़ाने के लिए हर समय तैयार हैं। इस मार्ग में अन्ततः वह चरण आकर रहेगा जब आप जागते हुए भी अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की भेंट का सौभाग्य प्राप्त करेंगे।

अब्दुल वह्हाब शेरानी ने लिखा है कि सल्फ (पूर्वजों) में कुछ ऐसे बुजुर्ग गुज़रे हैं जो अधिक दुरूद पढ़ने के कारण जब चाहते थे जागने की स्थिति में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से मुलाकात कर लिया करते थे। तरबियत-ए उश्शाक (आशिकों का प्रशिक्षण) में लिखा है कि अल्लाह के कुछ औलिया इस पद पर पहुँचे होते हैं कि वह पूरी कायनात को इस तरह देख सकते हैं जैसे कोई हथेली पर तिल देख लेता है और वह जिसे चाहें उसे दिखा भी देते हैं। मुझे आशा है कि ख्वाजाओं के ख्वाजा की दुआओं और मदद से आप सभी अल्लाह से मिलने के इच्छुक जो इस मार्ग में निकले हैं, अवश्य अपनी मंजिल को पहुँचेंगे।

शेख तरीकत के इस जोश भरे और हौसला बढ़ाने वाले भाषण के बाद दूसरी सभा सम्पन्न हुई। विद्युत प्रकाश मद्धिम कर दिए गए। आधे अंधकार वाले हॉल में एक बार फिर सालिक लोग शेख की कल्पना के अभ्यास में लीन हो गए।

# 18
# बन्द डिब्बे और सात लतीफे

तीसरी मजलिस के पीर-ए तरीक़त परम्परागत शिक्षकों की तरह अपने हाथों में कुछ पुरानी जिल्द चढ़ी हुई किताबें और नोट लेकर प्रकट हुए। किताबों में जगह-जगह रंगीन काग़ज़ों के टुकड़े संभवतः हवाले के उद्देश्य से लगाए गए थे। हुलिया वही नक्शबन्दी शैखों का, सफेद लम्बी दाढ़ी, तुर्की कमीज़ पर हरे रंग का जुब्बा, एक हाथ में किताबें और काग़ज़ात और दूसरे हाथ में नफीस सुन्दर छड़ी जिसे देखकर बुढ़ापे की छड़ी से कहीं अधिक निश्चेत लोगों को सचेत करने वाली छड़ी का ख़्याल आता हो। दुरूद और सलाम के बाद अपनी छड़ी हाथ में लेकर लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा। मेरे प्रिय लोगो! मेरी छड़ी के सुनहरे दस्ते पर एक शेर खुदा हुआ है। मैं चाहता हूँ कि आज बात इसी शेर से आरम्भ करूँ।

ऐ नक्शबन्द-ए आलम नक्श मुरा ब बन्द
नक्शम चुना ब बन्द कि गोइन्द नक्शबन्द

दोस्तों! एक बार ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबन्द अब्दुल क़ादिर जीलानी की मुबारक कब्र पर गए और उनकी कब्र पर उँगली रखकर कह दिया कि ऐ शेख अब्दुल क़ादिर जीलानी! खुदा के लिए मेरी मदद करें, मेरा नक्श बाँध दें। इसके उत्तर में हज़रत जीलानी ने आपको यह इल्का किया कि आप लोगों के दिलों पर अल्लाह का नक्श बाँध दिया करें ताकि अल्लाह के सिवाय सब का नक्श उनके दिलों से मिट जाए और आप विश्वास करने वालों में नक्शबन्द की हैसियत से जाने जायें। दोस्तो! यह बुजुर्गों की उन्हीं आत्माओं की कृपा है कि आज नक्शबन्दी सिलसिले को सभी सिलसिलों पर श्रेष्ठता प्राप्त है। हम शेख की कल्पना (तसव्वुरे-शैख) और कब्र के कश्फ के माध्यम से जो काम महीनों और सालों में कर लेते हैं, दूसरे सिलसिलों में ध्यान केन्द्रित करने की वह स्थिति कई जीवन व्यतीत करने के बाद भी प्राप्त नहीं होती। वास्तव में इन्सान का अस्तित्व एक ऐसा बन्द डिब्बा है जिसके एक सिरे पर एक छोटा सुराख हो जिसपर पाँचों इन्द्रियों का नुमाइशी बटन लगा दिया गया हो। यह जो आपके आस-पास चलते फिरते इंसान दिखायी देते हैं, यह सब बंद डिब्बे हैं, मुहर लगे हुए लिफाफे हैं, उन्हें क्या पता कि वस्तुओं की वास्तविकता क्या है? बन्द डिब्बों की मुहर तोड़ना और उनकी गुप्त क्षमताओं के बटन

ऑन करने का काम अल्लाह तआला ने अपने औलिया को सौंपा है। यह स्वतः प्राप्त वह ज्ञान है जो किसी किताब में नहीं लिखा गया और न कोई पन्ना उसके लिखे जाने को सहन कर सकता है। इसकी वास्तविकता का ज्ञान वही लोग रख सकते हैं जिनके लतीफे जागे हुए हों, जो स्वयं बन्द डिब्बा न हों बल्कि उनकी छिपी हुई शक्तियाँ पूरी तरह जाग रही हों और सक्रिय हों।

ज़रा सोचो यदि किसी का सिर्फ दिल का लतीफा जाग जाता है तो वह दूसरों के विचारों को पढ़ लेता है। उसके इरादों से अवगत हो जाता है। आप लोग सलूक के मार्ग के यात्री हैं। आपको यह जानना चाहिए कि यह बन्द डिब्बा जिसे कुछ लोग इंसान कहते हैं, एक सात पहलुओं या सात विमाओं की लतीफ (बारीक) आध्यात्मिक चीज़ है। जिसके सात दरवाज़े सात दिशाओं में खुलते हैं। पहला लतीफ-ए क़ालिबी (शारीरिक ढाँचा) अर्थात शरीर है। दूसरा लतीफ-ए अनफ़ुस (अर्थात् मन) है। तीसरा लतीफ-ए कलबी (दिल का लतीफा) जिसका अभी मैं उल्लेख कर चुका हूँ। चौथा लतीफ-ए रूही (अर्थात आत्मा का लतीफा) है। और पाँचवें को लतीफ-ए सिर्री (अर्थात छिपा हुआ लतीफा) का नाम दिया जाता है। छठा लतीफा खफी अर्थात परोक्ष लतीफा और सातवाँ लतीफा इख्फा कहा जाता है। यह अस्तित्व की विमाएँ भी हैं और दिशाएँ भी। बल्कि सच पूछिए तो एक नूरानी वस्तु को, जो अपने रचयिता से अलग होकर पुनः उससे मिलने के लिए तड़प रही है, उसकी दशा और रहस्यात्मकता को शब्दों में बयान किया जाना संभव नहीं है। इसीलिए कहते हैं कि सुलूक की मंजिलें बयान करने की नहीं बरतने की बातें हैं। आप लोग जब शेख की कल्पना (तसव्वुरे-शैख) में ध्यानमग्न होते हैं तो प्रत्येक व्यक्ति का अनुभव एक दूसरे से इतना भिन्न होता है जिसे सुलूक की किसी नियमावली अधीन नहीं किया जा सकता। नक्शबन्दी ख्वाजाओं के सामने समय-समय पर मुरीदों की ओर से विभिन्न समस्याएँ प्रस्तुत की गयीं। हमारे बड़े शैखों ने विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न समाधान बताए। केवल ऊपरी नज़र रखने वाले मुसलमानों को यह सब कुछ विचित्र लगता है इसलिए कि उनका डिब्बा बन्द है, उनके लतीफे जड़वत हैं। भला वह इन वास्तविकताओं को कैसे समझ सकते हैं। अब देखिए मैं इस बिन्दु को एक उदाहरण से स्पष्ट करता हूँ। हज़रत मुजद्दिद अल्फ सानी को किसी ख्वाजा मुहम्मद अशरफ ने अपनी एक मानसिक उलझन का उल्लेख करते हुए लिखा कि मेरी शेख की कल्पना इस सीमा तक प्रभावी हो चुकी है कि मैं नमाज़ में भी अपने शेख की कल्पना को अपना उपास्य जानता और देखता हूँ। यदि इंकार भी करूँ तो दूर नहीं होता। शेख ने इसके उत्तर में लिखा, जैसा कि पत्र संख्या 30 भाग 2 खण्ड 1 में लिखा है कि शेख की कल्पना का इन्कार करने की कोई आवश्यकता नहीं, यह वह दौलत है जो सच्चाई के इच्छुक लोगों की तमन्ना और आरजू है, हज़ारों में एक को मिलती है। परेशान होने की बात भी क्या है। वह शेख वह है जिसकी ओर सजदा किया जाता है, उसको तो सजदा नहीं किया जाता अर्थात उसकी

हैसियत उस व्यक्ति की है जिसकी ओर सजदा किया जाए न कि जिसको सजदा किया जाए। यदि मेहराबों और मस्जिदों की ओर सजदा करने से नमाज़ में खराबी पैदा नहीं होती तो एक परिपूर्ण मार्गदर्शक की तरफ सजदा करने से ऐसा कैसे हो सकता है। प्रत्यक्ष रूप से यह एक बारीक अन्तर मालूम होगा। लेकिन बन्द डिब्बे वाले इस बात से अवगत नहीं हो सकते। यह कहते हुए शेख तरीकत ने अपने काग़ज़ों का क्रम बदला। फ़रमाया कि जो लोग चाहें वह अपनी सुविधा के लिए हवाले की इन किताबों के नाम नोट कर सकते हैं। यह वह किताबें हैं, जिनपर हमारी तरीक़त की शरीअत आधारित है।

फिर फ़रमायाः शेख का प्रेम, उसका दिल में बसाना अपने आप में कृपा प्राप्त करने की साधन है। उसकी ओर ध्यान लगाते ही समझो सफलता का दरवाज़ा खुल जाता है जैसा कि पत्र संख्या 360, खण्ड 4, दफ्तर 1 में हज़रत मुजद्दिद साहब ने फ़रमाया हैः यदि कोई श्रद्धालु शेख में ध्यान लगाने में भी पारंगत न हो और अल्लाह के गुणगान में भी उसका दिल न लगता हो तब भी मात्र प्रेम के कारण मार्गदर्शन का प्रकाश उसको पहुँचता रहता है। पीर के बिना अभ्यास का कोई प्रयास फल-फूल नहीं ला सकता। यदि हमें इस सिलसिले के महत्व का अनुमान हो तो कोई सही दिमाग वाला आदमी पीर के बिना आध्यात्मिक कृपाओं की प्राप्ति के बारे में सोच भी नहीं सकता। कुछ लोग कहते हैं ओवैसी बन जाओ लेकिन जानना चाहिए कि यह वह पद है जो अल्लाह तआला या पैग़म्बर या बड़े-बड़े शेख की आत्माएँ स्वयं प्रदान करती हैं। अभ्यास से यह दौलत हाथ नहीं आती। यह एक बड़ी पेचीदा प्रक्रिया है जिसकी वास्तविकता से बहुत कम दिलवाले परिचित कराए गए हैं। मैं आपकी सुविधा के लिए कुछ उदाहरणों से स्पष्ट करने का प्रयास करता हूँ। देखिए यह बात तो सुलूक वालों के बीच सबको मालूम है कि बायज़ीद बुस्तामी को जाफर सादिक की आध्यात्मिकता से लगाव है जबकि उनका जन्म जाफर सादिक की मृत्यु के बाद हुआ। आपने यह भी सुना होगा कि अबुल हसन खरकानी को बायज़ीद बुस्तामी से सम्बन्ध प्राप्त है। इसी तरह बहाउद्दीन नक्शबन्द का प्रशिक्षण हज़रत खलील और ख्वाजा अमीर कलाल के हाथ से हुआ। लेकिन आपके बातिनी पीर अब्दुल खालिद गज्दवानी थे जो यद्यपि आपके आगमन से पहले दुनिया से जा चुके थे। परन्तु उनकी आत्मा ख्वाजा बहाउद्दीन के अन्तकरण में प्रकट हुई और इस तरह उन्हें अपने सीधे प्रशिक्षण में ले लिया। यह उन्हीं महान आत्माओं के मिलन का परिणाम था कि हज़रत बहाउद्दीन को सूफीवाद में यह ऊँचा स्थान प्राप्त हुआ। मात्र संघर्ष और अभ्यास से यह सब कुछ प्राप्त नहीं हो सकता। हज़रत बाकी बिल्लाह ने कब्र वाले से कृपा प्राप्त करने के लिए अपने पीर को माध्यम बनाने की नसीहत की है। अपने ख़लीफा (उत्तराधिकारी) ताजुद्दीन को वह लिखते हैं कि वैसे तो मंजिल हक को प्राप्त करना है। हमारा पर्दा बीच में न हो तो नुरुन अला नूर (प्रकाश के ऊपर प्रकाश) है। लेकिन पीर को बीच में न रखना विकास न करने का कारण बन जाता है।

मेरे प्यारों! यदि किसी की उँगली पकड़े बिना सुलूक के मार्ग पर चलना संभव होता तो मुइनुद्दीन चिश्ती जैसे व्यक्ति को अली हजवेरी के मज़ार पर चिल्ला करने की आवश्यकता क्यों होती। आप जिसे भी शेख बनाएँ उसकी बिना शर्त आज्ञापालन को अपना कर्त्तव्य समझें। शेख में फ़ना होने का अर्थ यही है कि सालिक अपने आप को शेख के व्यक्तित्व में घुला दे। उसका अपना अलग कोई अस्तित्व शेष न रहे। जिस तरह सूरज के सामने किसी चीज़ की छाया समाप्त हो जाती है और जब वह ओट में चला जाए तो उसकी छाया स्थापित हो जाती है। अल्लाह के पैग़म्बर चूँकि अल्लाह के अस्तित्व में विलीन हो गए थे। इसलिए रिवायत करने वालों ने लिखा है कि उनकी छाया नहीं बनती थी। मुरीद को भी इसी तरह फना फिश्शेख (शेख में विलीन) होना चाहिए। जब आप उस स्थान पर आ जाते हैं तो आप देखेंगे कि बैठे-बैठाए किसी अभ्यास के बिना अपने शेख से और शेख के शेख से बल्कि सुनहरी श्रृंखला की सभी आत्माओं से एक साथ असीमः कृपा प्राप्त कर रहे हैं।

हमारे शेख ने एक बार अपना अनुभव बताया कि एक दिन जब वह ध्यान मग्न थे तो क्या देखते हैं कि एक व्यक्ति की आत्मा जो हजारों मील की दूरी पर थी, वह उनसे इतनी कृपा लिए जा रही थी कि उन्हें ऐसा लगा जैसे वह खाली होते जा रहे हैं। ध्यान लगाया तो पता चला कि वह उनका ही एक मुरीद था जो इतनी दूर से उन्हें खाली किए जा रहा था लेकिन अल्लाह की कृपा चूँकि अनन्त होती है इसलिए शेख का दामन कभी खाली नहीं होता और हाँ यह भी जान लो कि कृपा का सिलसिला जीवित से मुर्दा और मुर्दा से जीवित की ओर समान रूप से जारी रह सकता है क्योंकि दिलवालों की दुनिया में मृत्यु और जीवन जैसे शब्द कोई अर्थ नहीं रखते। यह तो बन्द डिब्बे वालों की शब्दावलियाँ हैं आइए पूरा ध्यान केन्द्रित करके कश्फ प्राप्त करने का प्रयास करें।

अल्लाह हुम्म सल्ले अला / मुहम्मदिन व अला / आल-ए मुहम्मद व सल्लिम के वृत्तीय गुणगान के साथ ही बिजली की तेज़ रौशनी मद्धिम हो गयी और आधे अंधेरे माहौल में साँस रोकने के माध्यम से शेख से संपर्क और एकत्त्व का प्रयास और अधिक तीव्र कर दिया गया।

जुहर की अज़ान के साथ ही कश्फ का अभ्यास अपने अन्त को पहुँचा। इन दो मजलिसों से कुछ सीमा तक इस बात का अनुमान हो चला था कि सालिकीन के इस कार्यक्रम में आगे क्या होना है? सोचा चौथी मजलिस मग़रिब के बाद होगी। क्यों न इस दौरान जुर्राजी की खानकाह का एक चक्कर लगा लिया जाए। मुस्तफा ऊग्लू अंकारा गए हुए थे। उन्होंने ज़ोर दिया था कि वह मुझे लेकर जुर्राजी की ख़ानकाह में चलेंगे। उन्होंने इस सिलसिले में शेख बुरहानुद्दीन से बात भी कर ली थी लेकिन मैंने सोचा क्यों न विशेष अतिथि के रूप में जाने की बजाए एक फ़कीर आदमी की हैसियत से चीज़ों का अवलोकन किया जाए क्योंकि कभी-कभी विशेष और साधारण अवलोकन में वही अन्तर

हुआ करता है जो किसी वस्तु के प्रत्यक्ष और परोक्ष में होता है, बल्कि अनुभव तो यह बताता है कि किसी वस्तु के अवलोकन के लिए विशेष और सामान्य दोनों पहलुओं से उसका अध्ययन करना चाहिए। तभी वास्तविकता किसी सीमा तक स्पष्ट हो पाती है। अन्यथा विशेष लोग वास्तविकता के एक पहलू को देखते हैं जहाँ तक जनता की पहुँच नहीं होती और जो चीज़ जनता के हिस्से में आती है। विशेष लोग उसके अवलोकन से वंचित रहते हैं।

# 19
# नक़्शबन्दी जाल

एक बार की बात है मैं दिल्ली की जामा मस्जिद के क्षेत्र में अंजुमन तरक्की उर्दू की दुकान के सामने से गुज़र रहा था। उन दिनों मेरी किताब ग़ल्ब-ए इस्लाम अभी-अभी प्रकाशित हुई थी। गुज़रते हुए न जाने क्यों मुझे यह ख़्याल आया कि रुककर पूछना चाहिए कि मेरी किताब यहाँ उपलब्ध है या नहीं। पूछने पर पता चला कि किताब मौजूद है। मैंने कहा बस यही मालूम करना चाहता था ताकि यदि आपके पास न हो तो भेजवा सकूँ। दुकानदार ने मेरे बात करने के ढंग से भाँप लिया। पूछाः क्या आप ही उस किताब के लेखक हैं? पहले तो मैंने टालना चाहा फिर उनके बार-बार पूछने पर मेरे मुँह से केवल इतना निकलाः ''संयोग से''। मेरी यह बात अन्दर बैठे हुए एक बुजुर्ग बहुत ध्यान से सुन रहे थे। उठ कर खड़े हुए, तेज़ कदमों से चलते हुए मेरी ओर आए, हाथ मिलाने के लिए आगे बढ़ाया। फ़रमायाः संयोग से नहीं बल्कि सौभाग्य से। जबसे मैंने यह किताब देखी है अल्लाह से दुआ कर रहा हूँ कि वह मेरे लिए इस किताब के लेखक से मुलाकात का कोई रास्ता निकाल दे। मैं बूढ़ा आदमी हूँ, मेरे लिए सफर करना बहुत मुश्किल है। अल्लाह ने मेरी दुआ सुन ली और उसने स्वयं आपको मेरे पास भेज दिया। यह कहते हुए उन बुजुर्ग ने एक बार फिर सम्मान और स्नेह के साथ मेरा हाथ पकड़ लिया। दुकान का आधा हिस्सा बन्द कर दिया गया। उन्होंने अपने कुछ दोस्तों को मेरे आने की तुरन्त सूचना दी और अचानक हल्के-फुल्के आतिथ्य का प्रबन्ध कर डाला। ढेर सारी दुआओं और नेक तमन्नाओं के साथ विदा करते हुए फ़रमायाः मैंने आपकी किताब हज़रत जी को भी भेजवाई है और वह भी आप से मिलने के इच्छुक हैं। अभी तो आप अलीगढ़ जा रहे हैं। अगली बार जब दिल्ली आना हो तो मुझे सूचित कीजिएगा। मैं आपको साथ लेकर उनके पास चलूँगा।

कुछ महीनों बाद जब फिर दिल्ली आना हुआ तो मैं हज़रत जी से मुलाकात के लिए बस्ती हजरत निजामुद्दीन जा पहुँचा। जुमे का दिन था और लगभग १२ बजे का समय होगा। बँगला वाली मस्जिद में चहल-पहल का समाँ था। मैं हज़रत जी के बारे में पूछता हुआ एक ज़िम्मेदार व्यक्ति के पास पहुँचा। कहने लगेः अजी अगर आप हज़रत जी से हाथ मिलाने के लिए आए हैं तो आज इसका अवसर नहीं। बहुत कुछ बहस के बाद जब मैंने उन्हें यह बताया कि हज़रत जी स्वयं मुझसे मिलने के इच्छुक हैं तो कहने लगेः अजी कैसी बातें करते हैं हज़रत तो सभी इच्छाओं से ऊपर उठ चुके, उन्हें किसी

चीज़ की इच्छा नहीं। मैंने उन्हें दाँव मारते हुए कहाः क्या उन्हें अल्लाह की निकटता की भी इच्छा नहीं? एक युवा छात्र के मुँह से यह दुस्साहासिक बातें सुनकर वह साहब कुछ ठिठके, कहने लगे अच्छा अभी यहीं बैठिए। थोड़ी देर में नमाज़ होने वाली है। इस दौरान यदि मौका हुआ तो हज़रत जी तक सूचना पहुँचा दी जाएगी।

जुमे की नमाज़ के तुरन्त बाद वही साहब मुझे एक छोटे से कमरे में ले गए। क्या देखता हूँ कि एक बुजुर्ग व्यक्तित्व किसी पुरानी अरबी किताब के अध्ययन में लीन हैं। हाथ में पेन्सिल है जिससे वह कभी कभी किताब के हाशिए पर कुछ निशान बना देते हैं। मैंने अदब से सलाम किया और अपना परिचय कराते हुए अपने आने का उद्देश्य बताया। बुजुर्ग ने एक क्षण के लिए नज़र उठा कर मेरी तरफ देखा और फिर किताब के अध्ययन में लीन हो गए। मैं हाथ बाँधे खड़ा प्रतीक्षा करता रहा कि

देखिए पाते हैं उश्शाक बुतों से क्या फैज़

पाँच सात मिनट तक कायनात इसी तरह ठहरी रही। फिर आपने सेवक को पुकारा, कुछ निर्देश दिया, एक व्यक्ति खाली बाल्टी और लोटे में पानी लेकर उपस्थित हुआ। तब हज़रत जी ने फ़रमायाः हाथ धोइए। मेरी समझ में कुछ बात न आयी कि अचानक हाथ धोने की कौन सी बात निकल आयी। लेकिन चूँकि सुलूक के रास्तें में अधिक प्रश्न करने की मनाही है इसलिए मैंने यह सोचकर बिना आवश्यकता के हाथ धोना एक वैध (हलाल) कार्य है, विनम्र भाव से हाथ धोए। फिर हज़रत जी ने भी हाथ धोकर तौलिया से सुखाया। बिस्तर से उठकर खड़े हुए। फ़रमायाः आइए। अब मैं हज़रत के पीछे पीछे चला। पाँच छः लोगों ने हज़रत के चतुर्दिक सुरक्षा कवच सा बना रखा था। उन्हीं में से एक साहब ने मुझे अपनी कुहनी से इशारा किया कि आप हज़रत के बिल्कुल साथ साथ रहें पीछे रह गए तो फिर मुलाकात के सौभाग्य की संभावना जाती रहेगी। नीचे की मंजिल से होते हुए हम लोग पहली मंजिल पर पहुँचे जहाँ बहुत से लोग खाना खा रहे थे। ऊपरी मंजिल पर लोहे का एक गेट लगा था जिसके अन्दर प्रत्येक व्यक्ति को प्रवेश की अनुमति न थी। कुछ लोगों ने मेरी ओर सन्देह की दृष्टि से देखा कि शायद घुसपैठिया है लेकिन यह देखकर कि हज़रत के कदम से कदम मिलाकर चलता है और हज़रत उसे स्वयं लिए आते हैं, किसी को रोकने का साहस न हुआ। मैं भी हज़रत जी के साथ उस लोहे के दरवाज़ें में प्रवेश होने में सफल हो गया।

ऊपरी मंजिल पर १०-१२ लोग थे जो संभवतः हज़रत जी की प्रतीक्षा कर रहे थे। फर्श पर बिछे दस्तरखान पर खाना लगा हुआ था। बीच में एक गद्दा रखा था जिस पर हज़रत विराजमान हो गए। मुझे अपने सामने बिठाया, अब यह पता लगा कि हाथ धोने का यह आयोजन किसी बैअत के लिए नहीं बल्कि वास्तव में खाने का निमन्त्रण था। दस्तरख्वान पर दो तीन तरह की सब्जियाँ और गोश्त का सालन था। जगह-जगहं छोटी-छोटी कटोरियों में मुर्ग की भुनी हुई टाँगे रखी थीं। कहीं निकट ही किसी कोने से

लाने वाला गर्म गर्म फुलके ला रहा था। हज़रत ने मेरी ओर देखते हुए फ़रमायाः खाइए। शुरु कीजिए। मेरा ध्यान खाने पर कम और मजलिस में मौजूद लोगों के चाल-ढाल पर कहीं अधिक केन्द्रित था।

कोई फुलके पर फुलके साफ किए जा रहा था, किसी का ध्यान मुर्ग की भुनी हुई टाँगों पर था। कुछ लोग अपने डील-डौल के कारण देव हैकल व्यक्तित्व के मालिक थे, एक साहब की गर्दन के पिछले हिस्से पर असाधारण उभार उनके बेडौल शरीर और असंतुलित भोजन करने की चुगली कर रहा था। हज़रत जी की अपनी खुराक सन्तुलित थी और खाने के ढंग में बहुत अधिक शराफत थी।

मुझे नर्वस देखकर एक दो बार स्नेहपूर्वक फ़रमायाः खाइए न, लीजिए न, आप तो खाते ही नहीं। फिर फरमायाः "आप गलब-ए-इस्लाम करने चले हैं और आपके सर टोपी नहीं। आप को टोपी पहनना चाहिए।"

मैंने एक शिष्य की तरह नम्रतापूर्वक कहा कि मैं इसी लिए तो आप जैसे पवित्र लोगों की सभा में आया हूँ ताकि दर्पण के सामने अपनी कमियों का अन्दाजा हो सके और फिर अपने सुधार की प्रेरणा उत्पन्न हो।

फिर फ़रमायाः हाँ सुनिए यह आपने अपनी किताब के टाइटिल पर तस्वीर क्यों बना दी है।

मैंने इस ग़लती को भी तुरन्त मान लिया। अब मुझे आशा हुई कि हज़रत ने मुझे ग़ल्ब-ए इस्लाम के लेखक के रूप में पहचान लिया है। अब वह किताब की सामग्री पर अपना दृष्टिकोण प्रकट करेंगे। लेकिन खाने के बाद हज़रत ने किसी अतिरिक्त बातचीत या अगली मुलाकात का इशारा किए बिना केवल यह फ़रमाया कि अब मेरे आराम का समय है। मैंने सोचा शायद आराम के बाद मुलाकात की कोई नियमित व्यवस्था हो लेकिन उनके साथ रहने वालों ने बताया कि हज़रत से आपकी सविस्तार मुलाकात तो हो चुकी अब इससे अधिक मुलाकात और क्या होगी।

मैं बुझे दिलों के साथ वापस आ गया। तब इस बात का अनुमान न था कि धर्म के प्रचार का यह विश्वव्यापी मिशन जो प्रत्यक्ष रूप से सामान्य जागृति का एक लोकप्रिय आन्दोलन दिखायी देता है वास्तव में हक के अवलोकन के सूफी आन्दोलन का एक अंग है। जहाँ पशु सदृश्य जनता को बैअत की कठिनाइयों और अभ्यास और कश्फ की कठिनाइयों के बिना इस सिलसिले से जोड़े रखा गया है। एक विशुद्ध सूफी आन्दोलन को, जिसके बुजुर्गों की गर्दनें नक्शबन्दी बैअतों से बँधी थीं, एक आधुनिक संगठन का ढाँचा प्रदान करने का परिणाम यह हुआ कि पूरी दुनिया में इस्लाम का एक विचलित नक्शबन्दी सूफी ढाँचा सामान्य जनता का दीन बन गया है। वही क़िस्से कहानियाँ वही अप्राकृतिक घटनाएँ कब्रों के कश्फ के वही चमत्कार और बुजुर्गों की वही आश्चर्यजनक घटनाएँ,

तबलीग़ी जमाअत के लोगों की सोच बनाते हैं, जिन्हें सूफियों के मलफूजात में देखकर नेक लोगों के मन घृणित हो जाते हैं।

उपमहाद्वीप भारत और पाकिस्तान में नक्शबन्दी सूफीवाद के सिलसिले को इतनी असाधारण सफलता न मिलती और न ही दीन की नक्शबन्दी धारणा विश्व स्तर पर सामान्य मुसलमानों में इतनी लोकप्रिय हो पाती, यदि इसे मात्र बैअत और शेख की कल्पना (तसुव्वरे-शैख) की पुरानी रणनीति के द्वारा उसे आगे बढ़ाया गया होता। मौलाना इलियास और उनके साथी नक्शबन्दी सिलसिले से बैअत और इस्लाम की नक्शबन्दी धारणा द्वारा पोषित थे। उन्होंने मूर्ख जनता को जानवरों की तरह कश्फ और ध्यान के मार्ग पर तो नहीं लगाया लेकिन उनके दिलों पर कश्फ वाले लोगों की बड़ाई स्थापित की और सूफियों के बेबुनियाद किस्से कहानियों को प्रामाणिक धर्म के रूप में प्रस्तुत किया। परिणाम यह हुआ कि गज्दवानी और नक्शबन्दी का दीन तो दुनिया के सभी क्षेत्रों में फैल गया जबकि मुहम्मद (सल्ल०) का दीन स्वयं मुसलमानों में अजनबी बनकर रह गया।

तबलीग़ी जमाअत के संस्थापकों की नक्शबन्दी पहचान को ध्यान में रखिए तो फजाइल-ए आमाल जैसी किताबों का मलफूजात (बुजुर्गों द्वारा कही गयी बातें) के रूप में पढ़ना आसान हो जाता है। फिर यदि एक नक्शबन्दी बुज़ुर्ग की किताब में आपको इस तरह की घटना मिले, जैसा कि जिक्र के फज़ायल (गुणगान के फायदे) में नक़ल किया गया है कि हज़रत मुमशाद दैनूरी की मृत्यु के समय जब लोगों ने उनके लिए जन्नत की दुआ की तो आप हँस पड़े। फ़रमाया तीस वर्ष से जन्नत मेरे सामने प्रकट हो रही है लेकिन मैंने एक बार भी उधर ध्यान नहीं दिया। इसी तरह फज़ायल-ए नमाज़ में किसी हज़रत साबित के बारे में लिखा है कि वह बहुत अधिक विलाप के साथ खुदा से दुआ करते थे कि यदि कब्र में नमाज़ पढ़ने की अनुमति हो सकती है तो मुझे भी हो जाए। कहते हैं कि दफन करते हुए कब्र की एक ईट गिर गयी तो देखने वाले ने देखा कि वह खड़े कब्र में नमाज़ पढ़ रहे हैं। इसी फज़ायल-ए नमाज़ में कश्फ वालों के बारे में यह भी लिखा है कि वह पापों के धुले जाने को भी महसूस कर लेते हैं। अतः इमाम अबू हनीफा (रह०) के बारे में लिखा है कि जब वह वजू का पानी गिरते हुए देखते तो यह महसूस कर लेते कि कौन सा गुनाह इसमें धुल रहा है। ज़िक्र के फज़ायल में जहन्नम से मुक्ति का यह आसान नुस्खा भी बताया गया है कि जो व्यक्ति ७०,००० बार ला इलाह इल्लल्लाह पढ़ ले उसे जहन्नम की आग से मुक्ति मिल जाती है बल्कि यह भी संभव है कि आप ७०,००० का यह उपहार किसी जहन्नमी को भेजकर उसकी मुक्ति की व्यवस्था कर दें। शेख कूर्तुबी ने किसी नौजवान कश्फ वाले साहब के हाथों इस पाठ्यक्रम के सच्चे होने का अनुभव भी किया है जिसके बारे में मौलवी ज़करिया ने पाठकों को सूचित किया है। हज के फज़ायल में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) के अपनी कब्र में जीवित होने पर प्रमाण उपलब्ध किए गए हैं। इसी तरह हज के फज़ायल में एक युवक के बारे में लिखा

है कि जब मुहद्दिस अब्दुल रज्जाक मस्जिद-ए नबवी में हदीसें सुना रहे थे, उस समय यह व्यक्ति लापवरवाही के साथ एक कोने में बैठा था। लोगों ने पूछा कि पूरी सभा में लोग पैग़म्बर (सल्ल०) की हदीसें सुन रहे हैं, तुम उनके साथ सभा में सम्मिलित क्यों नहीं होते। उस युवक ने सिर उठाए बिना बड़ी बेपरवाही से कहा कि इस सभा में वह लोग हैं जो रज्ज़ाक के गुलाम से हदीसें सुनते हैं और यहाँ वह है जो कि स्वयं रज्ज़ाक (अल्लाह का एक नाम जिसका अर्थ है रोज़ी देने वाला) से सुनता है न कि उसके गुलाम से। इसी फज़ायल-ए हज में यह भी लिखा है कि कुछ लोग काबा की परिक्रमा के लिए मक्का जाते हैं और कुछ लोग ऐसे होते हैं कि स्वयं काबा उनकी परिक्रमा के लिए आता है। आगे चलकर किसी मालिक बिन कासिम जब्ली के तैयुल अर्ज़ की घटना लिखी है जिन्होंने एक हफ्ते से कुछ नहीं खाया था और उनके हाथ से गोश्त की खुशबू आने का कारण यह था कि वह मक्का से २७०० मील दूर अपने वतन में अपनी माँ को खाना खिलाकर जल्दी से आ गए थे ताकि हरम की मस्जिद में फज्र की नमाज़ अदा कर सकें।

साधारण मुसलमानों को यह हैरतनाक घटनाएँ बुद्धि और विवेक और वह्य अर्थात कुरआन के विरुद्ध मालूम हो सकती हैं लेकिन जिन लोगों की दृष्टि मल्फूज़ाती साहित्य और नक्शबन्दी इस्लाम के सिद्धान्त और नियमों पर है उनके लिए तैयुल अर्ज़, कब्रों का कश्फ और हक के अवलोकन की ये घटनाएँ कदापि आश्चर्यजनक नहीं। हाँ, आश्चर्य इस बात पर होता है कि कितने अच्छे ढंग से ग़ैर महसूस तरीके से पक्के नक्शबन्दी सूफियों की विचलित इस्लामी धारणा को दीन के प्रामाणिक साँचे के रूप में देखा जा रहा है और इससे भी अधिक हैरत की बात यह है कि साधारण मुसलमान इसके प्रचार-प्रसार में अपने भविष्य (आखिरत) की ज़मानत देखते हैं।

निज़ामुद्दीन के तबलीग़ी मरकज़ (प्रचार-प्रसार केन्द्र) में किसी माध्यम के बिना मैं एक सामान्य छात्र की हैसियत से गया था। फिर बहुत संघर्ष के बाद हज़रत जी की विशेष कृपा से मुझे निकटवर्ती लोगों के हल्के में प्रवेश करने का अवसर मिल गया। फिर एक युवा लेखक की हैसियत से उनके स्नेह का अधिकारी भी ठहरा। इस तरह जनता और विशेष वर्ग दोनों के स्तर पर मरकज़ की एक झलक देखने को मिल गयी। साधारण व्यक्ति से विशेष व्यक्ति बनने की प्रक्रिया कुछ अधिक कठिन नहीं होती। हाँ, यदि एक बार आप विशेष लोगों में गिन लिए गए तो फिर जनता के स्तर पर चीज़ें जैसी कि हैं उन तक पहुँच संभव नहीं होती। इसलिए यह सब सोच कर मैंने जर्राही की खानकाह, मुस्तफा ऊग्लू की रहनुमाई और उनकी व्यवस्था के बिना देखने का फैसला कर लिया। निज़ामुद्दीन में विशेष लोगों और जनता के दो भिन्न जीवन स्तर, जिनका प्रकटीकरण दो भिन्न प्रकार के दस्तरख्वानों से होता था, पर ईमान के आन्दोलन का पर्दा पड़ा था। इस आन्दोलन के संस्थापकों की वैचारिक पहचान उनके ऐतिहासिक और सूफी पृष्ठभूमि और उनकी किताबों की इस विशेष पृष्ठभूमि में शोध और विश्लेषण का उस समय विचार भी

मन में न आया था। इसलिए इन दोनों हल्कों में चलत-फिरत के बाद भी उस समय इस आन्दोलन की वास्तविकता और उसके उद्देश्य का सही अनुमान न हो सका। बात यह है कि जब तक आप चीज़ों को उसकी मूल पृष्ठभूमि में नहीं देखते। कड़ियाँ से कड़ियाँ नहीं मिलतीं, वास्तविकता पूरी तरह स्पष्ट नहीं होती।

मुझे याद है कि वेनिस की पहली यात्रा में जब सीन मार्को के तट पर मेरी नाव रुकी और मैं अपने मेज़बान के साथ डाजज़ पैलेस से होता हुआ पयाज़ासेन मार्को और फिर रिवाडेगली शिवानी से होता हुआ रियाल्टो ब्रिज तक आया तो भवनों की शुद्ध पूर्वी निर्माण शैली देखकर कुछ पलों के लिए कुछ हक्का-बक्का सा हो गया था। मेरे लिए यह विश्वास करना कठिन था कि इतनी शुद्ध पूरबी बल्कि इस्लामी निर्माण शैली पर आधारित यह कोई पश्चिम का शहर हो सकता है। फिर जब होटल के बिल पर स्थानीय लिपि में फातूरा लिखा देखा तो और अधिक आश्चर्य हुआ कि अरबवालों की तरह यहाँ भी बिल को फातूरा कहते हैं। सैर और यात्रा का सिलसिला और अधिक विस्तृत हुआ और मुझे यह मालूम करके आरम्भ में आश्चर्य हुआ कि स्पेन और पुर्तगाली ईसाइयों की भाषा से अरबी के दसियों शब्द बिगड़े हुए रूपों में निकलते हैं। यहाँ तक कि पुर्तगालियों में वादा वईद करते हुए ओसा अल्लाह अर्थात इन्शा अल्लाह कहने का चलन भी है। लेकिन जब यूरोप के इस्लामी इतिहास और मध्य युग के सांस्कृतिक मेल-जोल का गहराई से अध्ययन का अवसर मिला तो वेनिस के पूरबी शैली के भवन अपनी सम्पूर्ण ऐतिहासिक और धार्मिक सार्थकता के साथ विशेष ऐतिहासिक पृष्ठभूमि मे ंस्पष्ट हो गए। भ्रम समाप्त हो गया, ऐसा लगा जैसे कड़ियों से कड़ियाँ मिल गयी हों। तबलीग़ी मरकज़ की पहली यात्रा पर आज लगभग चौथाई सदी व्यतीत होने के बाद अब कहीं जाकर उसकी वास्तविक सार्थकता और उसके उद्देश्य का किसी सीमा तक अनुमान हो सका। जब तक नक्शबन्दी सूफीवाद से तबलीग़ के बुजुर्गों और देवबन्द के बुजुर्गों क गहरे सम्बन्धों का ज्ञान न हो और स्वयं नक्शबन्दी विचारधारा की वास्तविकता से आप अवगत न हों फज़ायल की किताबों में अप्राकृतिक घटनाएँ पढ़कर और बुजुर्गों के बयानों में कश्फ और चमत्कार का उल्लेख सुनकर आप केवल उस युवक की तरह हक्का-बक्का हो सकते हैं जो मेरी तरह ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से अनभिज्ञ अचानक वेनिस जा पहुँचा था।

# 20

# मन अज़ा जारहू वररसहुल्लाह दियारहू

## (जो व्यक्ति अपने पड़ोसी को दुख देता है अल्लाह उसके घर का उसको स्वामी बना देता है)

कारागुमरक में जर्राही की ख़ानकाह की परिक्रमा से पहले इसी विचार से मैंने पर्याप्त जानकारी उपलब्ध कर ली थी। खलवतिया सिलसिले की जर्राही की यह ख़ानकाह वास्तव में सुहरवर्दी सिलसिले की एक शाखा है। वही शिहाबुद्दीन सुहरवर्दी जो अपनी भूमिगत राजनीतिक गतिविधियों के कारण उस समय की व्यवस्था के हाथों शिहाबुद्दीन मक्तूल (क़त्ल किए हुए) बने। लेकिन सामान्य जनता को उनके वास्तविक राजनैतिक उद्देश्यों की जानकारी कम ही है। शाम के झुटपुटे में जब मैंने जर्राही की ख़ानकाह में प्रवेश किया तो क्या देखता हूँ कि एक विचित्र रंग-रूप में जज्ब की हालत में एक व्यक्ति काली व सफेद बिल्ली से खेल रहा है। काली बिल्ली की चमकती हुई आँखों से एक रहस्यपूर्ण दहशत हो रही थी जिसे सफेद बिल्ली की मौजूदगी ने किसी हद तक सँभाल रखा था। मुख्य दरवाज़े पर बिल्लियों की मौजूदगी से पहले तो यह अनुमान हुआ कि संभवतः यह बिल्लियों वाले बाबा की ख़ानकाह हो लेकिन अन्दर माहौल पर्याप्त जाना पहचाना लग रहा था। कहीं कहीं दीवारों पर विभिन्न प्रकार के तोग़रे (सुलेख पट्ट) लटके हुए थे। एक अपेक्षाकृत बड़े फ्रेम परیا حضرت پیر سلطان سید محمد نور الدین الجراحی *या हज़रत पीर सुल्तान सैय्यद मुहम्मद नूरुद्दीन अल जर्राही* लिखा था और ठीक उसके ऊपर یا شاہ شہیداں या शाह-ए शहीदाँ (शहीदों के बादशाह) का फ्रेम लटक रहा था। फर्श पर सजी सभा की अनुकूलता से हॉल के एक तरफ पीर तरीकत की कुर्सी लगी थी जिसके ऊपर एक के बाद एक तीन विभिन्न फ्रेम लगाये गए थे। जिनमें एक तस्वीर शेख मुज़फ्फर ओज़क की थी। यह वही शेख मुज़फ्फर हैं जिन्होंने 70 की दहाई में जर्राही सिलसिले को पश्चिम में परिचित कराया। कनाडा, अमेरिका और दूसरे देशों में इसकी शाखाएँ स्थापित कीं।

खानकाह में उस समय कुछ अधिक चहल-पहल नहीं थी। इसलिए मैंने सोचा कि भवन के आस-पास के क्षेत्र का अवलोकन कर लिया जाए। मेरी दृष्टि एक कत्बे (खुदे हुए लेख) पर रुक गयी, लिखा था :

من أذى جاره ورثہ اللہ دیارہ

*मन अज़ा जारहू वरसहुल्लाह दियारहू*

कत्बे में मेरी रुचि देखकर एक साहब निकट आए, पूछा क्या आप अरबी भाषा से परिचित हैं? मैंने कहाः जी हाँ परिचित तो हूँ लेकिन अर्थ कुछ समझ में नहीं आ रहा है।

फ़रमायाः अरे यह हदीस है। आप नहीं जानते?

मैंने कहाः लेकिन मेरी निगाह से यह हदीस पहले कभी नहीं गुज़री।

आप कहाँ से आए हैं? उन्होंने संभवतः मेरे ज्ञान की सतह को टटोलने का प्रयास किया। फ़रमायाः मैं 13 वर्ष से न्यूयार्क की जर्राही ख़ानकाह से जुड़ा हुआ हूँ, यहाँ वर्ष में एक दो बार आना हो जाता है। यह जो आप हदीस देख रहे हैं। इसके पीछे एक इतिहास है। नूरुद्दीन जर्राही जब इस्ताम्बोल आए थे तो उनके आगमन से पहले जानफदा मस्जिद के मुअज़्ज़िन को स्वप्न में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने यह आदेश दिया था कि वह हज़रत पीर नूरुद्दीन के लिए मस्जिद में एक अलग कमरा बना दें। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने बताया था कि सोमवार के दिन हज़रत पीर इस्ताम्बोल में पधारेंगे। इसलिए ऐसा ही हुआ। हाँ, जब मस्जिद में उपदेश और मार्गदर्शन और गुणगान और समाअ की महफिलें आयोजित होने लगीं और हाल और धमाल के कारण भीड़ एकत्र होने लगी तो बक्र आफन्दी को जिसका महल मस्जिद के पड़ोस में स्थित था, और जहाँ इस समय आप खड़े हैं, जो अब ख़ानकाह का हिस्सा है, बहुत आपत्ति हुई। उसने हज़रत पीर का विरोध करना आरम्भ कर दिया। उसे इस बात का अनुमान न था कि अल्लाह वालों के विरोध का परिणाम क्या होता है। अतः अभी कुछ दिन भी न व्यतीत हुए थे कि वह फालिज (लकवा) का शिकार होकर मर गया और उसके उत्तराधिकारी उस महल को नीलाम करने पर विवश हो गए। उन्हीं दिनों सुल्तान अहमद सालिस ने एक सपना देखा कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) उससे कह रहे हैं कि तुम बक्र आफन्दी के महल को खरीद कर नुरुद्दीन की ख़ानकाह के लिए वक्फ (दान) कर दो। उस कहानी का निचोड़ यह है कि निगाह-ए मर्द मोमिन से बक्र आफन्दी के महल की तकदीर कुछ ऐसी बदली कि जर्राही की ख़ानकाह में बदल गया। इसलिए यह घटना इस हदीस के सही होने पर दलील है जिसमें कहा गया है कि ‘‘जो व्यक्ति अपने पड़ोसी को दुख देता है अल्लाह उसके घर का उसको स्वामी बना देता है ।’’

हदीस की यह पृष्ठभूमि सुनकर न केवल यह हदीस पूरी तरह मेरी समझ में आ गयी बल्कि इस बात का भी कुछ अनुमान हो गया कि हदीस के प्रचलित संग्रहों में यह हदीस क्यों नहीं पायी जाती ।

यह तो हज़रत पीर की एक करामत (चमत्कार) हुई। इसके अतिरिक्त और कौन सी करामतें आपसे जुड़ी हुई और प्रसिद्ध हैं? मैंने उनसे जानना चाहा।

फ़रमाया एक तो यही बात है कि हज़रत पीर की कब्र पर दुआएँ जल्दी स्वीकृत होती हैं और ऐसा क्यों न हो जबकि अल्लाह तआला ने इस ख़ानकाह के दर्शनार्थियों से यह वादा कर रखा है।

अच्छा? वास्तव में? मेरे आश्चर्य को भाँपते हुए उन्होंने पूछा कि क्या आपने इस प्राचीन भविष्यवाणी का वह हिस्सा नहीं पढ़ा जिसका उल्लेख शेख के आने से 300 वर्ष पहले इमाम अहमद शरनौबी ने अपनी किताब *तबकातुल औलिया* में किया है और जिसकी एक हस्तलिपि फातेह की लाइब्रेरी में भी मौजूद है ।

तो क्या तबकातुल औलिया की कोई प्रति यहाँ खानकाह में भी मौजूद है? मैंने जानने की कोशिश की।

फरमायाः किताब के बारे में तो मैं नहीं कह सकता, हाँ हस्तलिखित प्रति के उस पृष्ठ की छाया प्रति यहाँ ज़ायरीन के लिए मौजूद है, यह कहते हुए उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा, अन्दर गैलरी में एक पुराने फ्रेम के पास जाकर रुक गए। मैंने मुश्किल से उसे पढ़ने की कोशिश की। लिखा था :

و منهم سيد نور الدين الجراحى ساكن الأستنبول العليا، ياتي في عام خمسہ عشرة و مأة بعد الألف ، يعيش من العمر أربعۃ و أربعين سنۃ، من كرامتہ ان اللّٰہ تعالى يتكرم عليہ يوم موتہ يدخل الجنۃ و منها انہ سأل اللّٰہ تعالى ما هو فى عالم الغيب۔ ان اللّٰہ يكرمہ زواره فستجاب لدعواتهم۔

अर्थात उनमें एक इस्ताम्बोल के नूरुद्दीन जर्राही हैं जो सन् 1115 हि० (1703-04 ई०) में प्रकट होंगे। वह 44 वर्ष जीवित रहेंगे। उनके चमत्कारों में से एक चमत्कार यह होगा कि वह जिस दिन मरेंगे उसी दिन जन्नत में प्रवेश किए जायेंगे। वह खुदा से जो कुछ मार्गेंगे उन्हें ग़ैब से दे दिया जाएगा। खुदा उनकी और उनके घरवालों की कब्रों की ज़ियारत करने वालों की दुआएँ कबूल फरमाएगा।

मैंने पूछा अच्छा यह बताइए कि यह कैसे पता चलेगा कि शरनोबी की यह किताब जिसकी हस्तलिखित प्रति में इस भविष्यवाणी का उल्लेख है, यह भाग वास्तव में जर्राही के प्रकट होने से पहले लिखा जा चुका था, क्योंकि हस्तलिखित प्रतियों में इस तरह की प्रक्षिप्ति आवश्यकतानुसार की जाती रही है। किताबों में इस प्रकार की बातों को जोड़ने का सिलसिला बहुत लम्बा और दिलचस्प है। मेरी इस आपत्ति पर वह कुछ नाराज़ हुए। फ़रमाया, एक दो चमत्कार हो तो उसका इन्कार किया जाए। अब इसी बात को लीजिए कि यहाँ पीर नूरुद्दीन ठीक अपनी माँ के कदमों के नीचे दफन हैं जो वास्तव में इस हदीस की ओर संकेत है कि الجنۃ تحت أقدام الأمهات अल जन्नतो तहत अकदामिल उम्महात (जन्नत माँओं के कदमों के नीचे हैं) रहा दुआओं के कबूल होने का मामला तो इसका तो मुझे भी कई बार अनुभव हुआ है कि यहाँ आकर शान्ति का जो एहसास होता है और दुआएँ जिस तरह आसानी से कबूल हो जाती हैं, इसकी मिसाल कहीं और देखने

को नहीं मिलती। यदि यहाँ दुआओं में असर न होता तो अमेरिका और यूरोप के विभिन्न शहरों से मुरीदों के आने का सिलसिला न लगा रहता।

मैं उनके विश्वास को आहत नहीं करना चाहता था। लेकिन मैं यह भी नहीं चाहता था कि اللّٰهم أرنى الأشياء كما هي *अल्लाह हुम्म अरिनी अल अशयाओ कमा हेय* (ऐ अल्लाह चीज़ों को मुझे वैसा ही दिखा जैसी कि वह हैं) की दुआ को जिसे मैंने एक लम्बे समय से अपने दिल में बसा रखा है और जिसके कारण चीज़ें कभी कभी अपने मूल रूप में दिखायी दे जाती हैं, उसकी कृपा से उन्हें बिल्कुल वंचित रखें। इसलिए मैंने उनकी आँखों में देखते हुए पूछा, एक बात बताऊँ कहीं आपके विश्वास को ठेस तो नहीं लगेगी!

मुस्कराते हुए बोले : नहीं बिल्कुल नहीं, अवश्य बताएँ ।

मैंने कहा कि संस्कृति और सूफ़ीवाद के एक छात्र की हैसियत से मुझे इन चमत्कारों और भविष्यवाणियों की पृष्ठभूमि की भी कुछ जानकारी है। मेरी बात को अन्तिम सच्चाई के रूप में स्वीकार मत कीजिए लेकिन कभी समय मिले तो इन प्रश्नों को अवश्य कुरेदिएगा कि जर्राही की यह ख़ानकाह जब स्थापित हुई है तो उसका कारण स्वप्न में समय के शासक को अल्लाह के पैग़म्बर द्वारा सूचना दी गयी थी या उसके पीछे कोई राजनैतिक प्रेरक भी था। एक व्यक्ति अचानक अपने सेवकों के साथ इस्ताम्बोल में आता है। आरम्भ में जानफदा मस्जिद में उसके ठहरने की व्यवस्था होती है और फिर जल्द ही उसकी गतिविधियों के लिए एक महल जैसा घर खरीदकर उसे दे दिया जाता है। यह तो रही नूरुद्दीन जर्राही की बात। स्वयं खलवतिया सिलसिले ने जब सुल्तान बायज़ीद के शासनकाल (1481–1511) में इस्ताम्बोल को अपनी गतिविधियों का केन्द्र बनाया है तो उसके पीछे किसी आकाशवाणी या शुभ सूचना की बजाए बायज़ीद का राज्यभिषेक था। बायज़ीद के तीस वर्षीय शासनकाल में खलवती सिलसिले का बहुत प्रचार-प्रसार हुआ। इस्ताम्बोल के एक बड़े बाज़न्तीनी गिरजाघर को खलवतियों की ख़ानकाह में बदल दिया गया। ऐसा इसलिए कि खलवती सूफ़ियों ने सुल्तान की जब वह शहजादा था। भरपूर सहायता की थी, खतरे मोल लिए थे। तुर्क सुल्तानों से विभिन्न सूफी सिलसिलों के बड़े निकट सम्बन्ध रहे। उनके इशारे पर नियुक्तियाँ होती रहीं। आपको शायद याद हो कि उस्मानी खिलाफत के पतन के दिनों में मौलवी सम्प्रदाय के सूफियों ने सरकार को बचाने के लिए नियमित रूप से सशस्त्र संघर्ष में भाग लिया था और फिर ख़िलाफत के पतन के बाद मुस्तफा कमाल के धर्मनिरपेक्ष महत्वाकांक्षाओं को असफल करने के लिए शेख सईद और उनके समर्थकों ने सशस्त्र संघर्ष का मार्ग अपनाया था। इसलिए यदि शेख नूरुद्दीन को अपनी गतिविधियों के लिए सरकार का भरपूर सहयोग प्राप्त रहा तो ऐसा किसी चमत्कार के कारण नहीं बल्कि उस समय की सरकार की राजनैतिक आवश्यकता के कारण था।

मेरी इन बातों से उन साहब के चेहरे पर आश्चर्य के भाव प्रकट हुए फिर ऐसा लगा जैसे वह अपने शैखों के बचाव में कुछ कहना चाहते हों, उनके मुँह से केवल इतना निकलाः चलीबी सुल्तान!

फिर फ़रमायाः देखिए कुछ लोगों ने पवित्र आत्माओं को बदनाम करने का बहुत प्रयास किया है। अल्लाह वालों के दरवाज़ों पर सदैव सुल्तानों ने हाज़िरी दी है। वह उनकी दुआओं के इच्छुक रहे हैं। उन पर राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं का आरोप लगाना मेरे विचार में अल्लाह वालों का बड़ा अपमान है।

लेकिन इतिहास तो इतिहास है उसकी कड़वी सच्चाइयों को अपने अच्छे लगने वाले विश्वासों के पर्दे में नहीं छिपाया जा सकता।

इससे पहले कि मैं कुछ और कहता और उनके क्रोध में कुछ और वृद्धि होती, मग़रिब की अज़ान ने हमारी इस वार्ता को रोकने का प्रबन्ध कर दिया।

जर्राही की इस ख़ानकाह को खलवतिया सिलसिले के विश्व केन्द्र की हैसियत प्राप्त है। सोचा कि क्यों न केन्द्रीय मुख्यालय में गुणगान और समाअ की मजलिस का आनन्द लिया जाए जहाँ पिछली कई सदियों से एक विशेष ढंग के गुणगान की परम्परा चली आ रही है। इशा की नमाज़ के कुछ देर बाद गुणगान की मजलिस आरम्भ हुई। पुरुष लोग एक वृत्ताकार रूप में बैठ गए। ऊपरी मंजिल में लकड़ी के झरोखों के पीछे महिलाओं ने अपने स्थान ग्रहण किए। आरम्भिक कोर्स में *बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम* को तीन हिस्सों में बाँटकर पढ़ने की कोशिश की गयी अर्थात बिस्मिल्ला / हिर्रहमा / निर्रहीम। फिर कुछ देर तक नफी (ला इलाह) फिर इस्बात (इल्लल्लाह) का गुणगान जारी रहा। दुरूद और सलाम के बाद लोग उठ खड़े हुए लेकिन वृत्त बरकरार रहा। फिर अल्लाहु हय्युन का अभ्यास आरम्भ हुआ। लोगों ने एक दूसरे के कंधों पर हाथ रखकर वृत्त को मज़बूत किया। वृत्त अब गतिमान था। अल्लाहु हय्युन अल्लाहु हक की आवाज़ तेज़ होती जा रही थी। इसी दौरान समाअ में सम्मिलित दो लोग वृत्त के बीच नृत्य करने लगे। हय्युन हय्युन की आवाज़ हरपल तेज़ होती जा रही थी और इसके साथ ही गर्दनों की हरकत बढ़ती जा रही थी। कुछ देर के बाद हय्युन हय्युन की आवाज़ निर्धारित तालमेल के साथ कम होती गयी और पृष्ठभूमि में दुआ के शब्द जारी हो गए। गुणगान का यह सिलसिला लगभग आधी रात तक चलता रहा।

सफीन-ए नूर (प्रकाश की नाव) की तुलना में जर्राही के गुणगान में कुछ जोश में कमी का एहसास हुआ। संभवतः इसका कारण यह हो कि वही रीतियाँ और वही अभ्यास अगर बार बार दुहराये जाते रहें तो फिर संभवतः उसका आनन्द समाप्त हो जाता है। सूफियों के लिए भी यह कोई आसान काम नहीं कि वह प्रतिदिन नये-नये आध्यात्मिक अभ्यास और गुणगान के नये नये तरीके विकसित करें। हाँ प्रत्येक सिलसिले के अन्दर जब एक नया संस्थापक पैदा होता है और वह अपने नाम से एक नयी शाखा आरम्भ

करता है तो वह जारी रीतियों में कुछ नयी रीतियाँ कुछ नये गुणगान के शब्द की वृद्धि कर देता है जैसा कि नूरुद्दीन जर्राही के बारे में कहा जाता है कि उनपर अल्लाह तआला ने विशेष *अस्मा-ए हुस्ना* (अल्लाह के अच्छे नाम) अवतरित किए, कुछ दुआओं की शिक्षा दी और उन्हें विर्द कबीर सबाहिया (सुबह किया जाने वाला बड़ा गुणगान) और विर्द सग़ीर मसाइया (सायं में किया जाने वाला छोटा गुणगान) करने का निर्देश दिया गया। मुझे यहाँ आकर उन अस्मा-ए हुस्ना का पता तो न चल सका। हाँ, इस बात का अन्दाजा अवश्य हुआ कि नयी नयी इबादतों की ईजाद के शौक में आध्यात्मिक लोगों के सभी सम्प्रदायों नें बड़ी निर्दयता का प्रदर्शन किया है। गुणगान के ये विभिन्न तरीके और कश्फ, मुजाहिदा, ध्यान, जैसे सभी अभ्यासों की हैसियत ईजाद-ए बन्दा (मानव रचना) से अधिक नहीं। हाँ जब एक बार यह सिलसिला चल निकला तो फिर हर नए आने वाले सुलूक संस्थापकों ने अपनी अलग पहचान के लिए नयी वृद्धियों का सिलसिला जारी रखा। जैसे बोस्निया और कोसोवो की नक्शबन्दी खानकाहों में जहाँ औरतें अपनी अलग मजलिसें आयोजित करती  हैं। गुणगान के शब्द बोलते हुए एक वृत्त में लगातार चलती जाती हैं। इस तरह 30-40 औरतों का एक वृत्त गुणगान की स्थिति में लगातार परिक्रमा की स्थिति का सामना करता रहता है। हमारे यहाँ शतारी सूफियों ने जिनका हिन्दू जोगियों और सन्यासियों से गहरा मेलजोल रहा है, उन्होंने तो नियमित रूप से विभिन्न क़िस्म की नमाज़ें भी ईजाद कर रखी हैं। शेख मुहम्मद ग़ौस की जवाहर-ए खम्सा का अध्ययन इस वास्तविकता से पर्दा उठाने के लिए पर्याप्त है कि आध्यात्मिक लोगों ने किस तरह इबादत और अभ्यास के पर्दे में इस्लाम धर्म का मज़ाक उड़ाने का प्रयास किया है। शतारियों द्वारा ईजाद की गयी नमाज़-ए अहजाब, नमाज़-ए तनवीरुल कब्र और सलातुल आशिकीन जैसी इबादतें हों या अस्मा-ए अकबरिया और दुआ-ए बिस्मख के नाम से प्राचीन यहूदी अन्धविश्वासों को पुनर्जीवित करने का प्रयास, इनसे इस बात का पता चलता है कि विभिन्न ज़मानों में सूफीवाद के पर्दे में किस तरह इस्लाम धर्म पर हमला करने की कोशिश की जाती रही जब एक बार दीन में नयी नयी बातों की ईजाद का सिलसिला चल निकला और सूफी शेख को यह अनुमति मिल गयी कि वह अपने मुरीद के लिए उसकी आवश्यकतानुसार गुणगान और अभ्यास और इबादत का एक कोर्स निर्धारित करे तो जैसे हर नये आने वाले के लिए नयी नयी बाते पैदा करने का अधिकार प्राप्त हो गया। इस्ताम्बोल की इस यात्रा में जब मुझे हारून यहया की एक मुरीद औरत ने यह बताया कि उनके शेख के तक्वा (ईश परायणता) का यह हाल है कि वह प्रत्येक नमाज़ वुजू की बजाए गुस्ल (स्नान) से पढ़ते हैं और क़ुरआन मजीद की तिलावत के दौरान लगातार खड़े रहते हैं, तो मुझे उसके इस बयान पर कुछ अधिक आश्चर्य नहीं हुआ ।

# 21
# बेगुफ्ता सबक़
## (खामोश शिक्षा)

अगली सुबह कुछ देर से इस्माईल आग़ा पहुँचा। राहदरी में चहल पहल देखी। पता चला कि चाय के लिए अवकाश है। पहली मजलिस अभी समाप्त हुई है। हाशिम नज़र नहीं आए। पूछने पर मालूम हुआ अभी कुछ प्रतिभागी हॉल के अन्दर ही कश्फ में ध्यान केन्द्रित करने में व्यस्त हैं। लगभग आधे घण्टे बाद अगली बैठक आरम्भ हुई। स्क्रीन पर आरम्भ में सौर परिवार की विभिन्न तस्वीरें प्रकट हुईं। दृश्य बदलते रहे। ऐसा लगा जैसे हम लोग किसी रसदगाह (वेधशाला) में हों जहाँ असीमित कायनात के रहस्यों से पर्दा उठने वाला हो। फिर विभिन्न ग्रहों की एक तस्वीर स्क्रीन पर आकर ठहर गयी। एक तरफ गोल प्रकाशित दायरे में अरबी लिपि में शब्द राब्ता लिखा था जिसकी किरणों से एक प्रकाशित मार्ग आसमान की दिशा (शून्य में) में जाता हुआ दिखाया गया था।

शेख तरीकत ने अजमी (ग़ैर अरबी) शैली में *अल्लाहु नूरुस्समावात............* (अल्लाह आसमानों और धरती का प्रकाश है) की आयत तिलावत की। फिर फ़रमाया लोगो! नूर वाली आयत को हम सूफ़ी लोगों के यहाँ मौलिक महत्व प्राप्त है। नूर (प्रकाश) है क्या? अल्लाह नूर है। यह कायनात नूर से बनायी गयी है। मनुष्यों के अन्दर नूर काम कर रहा है। केवल प्रत्यक्ष को देखने वाले लोग इस वास्तविकता से अवगत नहीं कि हमारा आरम्भ भी नूर है और अन्त भी नूर। हम नूर से निकले हैं और नूर में ही हमें वापस जाना है। इब्लीस को आदम के सजदे का आदेश इसी नूर के कारण हुआ जो अल्लाह ने आदम की पेशानी में रखा था। यही नूरुन मिन नूरिल्लाह (अल्लाह के नूर में से नूर) है। जिससे कश्फ वाले लोग अपने अन्दर की आँख से देखते हैं। जिनकी आँखें बन्द हों या जो अंधे हों, यह बातें उनकी समझ में नहीं आ सकतीं। आप तो जानते हैं कि शरीअत में अंधे इमाम को चाहे वह क़ुरआन और फ़िक़्ह का माहिर ही क्यों न हो, आँख वालों पर वरीयता नहीं दी जाती। यह तो प्रत्यक्ष अन्धे की बात हुई। अब जो लोग अपने अन्दर से अंधे हैं। उनकी बुराई का अनुमान आप स्वयं ही लगा सकते हैं।

मेरे प्यारो! अन्दर की आँख आसानी से नहीं खुलती। जिस तरह अन्धा किसी आँख वाले की उँगली पकड़कर चलता है उसी तरह आपको किसी पूर्ण शेख का शिष्य बनना पड़ता है और शिष्य भी ऐसा कि जिसे हम सूफ़ी लोग फना फिश्शेख कहते हैं। हाफिज़ शीराज़ी के कथनानुसारः

ब मये सज्जादा रंगीन कुन गर पीरे मुगाँ गोयद
कि सालिक बेखबर न बुवद ज़े राहो रस्म मंजिलहा

अर्थात पीर-ए मुगाँ यदि तुझसे कहे तो मुसल्ले (नमाज़ की चटाई) को भी शराब से रंग ले क्योंकि सालिक मंजिलों के रहस्य से बेख़बर नहीं होता। जब तक आप अपने आप को पूरी तरह शेख के हवाले नहीं करते, शेख की कृपा से वंचित रहते हैं। कहते हैं कि एक बार हमारे शेख नक्शबन्द मुजद्दिद अल्फसानी की सेवा में एक आलिम आए। कुछ देर बैठे रहे लेकिन शेख ने आपसे कोई बात नहीं की। जाते हुए वह लोगों से कह गए कि मैं आया तो इस विचार से था कि शेख से कुछ लाभ उठाऊंगा। लेकिन शेख मुजद्दिद ने कुछ बात ही न की। जब हज़रत मुजद्दिद को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने कहा कि जो हमारी खामोशी से लाभ प्राप्त न कर सका वह भला हमारी बातचीत से क्या लाभ प्राप्त करेगा। प्यारो! शैखों की मजलिसों में अनुशासन और खामोशी की स्थिति देखकर सिर्फ प्रत्यक्ष चीज़ों को देखने वालों को यह बात समझ में नहीं आती कि इस *बेगुफ्ता सबक* (बिन बोले शिक्षा) से शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक लोगों में हृदय परिवर्तन का काम कितने प्रभावी ढंग से सम्पन्न होता है ।

सुलूक के मार्ग के कुछ अभ्यर्थी आरम्भिक दिनों में सुलूक के जोश में इस भ्रम में पड़ जाते हैं कि वह शेख द्वारा निर्धारित किए हुए पाठ्यक्रम में वृद्धि करके अचानक कुछ ही देर में सुलूक की मंजिलें तय कर सकते हैं। काश उन्हें यह बात मालूम होती कि खुदा और बन्दे के बीच 700 पर्दे पड़े हैं। जो जितना बड़ा वली होता है, उस पर पर्दों की संख्या उतनी ही कम हो जाती है। बड़े वली का नूर (प्रकाश) इसी के कारण अधिक होता है। इस प्रकाश को छोटे वली सहन नहीं कर सकते। इसलिए यदि तुमने शेख विमुखता का बर्ताव किया और एक ही छलांग में सारी मंजिले तय करने की कोशिश की तो सन्देह है कि अपने आप को नष्ट कर लोगे। लोग इस मार्ग में अपना जीवन लगाते हैं। तब जाकर कहीं खुदा के नूर को सहन करने योग्य हो पाते हैं। फिर वह मंजिल भी आती है जब बन्दे और खुदा के बीच सारे पर्दे हट जाते हैं। मौलाना रूमी के कथनानुसार :

पस फकीर आनस्त कि बेवास्ता अस्त
शोलाहा रा बावजूदश राब्ता अस्त

अर्थात दुरवेश वह है जो किसी संपर्क के बिना होता है। शोलों को उसके अस्तित्व से विशेष सम्बन्ध है। यही वह चरण है जब अल्लाह के औलिया सीधे खुदा से लेते और बन्दों को बाँटते हैं। यह जो सूफी लोग कहते हैं कि हम दीद (देखने) के कायल हैं। शुनीद (सुनने) के नहीं, उसका यही कारण है। लेकिन सुलूक की यह मंजिल बहुत कम ही लोगों को हाथ आती है। जिस व्यक्ति को फ़ना फिल्लाह (अल्लाह में विलीन होने) का यह स्थान प्राप्त हो जाता है उसे अपने आप की खबर नहीं रहती। कहते हैं कि एक व्यक्ति बायज़ीद बुस्तामी की सेवा में तीस वर्ष तक रहा। लेकिन वह जब भी सामने आता। आप

उससे पूछते कि तुम्हारा नाम क्या है? उस व्यक्ति को सन्देह होता कि शायद हज़रत मज़ाक करते हों। पूछने पर पता लगा कि वह मज़ाक नहीं करते थे बल्कि उनके दिल में इस तरह खुदा का नाम जारी था कि उसके सिवा कोई और नाम उन्हें याद ही नहीं रहता था। कहते हैं कि जुन्नून मिस्री का एक मुरीद बायज़ीद बुस्तामी की सेवा में उपस्थित हुआ। दरवाज़े पर दस्तक दी, अन्दर से आवाज़ आयी कौन है और किसकी तलाश में है। मुरीद ने कहा कि बायज़ीद की तलाश में आया हूँ। फ़रमाया वह कौन है और कहाँ है। मैं भी एक ज़माने से उसकी तलाश में हूँ लेकिन अब तक उसे पाने में असफल रहा हूँ।

प्यारे भाईयो! जब इन्सान खुदा के साथ मिल जाता है और जब वह ग़ैर खुदा से छुटकारा प्राप्त कर लेता है तो फिर उसके अपने अस्तित्व और अपनी इच्छा का कोई महत्व नहीं रहता। खुदा की मर्ज़ी उसकी मर्ज़ी बन जाती है। कहते हैं कि एक बार राबिया बसरी दजला नदी में नौका-यात्रा कर रही थीं। नदी के बीच में नाव तूफ़ान में घिर गयी। यात्री परेशान हुए, चीख-पुकार उठने लगी। लेकिन एक व्यक्ति नाव में शान्तिपूर्वक लेटा रहा। राबिया उस व्यक्ति के धैर्य को देखकर बहुत आश्चर्यचकित हुईं। उन्होंने कहा दुआ का समय है यह आप इस तरह क्यों लेटे हैं। कहने लगा कि यदि खुदा की मर्ज़ी नाव को डुबाने की है तो मेरी क्या मजाल की उसकी मर्ज़ी के विरुद्ध कुछ करने की सोचूँ। राबिया ने जब उससे दुआ करने के लिए आग्रह किया तो उस व्यक्ति ने अपनी चादर उठायी और तूफ़ान की दिशा में उसे ऊँचा कर दिया। चादर का उठाना था कि हवा थम गयी। राबिया को उत्सुकता हुई कि निश्चय ही यह कोई खुदा का प्रिय बन्दा है। पूछने पर बताया कि यह कोई ऐसा चमत्कार नहीं, यह तो तुम भी कर सकती हो। शर्त केवल यह है कि अपने को खुदा की मर्ज़ी पर छोड़ दो। हमने यह पद इसी ढंग से प्राप्त किया है :

تركنا ما نريد لما يريد فترک ما يريد لما نريد ۔

*तरकना मा नुरीदु लिमा यूरीदो फतरक मा यूरीदु लम्मा नुरीदु*

मेरे प्यारे साथियों! अल्लाह की मर्ज़ी पर राज़ी हो जाने का पद बहुत कठिन प्रयासों से हाथ आता है। बायज़ीद बुस्तामी जैसे बुजुर्ग कहते हैं कि उन्हें तीस वर्ष तक लगातार इस मार्ग में कठिनाइयाँ सहन करनी पड़ीं। फिर खुदा ने उन्हें वह पद प्रदान किया कि वह पूरी कायनात को अपनी उँगलियों के बीच देखते। उनका कहना है कि खुदा की पहचान के एक दाने में जो स्वाद है वह जन्नत की नेमतों में नहीं। फ़ना फिल्लाह होना (अल्लाह में विलीन हो जाना) मानो सदा के लिए अमर हो जाने की प्रक्रिया है। आज की इस मजलिस में अन्तिम बिन्दु के रूप में इस वास्तविकता को मन में बैठा लीजिए कि खुदा में विलीन होने की प्रक्रिया सालिक की अन्तिम मंजिल है। इससे पहले इन तीन दर्जों से गुज़रना होता है। पहला चरण तजल्ली-ए-आसारी का है। जैसे मूसा (अलै०) ने आग को

देखा और खुदा की आवाज सुनी। दूसरा चरण तजल्ली-ए-फेअली है जिसमें सालिक किसी काम में खुदाई योजना को प्रकाशित पाता है। तीसरा चरण तजल्ली-ए-सिफाती है, जब खुदा कान, आँख और दिल में अपना जलवा दिखाता है। चौथा और अन्तिम चरण जिसे सूफियों की शब्दावली में तजल्ली ज़ाती कहते हैं, वास्तव में फ़ना फिल हक की मंजिल है। जब सालिक अपने आप को खो देता है और उसका अस्तित्व समाप्त होने के कारण उसके मुँह से أنا الحق या سبحانی ما أعظم شانی अनल हक़ या सुब्हानी मा आजमो शानी और ما فی جبتی إلا اللّٰہ मा फी जुब्बती इल्लल्लाह जैसे शब्द निकलने लगते हैं। अपने आप को विलीन कर देने और हक़ से मिल जाने के कारण शेष रह जाने को बक़ा बिल्लाह कहते हैं। यह वह चरण है जब नूर पर वास्तविक नूर की रंगत प्रभावी हो जाती है। बन्दा खुदा के रंग में रंग जाता है; صبغۃ اللّٰہ و من أحسن من اللّٰہ صبغۃ सिबगतल्लाहि व मन अहसनु मिन अल्लाह सिबगतन (अल्लाह का रंग धारण करो और अल्लाह के रंग से अच्छा किसका रंग हो सकता है ?)

मजलिस समाप्त हुई। लोग बाहर जाने लगे और कुछ लोग वहीं फर्श पर कमर सीधी करने के लिए लेट गए। मैंने भी दीवार के सहारे टेक लगा ली। हाशिम अपने कुछ दोस्तों के साथ मेरे पास आकर बैठ गया। प्रोजेक्टर अभी ऑन था और स्क्रीन पर नूर के राजमार्ग का अक्स दिखायी दे रहा था। मैंने हाशिम से पूछा तुम्हारा क्या विचार है। हम लोगों ने इस राजमार्ग पर अभी कितनी दूरी तय कर ली है? बल्कि यह बताओ कि तुम अपने आप को सुलूक की इस यात्रा में किस मंजिल पर महसूस करते हो?

कहने लगे मेरी दशा तो उन लोगों की है जो अभी यात्रा पर निकले ही नहीं। सफर का सामान अवश्य बाँधता हूँ लेकिन फिर अपने अन्दर इतना साहस जुटा नहीं पाता।

आखिर इसका कारण क्या है? निकट बैठे एक अन्य साथी ने हस्तक्षेप किया।

बात यह है कि हमारे दिल भौतिक बुराइयों में लिपटे हुए हैं। विश्वास की कमी है, सन्देहों की भीड़ है इसलिए ध्यान केन्द्रित करने की पहली मंजिल पर ही ध्यान विभिन्न दिशाओं में भटकने लगता है। पहला चरण अपने दिल को अल्लाह के अतिरिक्त हर चीज़ से खाली करना होता है। तब ही अल्लाह के प्रेम के लिए वहाँ जगह बन पायेगी। दोनों चीज़ें एक जगह नहीं रह सकतीं।

लेकिन आपको ऐसा नहीं लगता कि यदि हम इस प्रक्रिया में सफल हो गए और अन्ततः हमारे और खुदा के बीच सारे पर्दे उठ गए तो हमारे अन्दर एक तरह की खुदाई ताक़त आ जायेगी और यह जो बड़े बड़े अल्लाह के औलिया विचित्र काम करते हैं, भाग्य को बदल डालते हैं हम भी किसी दिन उस स्थान पर पहुँचेंगे ।

बोलेः यह तो इस बात पर निर्भर है कि आपके अन्दर किस सीमा तक अल्लाह की तजल्ली को आत्मसात करने की योग्यता है। आप कितना तीव्र प्रकाश सहन कर सकते

हैं। देखिए इस मार्ग में बहुत से लोग निकले लेकिन जो स्थान उवैस कर्नी को प्राप्त हुआ, जिस रुतबे से ग़ौस-ए आज़म और नक्शबन्दी शैखों को नवाज़ा गया, उस दर्जे पर बहुत कम लोग पहुँच पाये।

सुलूक का यह रास्ता अत्यन्त कठिन रास्ता है। इस रास्तें में नफ्स (स्वार्थ) के खतरे भी हैं, कुछ लोग थोड़े से चमत्कार पाकर वास्तविक उद्देश्य को भूल जाते हैं। हमें इससे होशियार रहना होगा, हाशिम ने सचेत किया।

दूसरी बैठक दोपहर के बाद थी। मैं सोचता रहा इन्सान भी कितना भोला-भाला जीवधारी है। खुदाई की प्राप्ति की आशा में स्वयं ही छोटे छोटे खुदा बनाता है। उन्हें शेख और ग़ौस का नाम देता है और फिर उनको आकर्षित करने के लिए अपनी पूरी ऊर्जा और पूरा जीवन लगा देता है। उसे खुदाई तो नहीं मिलती लेकिन अनल हक (मैं ही खुदा हूँ) कहने के शौक में उसके आत्मसम्मान और मानव प्रतिष्ठा का जनाजा निकल जाता है।

# 22

# बशारत

¼'kqHk lwpuk½

आखिरी मजलिस का मुख्य विषय बशारत निर्धारित किया गया था। मैंने समझा था कि जो सालिक सात मजलिसों में प्रशिक्षण पा चुके हों और जिन्होंने संघर्ष और ध्यान में कठिनाइयाँ सहन की हों संभवतः उनमें से कुछ लोगों को कश्फ के माध्यम से कबूलियत (स्वीकृत होने) का प्रमाण प्रदान किया जायेगा। उनकी सफल आध्यात्मिक यात्रा पर उन्हें सूचित किया जायेगा और उन्हें भविष्य में संभावित सफलताओं की शुभ सूचना दी जायेगी। लेकिन ऐसा कुछ भी न हुआ। शैख-ए-तरीकत के भाषण से पता चला कि शुभ सूचना का ये शीर्षक इसलिए निर्धारित किया गया है कि शुद्ध मन वाले मुरीदों को यह विश्वास दिलाया जाए कि चाहत अगर सच्ची हो तो आपको हर चरण में बड़े औलिया की मदद मिलती रहेगी। फ़रमाया :

मेरे प्यारे बन्धुओ! बुखारी ने अबू हुरैरा की रिवायत पर एक हदीस-ए-कुदसी (वह हदीस जिसमें अल्लाह द्वारा कही हुई बात को पैग़म्बर के मुँह से बयान किया जाए) नकल की है। यह वह हदीस है जो सुलूक की मजलिसों में अधिकतर बयान की जाती है। अल्लाह तआला अल्लाह के औलिया के दुश्मनों को चेतावनी देते हुए फ़रमाता है। मेरा बन्दा फर्ज़ इबादतों और नफ्ल इबादतों के माध्यम से मेरी निकटता प्राप्त करता है यहाँ तक कि मैं उसका कान बन जाता हूँ जिससे वह सुनता है, उसकी आँखें बन जाता हूँ जिससे वह देखता है, उसके हाथ बन जाता हूँ जिससे वह पकड़ता है, उसके पैर बन जाता हूँ जिससे वह चलता है, यदि वह मुझसे किसी वस्तु की माँग करे तो उसे अवश्य प्रदान करता हूँ और यदि वह मेरी शरण माँगे तो उसे अवश्य शरण देता हूँ। इमाम फख्रुद्दीन राज़ी जिनका कुरआन की व्याख्या लिखने वालों में बहुत ऊँचा स्थान है, ने अपनी तफ्सीर-ए कबीर में लिखा है कि जब वली की आँख अल्लाह की आँख बन गयी तो वह निकट और दूर को देखेगी और जब वली का हाथ खुदा का हाथ बन गया तो वह निकट और दूर के मामलों में हस्तक्षेप करने पर सक्षम होगा। यह जो कहा जाता है कि اتقوا فراسۃ المؤمن فانہ ینظر بنور اللّٰہ इत्तकू फिरासतुल मोमिन फ इन्नहू यनजुरु बि-नूरिल्लाह (मोमिन की फिरासत से बचो क्योंकि वह अल्लाह के नूर से देखता है) तो यह भी इसी कारण है कि मोमिन अपनी आँख से नहीं बल्कि खुदा की आँख से देखता

है। यह वह स्थान है जो कामिल वलियों (पूर्ण वलियों) के लिए आरक्षित है। आपने हज़रत उमर (रज़ि०) की वह प्रसिद्ध घटना सुनी होगी कि जब उन्होंने मस्जिद के मिम्बर से खुत्बा (सम्बोधन) रोक कर अचानक يا سارية الى الجبل या सारियतुन इलल जबल की आवाज़ लगाई और यह आवाज़ करीब देढ़ हज़ार मील दूर हज़रत सारिया के कानों में पहुँची, वह उन दुश्मनों से पहले से सचेत हो गए जो पहाड़ की ओट से आक्रमण करना चाहते थे, तो यह सब कुछ इसलिए संभव हो सका कि हज़रत उमर (रज़ि०) खुदा के नूर से देख रहे थे। जिसको खुदा का नूर मिल जाता है उसके लिए देश और काल की दूरियाँ निरर्थक हो जाती हैं। हज़रत उमर (रज़ि०) उन कामिल लोगों में थे जिनका हाथ खुदा का हाथ बन गया था। अतः नील नदी जब सूख गयी तो हज़रत उमर (रज़ि०) ने नील नदी के नाम एक पत्र लिखा जिसमें लिखा था कि ऐ नील तू अल्लाह के आदेश से जारी हो जा। दुनिया जानती है कि ऐसा ही हुआ।

प्यारे दोस्तो! कामिल और सिद्दीक लोगों का यह स्थान जिस किसी को प्राप्त हो गया, यह समझिए कि उसे ज़मीन और आसमान की चाबी मिल गयी। मुजद्दिद अल्फ सानी ने अपने एक पत्र (217, खण्ड 1, भाग 3) में स्पष्ट लिखा है कि भाग्य दो तरह का होता है। एक मुबरम और एक ग़ैर मुबरम। मुबरम वह होता है जिसे टाला नहीं जा सकता। लेकिन कामिल का स्थान देखिए कि हज़रत ग़ौस-ए आज़म ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने मुझे मुबरम भाग्य को बदल देने का भी अधिकार दे रखा है। यही कारण है कि वह मृतकों को जीवित कर देते थे, और उन्होंने अपने विशेष अधिकार के माध्यम से 12 वर्ष के बाद नदी में डूबी हुई एक बारात नदी से बाहर निकाल दी थी। अल्लाह के औलिया को चूँकि अल्लाह ने प्राकृतिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप की क्षमता दे रखी है, इसलिए हम उनसे कठिन घड़ियों में मदद के इच्छुक होते हैं। मात्र प्रत्यक्ष चीज़ें देखने वालों को यह लगता है कि हम शिर्क कर रहे हैं। काश कि वह जानते कि हम अल्लाह के वलियों को अल्लाह की कृपा का प्रकटीकरण मानकर वास्तव में अल्लाह से ही मदद माँगते हैं। शाह अब्दुल अज़ीज़ मुहद्दिस देहलवी ने إياك نعبد و إياك نستعين इय्याक नअबुदू व इय्याक नस्तईन (हम आप ही की इबादत करते हैं और आप ही से मदद माँगते हैं) की व्याख्या में लिखा है कि अल्लाह तआला की रचना से इस तरह मदद माँगना कि इन्सान उसे खुदा की मदद का प्रकटीकरण न समझे तो यह हराम है और यदि ध्यान अल्लाह की ओर हो और उस रचना को खुदा की मदद का प्रकटीकरण जानते हुए प्रत्यक्ष रूप से उससे मदद माँगे तो दिल मअरफत (बोध) से दूर नहीं और यह शरीअत में वैध है। अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी ने اشعة اللمعات अशेदअतुल-लमआत में इमाम गज़ाली का यह कथन नक़ल किया है कि जिस शेख से जीवन में मदद माँगी जाती है, मृत्यु के बाद भी उससे मदद माँगी जायेगी। गज़ाली कहते हैं कि मैंने स्वयं

मअरूफ करखी और अब्दुल क़ादिर जीलानी को अपनी क़ब्रों में उसी तरह हस्तक्षेप करते देखा है जिस तरह वह जीवन में किया करते थे।

प्यारे साथियो! मुशाहिद-ए हक का चरण बहुत कठिन है लेकिन यह बात निगाहों से ओझल न हो कि आपके लिए सुलूक की इस यात्रा में अल्लाह के औलिया की मदद और विशेष रूप से नक्शबन्दी शैखों की आत्माओं से निरन्तर कृपा प्राप्त करने का द्वार खुला हुआ है। आप जहाँ भी होंगे अपने शेख को और उनके माध्यम से बड़े शैखों, यहाँ तक कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की सहायता से भी उपकृत होंगे। हज़रत मुजद्दिद साहब फ़रमाते हैं कि एक पूर्ण वली एक ही समय में विभिन्न स्थानों पर मौजूद हो सकता है। ऐसा इसलिए कि उसके लताएफ (चमत्कार) विभिन्न शरीर और विभिन्न रूप धारण कर सकते हैं। हज़रत मुजद्दिद साहब के बारे में लोग कहते थे कि उन्हें हज में देखा गया, कोई कहता वह बग़दाद में पाए गए और कोई रोम में उनकी मौजूदगी की सूचना देता। मुजद्दिद साहब कहते थे कि मैं तो घर से बाहर भी नहीं निकला, न ही रोम और बग़दाद को गया। वास्तव में यह पीर की मिसाली (प्रतिरूप) सूरतें हैं जो मुरीदों की कठिनाई दूर करने के लिए प्रकट हो जाया करती हैं। एक पत्र (282, खण्ड 1, भाग 5) में मुजद्दिद साहब ने अपनी एक गुणगान की मजलिस के हवाले से लिखा है कि एक दिन उनकी मजलिस में हज़रत इलियास और हज़रत खिज्र उपस्थित हुए। फ़रमाया कि हम आलम-ए अरवाह (आत्माओं की दुनिया) में से हैं। अल्लाह ने हमें शरीर का रूप अपनाने की क्षमता प्रदान कर रखी है। यही हाल वलियों का भी है कि उनकी आत्माएँ शरीर धारण करके कठिन समय में बन्दों की मदद के लिए पहुँचती रहती हैं। नक्शबन्दी शैखों के तज़किरे (विवरण) में नूरबक्श तव्वकुली ने यह लिखा है कि उवैस कर्नी का खिरका (शैख द्वारा प्रदान किया हुआ पवित्र पोशाक) जो शेख अब्दुल कादिर जीलानी के माध्यम से सिकन्दर कैथली तक पहुँचा था और जो शेख की वसीयत के अनुसार मुजद्दिद साहब की सेवा में पहुँचाया जाना था, जब मुजद्दिद साहब को पहुँचा है और वह उसे पहनने के बाद अपने हरम सरा (शयनकक्ष) में गए तो उन्होंने देखा कि शेख अब्दुल क़ादिर जीलानी अपने सभी ख़लीफाओं के साथ वहाँ पहुँचे हुए हैं। कुछ देर बाद नक्शबन्दी, किबरवी और चिश्ती शेख भी आ पहुँचे। सबका दावा था कि मुजद्दिद साहब पर उनके सिलसिले का अधिकार है। अन्त में शैखों में समझौता हो गया और हर एक ने आपको अपने सम्बन्ध से उपकृत किया।

कहते हैं कि वली को कभी कभी इस बात का स्वयं अनुमान नहीं होता कि उसके प्रतिरूप विभिन्न स्थानों पर प्रकट होकर उसके मुरीदों की कठिनाइयों को दूर करते हैं। अली हमदानी कश्मीरी के बारे में तरबियत-ए उश्शाक के लेखक ने लिखा है कि उन्होंने एक ही समय में 40 व्यक्तियों के घर जाकर खाना खाया और हर जगह बैठकर एक अलग ग़ज़ल लिखी। यह घटना इस बात को प्रमाणित करती है कि सिद्दीक और कामिल

लोगों की आत्माओं को अल्लाह तआला ने असाधारण क्षमता प्रदान कर रखी है। हज़रत मुजद्दिद साहब ने अपने एक पत्र (संख्या 28, खण्ड 2, भाग 1) में बाबा आबरेज़ के हवाले से लिखा है कि उनका कहना है कि जब अल्लाह तआला के यहाँ हज़रत आदम की मिट्टी गूँधी जा रही थी तो मैं उसमें पानी डाल रहा था। मुजद्दिद साहब ने फ़रमाया है कि यह बात सही हो सकती है क्योंकि जब फ़रिश्ते इस काम में भाग ले सकते हैं तो बुजुर्ग की आत्मा को भी इस बात की अनुमति हो सकती है।

प्रिय भाइयो! सच्चाई तक पहुँचने के दो रास्ते हैं। जिनमें से एक रास्ता विलायत का है, पत्र (संख्या 123, खण्ड 3, भाग 2) में मुजद्दिद साहब ने इस बात को स्पष्ट कर दिया है कि विलायत के नेतृत्व पर अली (रज़ि०) विराजमान है। हज़रत फातिमा (रज़ि०), हसन (रज़ि०), हुसैन (रज़ि०) इस पद में उनके साझीदार हैं। विलायत के इस मार्ग का ज्ञान हमें सीना बसीना नक्शबन्दी शैखों के माध्यम से पहुँचा है। सालिक को चाहिए कि वह इस दौलत की रक्षा करे। इन्शा अल्लाह आप इस मार्ग में नक्शबन्दी शैखों की मुबारक आत्माओं को अपनी सहायता के लिए निरन्तर तैयार पायेंगे। चलते-चलाते आखिरी बात गाँठ बाँध लीजिए कि विलायत प्राप्त करने का यह रास्ता आपकी ओर से कठोर संघर्ष चाहता है। शेख अली हजवैरी, बायज़ीद बुस्तामी, शेख अबू सईद, मुइनुद्दीन चिश्ती जैसे बुजुर्गों ने शैखों की कब्रों पर चिल्ला लगाया है। उनसे कृपा प्राप्त की है। इसलिए वह आज जनता की आशाओं के केन्द्र बने हुए हैं। आइए अन्त में नक्शबन्दी शैखों की आत्माओं पर दुआओं का उपहार भेजें।

भाषाण सम्पन्न होते ही दुरूद और सलाम और खत्म-ए ख्वाजगान का दौर शुरू हुआ। और फिर अल फातिहा की घोषणा के साथ यह मजलिस समाप्त हुई।

# 24
# सब्ज़ गुम्बद, सब्ज़ परिन्दे और मदनी मुन्ने
## (हरा गुम्बद, हरे पक्षी और मदनी मुन्ने)

अस्र की नमाज़ इस्माईल आग़ा में पढ़ी। अभी नमाज़ पूरी ही किया था कि देखा कि हाशिम दो नक्शबन्दी दरवेशों के साथ मेरी ओर आ रहे हैं। उन दोनों लोगों ने सफेद जुब्बों पर हरी पगड़ियाँ बाँध रखी थीं। जिसके अन्दर से नक्शबन्दी शैली की टोपियाँ झाँक रही थीं। अब थोड़ा ध्यान से देखा तो पता चला कि उनमें एक तो वही काका आदम खेल के अल्लाह यार साहब हैं जिनसे सात मजलिसों के दौरान कभी कभी भेंट होती रही थी और जो हमारी और हाशिम की बातचीत में कभी कभी बैठ जाया करते थे। लेकिन तब वह एक सामान्य सालिक की हैसियत से केवल टोपी और जुब्बा में दिखायी देते थे। आज जो उन्होंने नक्शबन्दी सूफियों का बाकायदा यूनीफार्म पहन लिया और फिर हरे रंग की पगड़ी विशेष रूप से पाकिस्तान के अहल-ए सुन्नत उलमा की तरह बाँधी तो उन्हें एक नज़र में पहचानने में कठिनाई हुई। फ़रमाया, शेख हमूद के कमरे में चाय की व्यवस्था है।

शेख हमूद तो कमरे में मौजूद न थे। लेकिन चाय का दौर चल रहा था। हम लोगों ने एक कोने में अपनी सीट सँभाल ली। फिर चाय और डोनट जैसी रोटी पर बात का सिलसिला चल निकला। अल्लाह यार खान को मैंने अभी कुछ देर पहले तक एक छात्र और सालिक की हैसियत से देखा था। अब जो पूरे सूफियों के जाह व जलाल के साथ पूरे नक्शबन्दी यूनीफार्म में देखा तो मन के कोने में पड़ा साजिद का वह प्रश्न फिर से सिर उठाने लगा कि लोग सुल्तानुल औलिया, महबूब-ए सुब्हानी और जुब्दतुल सालिकीन (सालिकों की मलाई) किस तरह बनते हैं? सोचा संभवतः उसी तरह जिस तरह अल्लाह यार खान ने अपने आपको सूफियों के परम्परागत लिबास में पूरी शान और आन-बान के साथ विराजमान किया है।

आज से चौथाई सदी पहले कराँची की एक यात्रा के दौरान एक ऐसे धार्मिक समूह के सम्बन्ध में सुनने में आया था जो हरी पगड़ी के माध्यम से सुन्नत को पुनर्जीवित करने का आवाह्क था। अल्लाह यार खान उसी आन्दोलन के प्रशिक्षण प्राप्त एक नौजवान हैं। कहने लगे कि देवबन्दी उलमा का सामना करने के लिए हमारे बुजुर्गों ने हरी पगड़ी को

पुनः प्रचलित किया। अहल-ए सुन्नत वल जमाअत देवबन्दियों के चपेट में थे, अब अल्लाह का शुक्र है कि हमारी अपनी एक अलग पहचान है। हरी पगड़ियों वाले पाकिस्तान में दूर से ही पहचाने जाते हैं। हमारा एक टीवी चैनल है जो प्रचार-प्रसार और उपदेश के अतिरिक्त मदनी मुन्नों के लिए भी नियमित रूप से कार्यक्रम प्रस्तुत करता है।

मदनी मुन्ने? जी क्या फ़रमाया आपने?

मेरे आश्चर्य प्रकट करने पर उन्होंने बताया कि वास्तव में यह अहल-ए सुन्नत के बच्चों के लिए बोला जाने वाला शब्द है जिसे विशेष रूप से मदनी चैनल ने निर्धारित किया है। हम अहल-ए सुन्नत अपने बच्चों को मदनी मुन्ना कहते हैं, उन्होंने और अधिक स्पष्ट करने के लिए कहा।

लेकिन देवबन्दी भी तो अपने आप को अहल-ए सुन्नत कहते हैं। मैंने उन्हें कुरेदने की कोशिश की, जिस पर वह थोड़ा भावुक हो गए।

फ़रमायाः देवबन्दी? अरे वह अहल-ए सुन्नत कैसे हो सकते हैं, वह सब के सब मुनाफिक (कपटाचारी) हैं। अहल-ए हदीसों में अहल-ए हदीस बन जाते हैं और सामान्य मुसलमानों में अहल-ए सुन्नत बने रहते हैं। आपको क्या बताएँ, इन देवबन्दी मुनाफिकों के दो चेहरे हैं, एक जनता के लिए और एक विशेष लोगों के लिए। जनता की दृष्टि में ये उर्स के विरोधी हैं, चादर चढ़ाने और रसूलुल्लाह कहने में भी उन्हें शर्म आती है लेकिन अपने विशेष लोगों की मजलिसों में ये बुजुर्गों की करामात (चमत्कारों) और उनकी आत्माओं से मदद माँगने को उचित समझते हैं। यह भी हमारी तरह नक्शबन्दी अथवा क़ादरी हैं। लेकिन उसे कासिमियत के पर्दे में छुपाए रखते हैं। अब उन्होंने एक नया फ्रन्ट खोला, तबलीग़ी जमात बनायी तो बैअत की शर्त उठा ली। अब सामान्य लोगों को क्या मालूम कि नक्शबन्दी सूफी इस आन्दोलन के पीछे हैं। लोग लाखों की संख्या में इस समूह में सम्मिलित हो गए।

तो क्या आपकी दृष्टि में तबलीग़ी जमाअत वास्तव में नक्शबन्दी सिलसिले का दूसरा नाम है? मैंने स्पष्टीकरण चाहा।

जी हाँ! बिल्कुल।

फिर यदि नक्शबन्दी सिलसिले का काम आगे बढ़ता है तो आप क़ादिरी सिलसिले के लोगों को तो इसपर आपत्ति नहीं होनी चाहिए?

बिल्कुल नहीं होती। हम लोगों को नक्शबन्दी और क़ादिरी दोनों सिलसिलों से लगाव है। हम यही तो कहते हैं कि हम वास्तव में एक हैं। हमारा सिलसिला एक, हमारी फ़िक़्ह एक। लेकिन झगड़ा तो उनकी मुनाफिकत (कपटाचार) के कारण हैं। जब ये आला हज़रत की प्रतिष्ठा को आहत करते हैं, हमें कब्र के पुजारी होने की गाली देते हैं। हालाँकि हमारे और उनके विश्वास में इतना भी अन्तर नहीं। ये कहते हुए उन्होंने अपनी दो उँगलियों से इस अन्तर को समझाने की कोशिश की।

फिर आप देवबन्दी खतरे का सामना किस तरह करते हैं? मैंने पूछा।

कर रहे हैं जी! करारा जबाब दिया है हमने। हमने भी दावत-ए इस्लामी बनायी। हरी पगड़ी को प्रचलित किया। अब सामान्य लोगों की दृष्टि में अहल-ए सुन्नत के वास्तविक प्रतिनिधि हम लोग हैं। देवबन्दी तो अहल-ए हदीसों के चमचे समझे जाते हैं। हमारी हरी पगड़ी को देखकर दूर ही से लोग समझ जाते हैं कि मुहम्मद (सल्ल०) का कोई गुलाम, उनका कोई दीवाना जा रहा है।

तो क्या पगड़ी का यह हरा रंग किसी विशेष कारण से है? मैंने जानने की कोशिश की।

फ़रमायाः जी हाँ! जिस तरह नूर का नूर से सम्पर्क होता है, एक तरह के लोग एक साथ उठते बैठते हैं, उसी तरह हरा रंग इस्लाम वालों का रंग है।

लेकिन हरे गुम्बद में रहने वाले को तो आप लोग काली कमली वाले कहते हैं? मेरी इस आपत्ति पर तो वह कुछ नाराज़ हुए। कहने लगे हरे रंग से हम ईमान वालों को विशेष लगाव है। आपको शायद मालूम नहीं कि नेक मोमिनों की आत्माएँ मरने के बाद हरे पक्षी का रूप ले लेती हैं। अल्लाह के नबी और औलिया तो अपनी कब्रों में जीवित रहते हैं जबकि नेक लोगों की आत्माएँ हरे पक्षी के रूप में मोमिनों की सहायता के लिए दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों में मंडराती रहती हैं।

अल्लाह यार खान की यह बात सुनकर अचानक मुझे ऐसा लगा जैसे कड़ी से कड़ी मिल रही हो। मैंने पूछाः नदी के किनारे तड़के सवेरे से पहले अमल करने वाले लोग जो हरे पक्षी की तलाश में जाते हैं तो क्या वह यही नेक लोगों की आत्माएँ होती हैं?

फ़रमायाः यह तो मुझे नहीं मालूम, हो सकता है कि आपका यह अनुमान सही हो। इसलिए कि रंग से रंग का सम्पर्क होता है। निश्चित रूप से नेक लोगों की आत्माएँ हम हरी पगड़ी वालों से एक विशेष सम्बन्ध रखती हैं। इसी पर हरे गुम्बद के रहने वाले का भी अनुमान लगा लीजिए। और हरा रंग तो इस्लामी रंग भी है। अल्लाह यार खान ने अपने दृष्टिकोण को और अधिक प्रमाणित किया।

लेकिन क्या आपको मालूम है कि एक ज़माने में पैग़म्बर के गुम्बद का रंग सफेद था। और इससे भी पहले लकड़ी के कुब्बे पर कोई रंग नहीं था।

अच्छा! तो यह आरंभ से ऐसा नहीं है? अल्लाह यार खान ने कुछ सँभलने का प्रयास किया।

जी नहीं! आरम्भ में लगभग 700 वर्षों तक अल्लाह के पैग़म्बर की मुबारक कब्र पर कोई कुब्बा नहीं था। 7वीं सदी हि० में पहली बार लकड़ी का कुब्बा बनाया गया। फिर सफेद कुब्बा का बाकायदा एक आकार बनाया गया। हरे रंग का कुब्बा तुर्क ख़िलाफत की यादगार है। रही यह बात कि हरा रंग इस्लामी रंग है तो इसका भी कोई प्रमाण नहीं, क्योंकि आरम्भ में इस्लामी सेना के झण्डे का रंग सफेद था। अब्बासियों ने

काले रंग का झण्डा अपनाया। इसके मुकाबले में फातिमी ख़लीफाओं ने अपने लिए हरे झण्डों को चुना। फातिमियों के ज़माने में मुल्तान की इस्माइली विलायत में काहिरा से हरे झण्डे भेजे जाने की बात ऐतिहासिक स्रोतों में मौजूद है और यह भी एक विचित्र संयोग है कि सदियों बाद भारतीय उपमहाद्वीप में पाकिस्तान के नाम से जो नया राज्य अस्तित्व में आया उसके राष्ट्रीय झण्डे का रंग भी हरा निर्धारित किया गया।

मेरी यह बातें सुनकर अल्लाह यार खान, कुछ क्षणों के लिए ऐसा लगा जैसे घबरा से गये हों। कहने लगे क्षमा कीजिएगा मुझे हरे रंग के इतिहास का अनुमान नहीं था। हमारी यह हरी पगड़ी तो बस हरे गुम्बद से कृपा प्राप्त करने के लिए है। आका की कचहरी में भी मेरी हाजिरी लग जाए अपना तो बस यही सपना है।

लेकिन हाजिरी तो तब लगेगी जब वहाँ कचहरी भी स्थापित होती हो।

अरे तो इसमें कोई सन्देह की बात हैं। यह तो बुजुर्गों ने देखा है। विभिन्न वलियों के माध्यम से आका मुहम्मद (सल्ल०) की कचहरी का विवरण हम तक पहुँचा है। हर जुमे के दिन नमाज़ के बाद औलिया और नेक लोग आप (सल्ल०) के यहाँ उपस्थित होते हैं। मुस्लिम उम्मत की दशा और परिस्थिति पर बातचीत होती है। क्या आपको इन बातों की जानकारी नहीं?

मालूम तो तब होगा जब मेरी भी हाज़िरी लग जाए। आप तो जानते ही हैं कि मैंने सूफियों के साथ रहकर यही सीखा है कि सुनी हुई बातों पर नहीं देखी हुई बातों पर विश्वास करो।

लेकिन इस बात पर तो पूरी उम्मत की सर्वसम्मति है कि अल्लाह के पैग़म्बर अपनी मुबारक कब्र में अपने शारीरिक अस्तित्व के साथ जीवित हैं। बड़े औलिया अल्लाह और शेख उनसे मिलते रहे हैं। कुछ लोगों ने आप (सल्ल०) से प्रत्यक्ष रूप से यह हदीसें सुनी हैं। कुछ दिलवाले जब चाहते हैं, अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से भेंट कर लेते हैं और कुछ मजलिसों में तो स्वयं अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) आते भी हैं, ठीक उसी तरह शरीर धारण किए हुए इंसान की हैसियत से, जैसे हम और आप बातें कर रहे हैं।

चलिए यह तो सूफियों की गपशप हुई। दिलवालों के दावे हुए। बुद्धि और वह्य की रौशनी में अगर पैग़म्बर की मृत्यु के बाद आप (सल्ल०) के जीवित होने पर कोई प्रमाण मौजूद हो तो बताइए।

मेरी यह बात सुनकर अल्लाह यार खान के नक्शबन्दी दोस्त, जो अब तक बड़े धैर्य के साथ हमारी वार्ता को सहन किए जा रहे थे, अपनी खान साहबियत को न रोक सके। कहा अजी बुद्धि का यहाँ क्या काम? यह सब इश्क की बातें हैं। बुद्धि वालों को यह दौलत नहीं मिलती। वैसे कुरआन में, हदीस में हर जगह आपको इस बात के प्रमाण मिल जायेंगे कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) अपनी कब्र में जीवित हैं। हमारे दुरूद और सलाम के उपहार हर वृहस्पतिवार को उनकी सेवा में प्रस्तुत किए जाते हैं ।

अच्छा तो कुरआन में भी इस सम्बन्ध में कोई आयत मौजूद है? मैंने उनके नक्शबन्दी दोस्त से पूछा।

फ़रमाया, जी हाँ! क्या कुरआन में नहीं है कि शहीदों को मरा हुआ न कहो ?

लेकिन यह तो शहीदों के बारे में है। मैंने अपनी आपत्ति जारी रखी।

बोले जब शहीदों का यह स्थान है कि वह मरते नहीं और उन्हें अल्लाह की ओर से रोज़ी प्रदान की जाती है तो पैग़म्बरों का दर्जा तो इससे भी ऊँचा है। बुख़ारी में एक हदीस है कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) जब मेअराज के लिए जा रहे थे और वह हज़रत मूसा की कब्र से गुज़रे तो देखा कि मूसा कब्र में खड़े नमाज़ पढ़ रहे हैं। और यह हदीस तो सभी जानते हैं कि الأنبياء أحياء فی قبورهم يصلون *अल अम्बियाओ अहीयन फी कबूरिहिम मुसल्लून* (पैग़म्बर लोग अपनी कब्रों में जीवित हैं और नमाज़ पढ़ते हैं)। एक और हदीस में आया है: إن اللہ حرم علی الأرض أن تاكل أجساد ألأنبياء *इन्नल्लाह हर्रम अलल अर्जि अन ताकुल अजसादल अम्बिया* (अल्लाह ने ज़मीन पर नबियों के शरीर को खाना हराम कर दिया है)। अबू दरदा की एक रिवायत में तो इस बात को विशेष रूप से बयान किया गया है कि पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) जीवित हैं और उन्हें आजीविका भी दी जाती है। और बैहकी की एक रिवायत में हज़रत इब्ने उमर से रिवायत किया गया है कि من زار قبری بعد موتی كان كمن زارنی فی حياتی *मन ज़ार कब्री बाद मौती कान कमन ज़ारनी फी हयाती* (जिसने मेरी मौत के बाद मेरी कब्र की जियारत की वह वैसा ही है जैसे मेरे जीवन में उसने मुझसे भेट की)। सईद बिन मुसय्यिब के हवाले से सुनन दारमी में एक रिवायत नकल की गयी है कि हर्रा के युद्ध के दिनों में जब मस्जिद-ए नबवी में तीन दिनों तक अज़ानें नहीं हो सकीं, सईद बिन मुसय्यिब जो उस दौरान मस्जिद के अन्दर थे, उन्हें नमाज़ों के समय का पता इस तरह चलता कि विशेष रूप से नमाज़ के समय अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की मुबारक कब्र से हमहमा अर्थात फुसफसाहट की आवाज़ आने लगती। इसी हदीस के आधार पर इब्ने तैमिया जैसे वहाबी ने भी पैग़म्बर (सल्ल०) के जीवित होने के अक़ीदे को स्वीकार किया है। इब्ने हजर अस्कलानी ने भी इस अक़ीदे को व्यक्त किया है कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) का जीवन मृत्यु के बाद समाप्त नहीं हो गया। बल्कि उनका जीवन जारी है और सभी पैग़म्बर अपनी कब्रों में जीवित हैं। इब्नुल कय्यिम, इब्नुल जौज़ी, जलालुद्दीन सुयूती, इमाम सुबकी और इमाम शौकानी, यह सब के सब पैग़म्बर के जीवित होने को मानते हैं। अब इसके बाद नहीं करने की गुंजाइश कहाँ है हुजूर! यह कहते हुए उन्होंने मेरी ओर विजयी भाव वाली मुस्कुराहट के साथ देखा।

मैंने पूछा! अच्छा यह बताइए कि कुरआन मजीद की यह आयत و مامحمد إلا رسول قد خلت من قبلہ الرسل افان مات او قتل فانقلبتم على أعقابكم *वमा*

*मुहम्मदुन इल्ला रसूल कद खलत मिन कबलेही अल रुसुल अफ इन मात अव कुतिलनकलबतुम अला आकाबिकुम* (मुहम्मद और कुछ नहीं बल्कि एक पैग़म्बर हैं इनसे पहले भी बहुत से पैग़म्बर गुज़र चुके हैं तो क्या यदि वह मर जाएँ या क़त्ल कर दिए जाएँ तो क्या तुम पीछे मुड़कर भाग जाओगे अर्थात दीन से फिर जाओगे) या अल्लाह का यह कहना कि كل نفس ذائقة الموت कुल्लु नफसिन ज़ाएकतुल मौत (प्रत्येक जानदार को मौत का मज़ा चखना है), या यह आयत कि افان مت فهم الخالدون अफइन मुत्तो फहुमुल खालिदून (ऐ मुहम्मद यदि तुम्हें भी मरना है तो क्या ये सदैव जीवित रहेंगे) इन आयतों को आप पैग़म्बर (सल्ल०) के जीवित होने के प्रचलित अक़ीदे से किस तरह संतुलित समझते हैं। फिर यह बात भी समझने की है कि बाद के लोगों ने जागते हुए में अल्लाह के पैग़म्बर से मुलाकात के सैकड़ों दावे कर रखे हैं। किसी की बुजुर्गी का यह हाल है कि वह जब चाहता है अल्लाह के पैग़म्बर की मजलिस में जा बैठता है। कुछ लोगों ने अपने आप को उस कचहरी का पदाधिकारी भी बता रखा है, लेकिन इसके विपरीत सहाबा के जमाने में हमें ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता जब बड़े-बड़े सहाबा अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से आपके परामर्श के लिए कभी आपकी कचहरी में उपस्थित हुए हों। हालाँकि ठीक पैग़म्बर की मृत्यु के बाद खिलाफत के सवाल पर उम्मत में कुछ समय के लिए विवाद पैदा हुआ। फिर आगे चलकर सिफ्फीन और जमल के युद्धों में मुसलमानों की तलवारें आपस में उलझ गयीं लेकिन ऐसी कठोर परिस्थितियों में भी किसी को इस बात का होश न रहा कि वह इन गंभीर परिस्थितियों में अल्लाह के पैग़म्बर की मुबारक कब्र की ओर जाता और उनसे हस्तक्षेप करने की गुज़ारिश करता। यदि पैग़म्बर कब्र के अन्दर वास्तव में जीवित होते और उनके यहाँ दुनिया के मामलों पर कचहरी लग रही होती तो फिर यह कैसे संभव होता कि सदियों बाद अहमद अलरिफाई से भेंट के लिए तो आप (सल्ल०) का हाथ कब्र से बाहर आ जाए लेकिन आप (सल्ल०) के सहाबा अपने आपसी विवादों को सुलझाने के लिए आपकी कचहरी में आने से परहेज़ करें ।

मेरी इस आपत्ति पर अल्लाह यार खान और उनके नक्शबन्दी दोस्त कुछ बुझ से गये। बोलेः यह भी तो देखिए कि जिन लोगों ने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से जागते हुए भेंट की बातें की हैं यह बड़े बड़े नाम हैं। उन्हें झूठा भी तो नहीं कह सकते।

हाशिम जो मेरी बात को अब तक बहुत ध्यान से सुन रहे थे, कहने लगे हाँ यह बात तो सोचने की है, उधर मेरा ध्यान बिल्कुल नहीं गया था कि जो पैग़म्बर (सल्ल०), ठीक जागते हुए में बाद के औलिया की मजलिसों में इस तरह बार-बार आता हो, उसके आगमन का चर्चा प्रतिष्ठित सहाबा के युग में क्यों सुनायी नहीं देता?

यह तो रहा अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) के मृत्यु के बाद के जीवन का प्रश्न जिसपर हर तरह के प्रमाण बाद के लोगों ने प्रस्तुत किए। ये सभी रिवायतें बाद के युग में गढ़ी गयीं, हालाँकि प्रारम्भिक युग के मुसलमान इस बात के कहीं अधिक अधिकारी थे

कि ख़िलाफत के प्रश्न पर आपसी विवाद को सुलझाने के लिए अल्लाह के पैग़म्बर अपने शारीरिक अस्तित्व के साथ सहाबा की मजलिस में आ जाएँ या कम से कम मुबारक कब्र के अन्दर आयोजित होने वाली सात दिवसीय कचहरी में उन लोगों को बुला लें। बात यह है कि यदि पैग़म्बर के जीवित होने का अक़ीदा गढ़ा न जाए तो फिर इन सभी आध्यात्मिक लोगों का अपनी कब्रों में जीवित होने और लाभ पहुँचाने की बातें अपनी वैधता खो देंगी। मेरी इस बात पर अल्लाह यार खान ने खामोश रहने में ही बेहतरी समझी। उनके दोस्त कुछ बुझे-बुझे दिलों के साथ उठ खड़े हुए।

फ़रमायाः यकीन की बातें हैं जी, यकीन की। प्रमाणों और रिसर्च से यह बातें समझ में नहीं आतीं।

हाशिम कुछ गुमसुम से थे। उनके चेहरे पर एक रंग आता और एक जाता था। वह इस बात पर ज़ोर दे रहे थे कि अभी यह बात और चले लेकिन मैंने कभी और के वादे के साथ उनसे अनुमति ले ली।

# 25
# शब जाए कि मन बूदम

नक्शबन्दी सिलसिले का विस्तार इसकी बहुसंख्या और भूमिगत आध्यात्मिक गतिविधियों की चहल-पहल के बावजूद इस्ताम्बोल का वास्तविक आध्यात्मिक रंग नक्शबन्दी नहीं बल्कि मौलवी है। पर्यटकों के लिए इस्ताम्बोल समाअ में भाग लेने वालों का शहर है। अमेरिका व यूरोप से मौलवी नृत्य के शौकीन झुण्ड के झुण्ड इस्ताम्बोल की मौलवी खानकाह में आते हैं और फिर यहाँ से उन्हें समूह के रूप में कौनिया भेजा जाता है।

आज सितम्बर की 12वीं तिथि हो चुकी थी। उलूदाग़ पर आध्यात्मिक लोगों के आगमन की प्रतीक्षा जारी थी। सोचा क्यों न आज मौलाना रूम की ख़ानकाह में समाअ की महफिल का आनन्द लिया जाए क्योंकि पार्कों और सांस्कृतिक स्थलों पर पर्यटन मन्त्रालय की ओर से समाअ की जो महफिलें शाम होते ही आयोजित होती रहती हैं उनका उद्देश्य मात्र पर्यटकों के लिए मनोरंजन की व्यवस्था करना होता है। इसलिए इस विचार से मैंने ग्लाटा टॉवर के निकट स्थित रूमी की ख़ानकाह जाने का प्रोग्राम बना लिया।

ग्लाटा टॉवर पर पर्यटकों की भीड़ थी। विशेष रूप से खाने-पीने की दुकानों के आगे शौकीन लोगों का जमघट लगा था। कहीं से कहवा की महक आ रही थी और कहीं से बालिक इकमिक की तेज़ सुगन्ध भूख बढ़ाने का कारण बन रही थी। सोचा रात का खाना न जाने कब मिले, समाअ की महफिल कब समाप्त हो, इसलिए यह सोचकर बालिक इकमिक का आनन्द लिया। सन्तरे के जूस से प्यास बुझायी और एक दरवेश जैसी भावुकता के साथ खानकाह की ओर चल पड़ा।

इस्माईल आग़ा या जर्राही की खानकाह की तुलना में रूमी की ख़ानकाह में ज़ायरीन की अधिकतर संख्या पश्चिमी देशों से आने वालों की थी। संभवतः इस आभास का एक कारण यह भी हो कि जिस समय मैं वहाँ पहुँचा था, ठीक उसी समय एयरपोर्ट से पर्यटकों की दो बसें तुर्की के नौ दिवसीय आध्यात्मिक पर्यटन के लिए आयी थीं। इस्ताम्बोल से कौनिया तक उनके नौ दिवसीय कार्यक्रम का विवरण ट्रेवल ऐजेन्टों ने पहले से ही निर्धारित कर रखा था। समाअ की मजलिस में उन लोगों के भाग लेने का दृश्य देखने योग्य था। एक आश्चर्यजनक दृश्य था जिसमें यह लोग खोए हुए थे। हल्की खुमार भरे दिए की रौशनी में जब समाअ में भाग लेने वालों ने नअत का आरम्भ किया और उसके समापन पर सुरीली बाँसुरी ने कला का जादू जगाया तो पश्चिमी देशों से आने वाले ये ज़ायरीन चकित से होकर रह गए और फिर जब समाअ में व्यस्त लोगों ने अपनी

गर्दनें झुकायीं और चार सलाम के साथ वास्तविक नृत्य का आरम्भ हुआ तो उनमें से कुछ लोग अपने आप पर नियन्त्रण न रख सके। कुछ लोगों ने तो उसी तरह नाचने का प्रयास भी किया। लेकिन फिर जल्द ही उन्हें अपनी अक्षमता का एहसास हुआ और वह हिल-डुल कर बैठ गए। लगभग दो घण्टे तक नृत्य और समाअ का यह कार्यक्रम अपनी सारी औपचारिकता, कलात्मक निपुणता और प्रभावी वातावरण के साथ चलता रहा और तब पृष्ठभूमि में दुरूद और सलाम की आवाज़ गूँजी जो संभवतः इस बात का संकेत था कि मजलिस अपने समापन को पहुँच चुकी है। समाअ में भाग लेने वालों ने एक विशेष अदा के साथ अपनी गर्दनें झुकायीं और तालियों की गूँज ने जैसे महफिल के नियमित समापन की घोषणा कर दी। समाअ की मजलिस में पश्चिम वालों की इतनी अधिकता और रसिकता देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि आखिर इन लोगों को कौन सी चीज़ यहाँ खींच कर लाती है। ये लोग समाअ के शब्दों से अवगत होते हैं और न ही इन्हें दुरूद और सलाम की धार्मिक सार्थकता की जानकारी होती है। फिर क्या मात्र मौलवियाना नृत्य और माहौल का असर उनकी सन्तुष्टि के लिए पर्याप्त होता है?

इस सवाल को हल करने के लिए मैंने अपने पास में बैठे हुए मि० वॉटसन से पूछा कि आपको यह मजलिस कैसी लगी? बोले! वन्डरफुल! हाँ कौनिया की तुलना में थोड़ी कम कम महसूस हुई। वहाँ कौनिया के समाअ में बड़ी तीव्रता पायी जाती है। ऐसा लगता है जैसे आपका ''आप'' बाहर आ जायेगा।

अर्थात आप कौनिया से होकर आए हैं? कहने लगेः जी हाँ! मैं और मेरी पत्नी नैन्सी, जो उस समय उनके बगल में बैठी थीं, की ओर संकेत करते हुए बताया, पिछले हफ्ते कौनिया में थे। फिर स्वयं ही स्पष्ट किया; हो सकता है कि इसका एक कारण वहाँ मौलाना की रूहानी उपस्थिति भी हो क्योंकि सूफी मास्टर स्वयं वहाँ मौजूद हैं और संभवतः इसीलिए वहाँ समाअ की मजलिस पर ऐसा लगता है जैसे रूमी की आध्यात्मिकता की छत्रछाया फैली हुई हो।

तो क्या आपका यह पहला अनुभव था रूमी की ज़ियारत का। फ़रमाया जी हाँ पहला लेकिन आखिरी नहीं। मैं तो यहाँ आकर आश्चर्यचकित हूँ। एक नयी दुनिया मेरे सामने प्रकट हुई है। प्यार और भाई-चारे की दुनिया। यहाँ आकर मुझे पहली बार पता चला कि जीवन इसलिए है कि इसे उत्सव के रूप में मनाया जाए। ग़म पालने और सम्पत्ति एकत्र करने के लिए नहीं। बहुत सकून है क्या बताऊँ बहुत सकून है समाअ की इन मजलिसों में।

मि० वॉटसन किसी नये मुरीद की तरह अपने शेख की बरकतों का अभी और भी उल्लेख करते। मैंने उनकी बात काटते हुए पूछा कि यात्रा कैसी रही और वापसी कब होनी है? फ़रमायाः यात्रा का क्या कहना, यह कोई सामान्य यात्रा नहीं। यह एक आध्यात्मिक अनुभव था। हैदर पाशा स्टेशन से जब हम लोग कौनिया की ओर रवाना हुए

तो लगभग 13 घण्टे की इस यात्रा में मुझे बहुत लगाव का एहसास हुआ। ऐसा लगा जैसे रूमी ने स्वयं हमें अपनी शरण में ले रखा हो। क्या बताऊँ यह एक अत्यन्त व्यक्तिगत आध्यात्मिक अनुभव है जिसे व्यक्त करना संभव नहीं।

रात अधिक हो चुकी थी। मि० वॉटसन से अधिक बात-चीत तो न हो सकी। हाँ रूमी के एक नये पश्चिमी मुरीद के अनुभवों ने इस प्रश्न की धार और तेज़ कर दी कि आखिर रूमी की इस असाधारण लोकप्रियता का कारण क्या है। मात्र पश्चिम का आध्यात्मिक शून्य या कुछ और?

रूमी सूफीवाद की दुनिया के संस्थापकों में से हैं, वह समाअ के ईजाद करने वाले हैं, आध्यात्मिक नृत्य उनकी खोज है। उन्होंने अपनी बाँसुरी की सुरीली आवाज़ से एक दुनिया को रुलाया है और सबसे बढ़कर यह कि उन्होंने सूफीवाद की बाइबिल लिखी है जिसे मसनवी मअनवी के रूप में सभी सूफी लोगों में विश्वसनीयता प्राप्त है। दिलवालों की मजलिसों में इस किताब की नियमित रूप से शिक्षा दी जाती है। बहुत से लोगों की दृष्टि में मसनवी की हैसियत ''हस्त कुरआन दर ज़बान-ए पहलवी'' की है। इब्ने अरबी, जिन्हें सूफीवाद का सबसे बड़ा शेख कहा जाता है, के बाद यदि किसी व्यक्ति ने सुलूकवालों की हृदय और दृष्टि पर सबसे अधिक प्रभाव डाला है तो वह मौलाना रूमी का व्यक्तित्व है जिसे इकबाल जैसे समय के प्रतिभाशाली शायर के यहाँ भी रूमी पीर की हैसियत प्राप्त है। फिर यदि मि० वॉटसन शेअर और गाने के इस जादुई माहौल में भावविभोर हो जाएँ तो इस पर कुछ आश्चर्य नहीं करना चाहिए। सच्चाई तो यह है कि शेअर और गीत में बहुत जबरदस्त ताकत है और यदि आप इसके शौकीन भी हो गए हैं तो फिर आपके शिकार हो जाने की संभावना बहुत बढ़ जाती है। रूमी के शेअर यदि आपने शम्स सम्प्रदाय के गायकों के मुँह से सुने हों तो आपको कुछ अनुमान हो सकता है कि शेअर और गीत का जादू वास्तव में है क्या? कुछ वर्षों पहले मुझे एक बार न्यूयार्क में इस सम्प्रदाय को सुनने का अवसर मिला। उस मजलिस में शेअर पर दाद देने वालों की एक बड़ी संख्या ईरानियों की थी। सारंगी पर : दिलतंगम व दीदार तू दरमान-ए मनस्त बैरंग रख्त ज़माना ज़िन्दान मनस्त का गाना जैसे ही छिड़ा, ऐसा लगा जैसे मजलिस वाले अपने आन्तरिक अस्तित्व के साथ अचानक जाग उठे हों।

ताअज तू जुदा शुदा अस्त आगोश मरा अजगिरिया कसी न दीदा खामोश मरा का शेअर जब आकर्षक संगीत के साथ गायिका के गले से जारी हुआ तो मजलिस वालों की हालत देखने योग्य थी और फिर जब गायक कुछ हंगामा उभारने वाले लय में :

ई आशिकान ई आशिकान आन कश कि बीनदी रवी ऊ
शोरीदा गरदत अक्ल ऊ आशुफ्ता गरदत खवी ऊ
मअशूक रा जूयान-ए शवद दुकान ऊ वीरान शवद
बर रूद सर पोयान-ए शवद चून आब अन्दर जवी ऊ

के चरण में प्रविष्ट हुआ तो यह समझिए कि नियन्त्रण के सारे बाँध टूट गए। दिलवाले तो आवेश की स्थिति में थे ही, स्थानीय अमरिकी प्रतिभागियों ने भी धमाल की सी हालत पैदा कर रखी थी। ऐसे में कहाँ किसी को इस बात का होश होता है कि कहने वाले ने क्या कहा और सुनने वाले ने क्या सुना। वास्तविक चीज़ तो वह आनन्द है जो आपके हिस्से में आया और जो गीत के जादूपन के कारण आपका सब कुछ बहा ले गया। आप अपने खूँटे पर बँधे न रह सके।

मैं जब भी शायरी और गीत की सूफी मजलिसों में सम्मिलित हुआ, गीत की भाषा मुझे असाधारण रूप से कत्ल करने वाली लगी है, अपराध हद तक क़त्ल करने वाली। जिन दिनों मैं बी.ए. का छात्र था, ग़ालिब सेमिनार के अवसर पर एक शाम ऐवान-ए ग़ालिब में दक्ष कवियों की ग़जलें प्रसिद्ध गायकों के गले से सुनाए जाने का कार्यक्रम था। बचपन से मेरी शिक्षा-दीक्षा जिस माहौल में हुई थी वहाँ गायकों से ग़जलें सुनना, चाहे वह दक्ष और सिद्धहस्त कवियों का प्रामाणिक गीत ही क्यों न हो, उचित नहीं समझा जाता था। अभी मैं इसी उधेड़ बुन में था कि मौलाना सईद अहमद अकबरावादी (रह०) पर नज़र पड़ी, जो अगली पंक्ति में जगह ले चुके थे और जिनकी अध्यक्षता में कुछ दिनों पहले मुझे यूनियन हॉल के एक कार्यक्रम में अपने शेअर सुनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मौलाना मुझसे स्नेह करते थे। निकट गया तो उन्होंने स्नेहपूर्वक अपने पास बैठा लिया। ग़ालिब की एक आध ग़ज़लें ऐसे ही गुज़र गयीं क्योंकि अभी माहौल नहीं बना था। हाँ जब गायिका ने खुसरो की ग़ज़ल नमीदानम कुजारफ्तम आरम्भ की तो ऐसा लगा जैसे मजलिस जाग उठी हो। उधर सारंगी की लय पर

नमीदानम चे मंजिल बुवद शब जाए कि मन बूदम
बहर सू रक्से बिस्मिल बुवद शब जाए कि मन बूदम
परी पैकर निगार-ए सर व कद्द-ए लाला रुख्सारे
सरापा आफते दिल बुवद शब जाए कि मन बूदम

के शेअर गूँज रहे थे और उधर मजलिस वाले खामोश, पूरी तरह आश्चर्यचकित, मानो कल्पना की आँखों में स्वयं ही इस मजलिस में जा बैठे हों। फिर जब कहने वाले ने

खुदा खुद मीर-ए मजलिस बुवद अन्दर ला मकाँ खुसरो
मुहम्मद शमअ महफिल बुवद शब जाए कि मन बूदम

की शुभ सूचना सुनायी तो शेअर और गीत के मारे इन श्रोताओं को इस बात का अनुमान ही न हो सका कि कहने वाले ने बातों ही बातों में क्या बात कह दी है।

कहते हैं कि निज़ामुद्दीन औलिया ने अमीर खुसरो को एक बार यह आदेश दिया कि वह कभी कभी आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करने के लिए बू अली कलन्दर की मजलिसों में भी बैठा करें। बू अली कलन्दर जानते थे कि खुसरो निज़ामुद्दीन औलिया के मुरीद हैं। एक दिन उन्होंने खुसरो से मजलिस के अन्दर ही कहा कि खुसरो अल्लाह के पैग़म्बर की

मजलिसों में मेरा आना जाना लगा रहता है, वहाँ मैं बहुत से अल्लाह के औलिया को उपस्थित पाता हूँ लेकिन आज तक तुम्हारे शेख निज़ामुद्दीन औलिया दिखायी नहीं दिए। कहते हैं कि अपने शेख के बारे में यह सुनकर खुसरों उदास रहने लगे। निज़ामुद्दीन औलिया को जब उनके दुख का कारण मालूम हुआ तो उन्होंने खुसरो से कहा कि बू अली से कहना कि आप मुझे पैग़म्बर (सल्ल०) की कचहरी में पहुँचा दें, वहाँ मैं स्वयं अपने शेख को ढूँढ लूँगा। बू अली ने जब खुसरों के मुँह से यह माँग सुनी तो अपना हाथ उनके सीने पर रखा। हाथ का रखना था कि खुसरों ने अपने आप को अल्लाह के पैग़म्बर की कचहरी में पाया। वह मजलिस वालों में से हर एक को देखते जाते। उनकी परेशानी देखकर अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने पूछा, खुसरो किसकी तलाश में हो? कहा अपने शेख को ढूँढता हूँ। फ़रमाया वह यहाँ नहीं ऊपर वाली कचहरी में मिलेंगे। ऊपरी मंजिल पर क्या देखते हैं कि एक और कचहरी लगी है जिसमें अल्लाह के पैग़म्बर स्वयं मौजूद हैं। हाँ अल्लाह के औलिया का हल्का बदला हुआ है। उन्हें वहाँ भी निज़ामुद्दीन औलिया दिखायी नहीं दिए। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने उन्हें परेशान देखकर फ़रमाया, खुसरो ऊपर की कचहरी में जाओ। इस तरह वह विभिन्न कचहरियों को पार करते हुए सबसे ऊँचे स्थान पर सातवीं कचहरी में पहुँचे। यहाँ भी अल्लाह के पैग़म्बर मौजूद थे, उनके चारों ओर बड़े औलिया ने अपना घेरा बना रखा था, लेकिन यहाँ भी खुसरों को मायूसी हाथ लगी। खुसरो को मायूस देखकर अल्लाह के पैग़म्बर ने अपने पास बैठे हुए एक नक़ाबपोश की ओर संकेत करते हुए फ़रमाया कि नक़ाब उलट कर देखो। अब जो नक़ाब उलटते हैं तो क्या देखते हैं कि वह नक़ाबपोश कोई और नहीं निज़ामुद्दीन औलिया का सम्मानित व्यक्तित्व है। खुसरो अपने शेख का यह ऊँचा स्थान देखकर अपनी भावनाओं पर नियन्त्रण न रख सके। वह श्रद्धा के साथ अपने शेख का क़दम चूमने के लिए लपके। लेकिन ठीक उसी पल बू अली ने खुसरो के सीने से अपना हाथ खींच लिया और पलक झपकते ही ये दृश्य उनकी निगाहों से ओझल हो गए। यह है वह कहानी जो सूफ़ियों के हल्कों में इन शेअरों की पृष्ठभूमि के रूप में बयान की जाती है। वैसे तो यह एक नअत है लेकिन इसका वास्तविक उद्देश्य मुरीद के दिल पर अपने शेख की प्रतिष्ठा का सिक्का बैठाना है। एक ऐसी मजलिस जहाँ खुदा स्वयं मजलिस की अध्यक्षता कर रहा हो, मुहम्मद मजलिस का दीपक हों और आध्यात्मिक लोगों के इस सम्मेलन में हमारे औलिया विभिन्न स्तरों पर अपनी चलत-फिरत और लगातार भागीदारी के दावेदार हैं, एक ऐसी मजलिस की प्रामाणिकता पर शेअर और गाने से तो प्रमाण प्रस्तुत किया जा सकता है वह्य और बुद्धि से नहीं।

# 26
# अल मुरीद ला युरीद

रात सोने में कुछ ऐसी देर न हुई थी, लेकिन न जाने क्यों आज थकान का एहसास कुछ अधिक था। वैसे तो आज कोई विशेष व्यस्तता न थी। इसलिए यह सोचकर संतोष हुआ कि आज अधिकतर समय होटल में ही आराम करूँगा। आज सितम्बर की 13 तारीख थी। अब उलू दाग़ की चोटियों पर आध्यात्मिक लोगों के सम्मेलन में केवल एक दिन शेष रह गया था। मुस्तफा ऊग्लू ने कह रखा था कि आज किसी समय भी कोई खबर आ सकती है। उलू दाग़ की आध्यात्मिक असेम्बली में जहाँ संसार भर के कुतुब अपने चालीस अब्दाल और दर्जनों अवताद और अख्यार के साथ एकत्र होते हैं किसी ऐसी मजलिस में भाग लेने के विचार से ही दिल उछलने लगता और कभी सन्देहों और खतरों को ध्यान में रखते हुए एक तरह का भय छा जाता। संभवतः यह उस रहस्यपूर्ण यात्रा का प्रभाव था कि मनोवैज्ञानिक दबाव के कारण यात्रा से पहले ही हाथ पैर जवाब देने लगे थे। अभी मैं कल्पना की आँखों में इस यात्रा की योजना ही बना रहा था कि टेलीफोन की घंटी बजी। दूसरी ओर हाशिम और उनके दोस्त थे जो विदाई मुलाकात के लिए आना चाहते थे। परसों मेरी रवानगी का दिन था। कल का दिन उलू दाग़ के लिए निर्धारित था और आज दिन का बड़ा हिस्सा मुझे प्रतीक्षा में व्यतीत करना था।

लेकिन अभी तो थकान मेरे ऊपर अधिकार जमाए हुए है। मैंने हाशिम से कहा कि यदि चाहो तो दोपहर के बाद आ जाओ।

फोन रखने के बाद अचानक सोचा कि क्यों न आध्यात्मिक लोगों के पिछले वार्षिक सम्मेलन की रिपोर्ट पर एक दृष्टि डाल ली जाए जो मुझे होजा उस्मान ने कुछ दिन पहले भेजवायी थी। काग़ज़ात के ढेर से वह रिपोर्ट निकाली और चाय की घूँट के साथ उसके पन्नों को उलटने लगा। ऐसा लगता था कि इस रिपोर्ट के विभिन्न हिस्से अलग-अलग लोगों ने मिलकर तैयार किए थे, कहीं हाथ की लिखी अरबी लिखावट थी तो कहीं तुर्की भाषा में जगहों और व्यक्तियों के नाम लिखकर विभिन्न तरह के नक्शे और सारणियाँ बना दी गयी थीं और कहीं विभिन्न नामों के आस-पास विभिन्न संख्याओं को एक विशेष क्रम से सजाया गया था। कहीं-कहीं अंग्रेजी टाइप में स्थानों और बड़े शहरों के नाम लिखे थे और उनके चारों ओर रेखा द्वारा वृत्त बनाकर इंसानों के नाम लिख दिए गए थे। इस पाण्डुलिपि को कई बार उलट-पलट कर देखने से यह बात समझ में आयी कि उलू दाग़ की पिछली कान्फ्रेन्स में संसार भर के कुतुबों के अतिरिक्त चालीस अब्दाल, बारह

उपदेशक औलिया और बारह तकवीन वाले औलिया ने भाग लिया था। अब्दाल की एक बड़ी संख्या सीरिया से आयी थी जिन्होंने अपने तौर पर 700 अख्यार की वार्षिक गतिविधियों की रिपोर्ट प्रस्तुत की। यह भी पता चला कि संसार भर के कुतुब के अतिरिक्त जिनका अपने क्षेत्रों में निवास होता है, पाँच अतिरिक्त कुतुब भी होते हैं, जिन्हें कुतुब विलायत की हैसियत प्राप्त है और उनका स्थायी निवास सीरिया में रहता है। रहे संसार भर के सात कुतुब तो उनकी हैसियत वास्तव में यह है कि उनमें से प्रत्येक अपने ज़माने में किसी न किसी पैग़म्बर का नायब है और वह सात नबी जिनके नायब होने की जिम्मेदारी सात क्षेत्रों के कुतुब निभाते हैं, उनके नाम इस तरह हैं,: इब्राहीम, मूसा, हारून, इदरीस, ईसा, आदम और यूसुफ। इसके अतिरिक्त चार अवताद चारों किनारों पर हर समय नियुक्त रहते हैं। चार इमाद विभिन्न स्थानों से दुनिया के मामलों पर नज़र रखते हैं। इन चारों के नाम मुहम्मद हैं। गौस या कुतुबुल अक्ताब एक ही व्यक्तित्व के दो पहलू हैं। हाँ यही कुतुबुल अक्ताब जब कुतुब-ए-वहदत बन जाता है तो उसे कायनात पर पूरी तरह अधिकार प्राप्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त लगभग 70 नुजबा हसन के नाम से मिस्र के मरुस्थल में रहते हैं। नकीबों की सही संख्या तो मालूम न हो सकी। हाँ यह अवश्य पता लगा कि उनके नाम अली होते हैं और उनका निवास साधारणतः पश्चिमी देशों में होता है। पिछले वर्ष की कारवाई को एक नक्शे के माध्यम से एक दृष्टि में दिखाया गया था लेकिन उसका समझना कोई आसान काम न था। विभिन्न तरह के वफक और नक्शों के बीच एक गोल वृत्त में उलझी हुई लिखावट में शब्द अल्लाह लिखा था और उसके ऊपर संभवतः इस मजलिस को बुरी नज़र से बचाने के लिए एक आँख वाला निशान बना दिया गया था। रिपोर्ट को बन्द करके वापस बैग में रख दिया। कभी यह सोचकर खुशी होती कि आध्यात्मिक लोगों की इस मजलिस में साक्षात रूप से भाग लेने का अवसर मिलेगा और कभी खतरों और सन्देहों के कारण दिल डगमगाने लगता।

जुहर की नमाज़ के बाद हाशिम, वलीद और साजिद आए। हाशिम सामान्यतः चिन्तित और गंभीर लग रहे थे। साजिद के चेहर पर एक तरह का खिलन्डरापन था और वलीद ने अपने हाथों में बिस्मिल्लाह वाली सुसज्जित पोर्सलीन की प्लेट थाम रखी थी जिसे वह उपहारस्वरूप मुझे देना चाहते थे। हाशिम को मेरी वापसी का दुख था। कहने लगे सुलूक के इस रास्ते पर जब सन्देहों, चिन्ताओं एवं भ्रमों ने आ घेरा है, आप ठीक दोराहे पर हमें छोड़े जा रहे हैं। कितना अच्छा होता कि कुछ दिन और आप यहाँ ठहरते और सुलूक के मार्ग की गुत्थियों को सुलझाने में आपसे मदद मिलती।

साजिद ने सामान्यतः चहकते हुए हस्तक्षेप किया। कहने लगा कि कल रात देर तक हम लोग आपस में बात करते रहे। इस्ताम्बोल तो हम लोग एक शेख की तलाश में आए थे, एक ऐसे पूर्ण शेख की तलाश में जो अपने संसर्ग में हमें रखकर तीक्ष्ण बना दें, जिसके हाथ में हाथ देकर हम अपनी मुक्ति के सम्बन्ध में सन्तुष्ट हो जाएँ। लेकिन यहाँ

आकर स्वयं शैखवाद की संस्था के बारे में हम सन्देहों का शिकार हो गए। शेख हिशाम और अब्दुल करीम के आपसी झगड़ों के कारण हमारा दिल उचाट होना शुरू हुआ था। फिर हम शेख महमूद आफन्दी की पवित्रता के घेरे में गिरफ्तार हुए। लेकिन जब हम लोग महमूद आफन्दी से भेंट के लिए गए। तो उनके व्यक्तित्व के दो रंग देखे। एक तरफ तो वह जनता के लिए 'ऐसे व्यक्ति हैं जिनकी दुआ कबूल हो जाती हैं, उनका हाथ चूमना और उनकी एक झलक देख लेना ही मुरीद के लिए मुक्ति का साधन है, और दूसरी तरफ जब वह विशिष्ट लोगों में होते हैं या अपने बराबर के लोगों में बैठे हुए होते हैं तो वह भी सामान्य इन्सानों की तरह दूसरों की दुआओं के मोहताज होते हैं। पिछले हफ्ते हम उनसे मिलने के लिए गए थे। उस अवसर पर दो भिन्न मजलिसों में उनके यह दो भिन्न रूप नज़र आए। पाकिस्तानी नक्शबन्दियों के प्रतिनिधिमण्डल में, जिसे मुश्किल से ही दरबार में हाज़िरी की अनुमति मिल सकी थी, मैं भी सम्मिलित हो गया था। शेख एक कुर्सी पर विराजमान थे, उपस्थित लोग हाथ मिलाने के बाद दुआओं की याचना के साथ उनके कदमों में बैठ गए। लोग दुआओं की याचना करते रहे। शेख ने कभी-कभी आमीन और इन्शा अल्लाह के अतिरिक्त कोई शब्द मुँह से नहीं निकाला। यह थी जनसाधारण से मुलाकात की एक झलक जिसके लिए लोग दूर-दराज़ से शेख महमूद के दरबार में आते हैं। दूसरी तरफ कुछ ही देर बाद अफग़ानिस्तान से बड़े सूफियों का एक समूह आया। मैं भी किसी तरह उस मुलाकात में जा घुसा। मुझे आश्चर्य हुआ कि विशिष्ट लोगों की इस मजलिस में बैठने की व्यवस्था बदली हुई थी। शेख महमूद तो अपनी कुर्सी पर ही विराजमान रहे। हाँ उनके आस-पास चार पाँच कुर्सियाँ लगा दी गयी थीं जिनपर उस प्रतिनिधिमण्डल के महत्वपूर्ण सदस्य बैठे थे। छात्रों और छोटी उम्र के लोगों को फर्श पर जगह मिली थी। जिस बात पर मुझे बहुत अधिक आश्चर्य हुआ वह यह थी कि इस प्रतिनिधिमण्डल के अध्यक्ष ने अपना हाथ शेख के कंधे पर रखा और उनके स्वास्थ्य लाभ के लिए ऊँची आवाज़ से दुआ करने लगा। यह सूफी शेख लगभग 15-20 मिनट तक कुरआन की विभिन्न आयतें पढ़कर शेख महमूद पर दम करते रहे। मेरी समझ में यह बात न आयी कि जिस शेख को कश्फ की दौलत प्राप्त हो, जो महत्वपूर्ण नक्शबन्दी आत्माओं, ग़ौस-ए आज़म यहाँ तक कि अल्लाह के पैग़म्बर से भी स्वयं दुआओं की याचना करने की क्षमता रखता हो, उसे किसी समकालीन सूफी शेख की झाड़-फूँक की क्या आवश्यकता आ पड़ी है! हम तो यह समझकर आए थे कि शेख का खुदा से सीधा सम्पर्क है। अल्लाह के पैग़म्बर की मजलिसों में उनका आना-जाना लगा रहता है। लेकिन अब जो उन्हें दूसरों की दुआओं और झाड़-फूँक का मोहताज देखा तो उन किस्से कहानियों से विश्वास उठ गया कि वास्तव में यह लोग अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की मजलिस में बैठने वाले लोग हैं।

क्या उम्र होगी शेख आफन्दी की? मैंने साजिद के विचारों को पढ़ने का प्रयास किया।

मेरा विचार है कि 80—85 वर्ष से अधिक ही के होंगे।

80 वर्ष? यह तो वह उम्र है, जब शेख नाज़िम हक्कानी के कथनानुसार फ़रिश्ते कलम उठा लेते हैं।

तो क्या सूफ़ियों से बकवास की बातें उम्र के इसी चरण में पैदा होती हैं? हाशिम ने हस्तक्षेप किया।

बकवास की बातों के लिए उम्र की शर्त नहीं बल्कि दिमाग़ में सीरोटोनीन के स्तर के ऊँचा हो जाने की आवश्यकता होती है। वलीद ने धीमी मुस्कुराहट के साथ समर्थन किया।

अब देखो जो बातें नाज़िम हक्कानी 80 वर्ष की उम्र में कह रहे हैं उसी तरह की बातें मौलाना अशरफ अली थानवी ने कलम उठाने से पहले वाली उम्र में कह दी थीं, वलीद ने और अधिक स्पष्ट किया ।

तो क्या उनके लिए कलम पहले ही उठा लिया गया था? साजिद ने शरारत भरी शैली में पूछा।

लगता तो ऐसा ही है। अब देखो नाज़िम हक्कानी कहते हैं कि मलिकुल मौत (मौत का फ़रिश्ता) उनके मुरीदों की जान निकालने के लिए नहीं आयेंगे। जान का निकलना चूँकि एक कष्टकारी स्थिति होती है इसलिए नाज़िम हक्कानी का कहना है कि वह स्वयं अपने मुरीदों की जान निकाल कर मलिकुल मौत के हवाले कर देते हैं। कुछ इसी तरह की बात मौलाना अशरफ अली थानवी के बारे में कहीं जाती हैं, जैसा कि अशरफउस्सवानेह में लिखा है, उन्होंने फ़रमाया कि एक मुरीद महिला ने मृत्यु के समय मेरा नाम लेकर कहा कि वह ऊँटनी लेकर आए हैं और कहते हैं कि इस पर बैठ कर चल, फिर उसके बाद उसकी मृत्यु हो गयी।

वास्तव में? साजिद ने आश्चर्य प्रकट किया।

हाशिम जो अब तक खामोश, गंभीर कहीं खोए हुए थे, सँभल कर बैठ गए। कहने लगे, इस तरह के दावों ने बड़ी समस्याएँ पैदा कर दी हैं। उनको मानें तो दीन का नाश होता है और न मानने का प्रश्न ही नहीं क्योंकि यह सब बातें बहुत पवित्र हस्तियों के मुँह से निकली हैं। उन्होंने मेरी ओर देखते हुए पूछा। आपका क्या विचार है इस सम्बन्ध में?

मेरा दृष्टिकोण तो आपको मालूम हैः अल्लाह तआला ने हमें सोचने समझने की योग्यता दी है। हमें हर समस्या को वह्य और बुद्धि की कसौटी पर परखना चाहिए क्योंकि अल्लाह तआला हमारा हिसाब हमारी समझ और बुद्धि के अनुसार लेगा।

आपकी बात बिल्कुल ठीक है। लेकिन यह बात समझ में नहीं आती कि विश्वसनीय और पवित्र हस्तियों के मुँह से खुदा के दर्शन का दावा, अल्लाह के पैग़म्बर की ज़ियारत की घटनाएँ बल्कि ठीक जागते हुए स्थिति में आपसे मिलने की बातें, जो इस निरन्तरता के साथ नकल हुई हैं, उसे अक्ल और वह्य के साथ कैसे संतुलित किया जा सकता है। इमाम नसफी से तो आप अवगत ही होंगे, उनकी "शर्ह अक़ाइद" अहल-ए सुन्नत मुसलमानों में विश्वसनीय माना गया है। उनका दृष्टिकोण है कि यह कहना वैध है कि अल्लाह का घर अल्लाह के कुछ वलियों की ज़ियारत के लिए चला जाता है। इसी तरह ग़ज़ाली जो बहुसंख्य मुसलमानों के लिए हुज्जतुल इस्लाम की हैसियत रखते हैं, उन्होंने المنقد من الضلال अल-मुनकज़ मिनज्ज़लाल में लिखा है कि सूफी लोग फ़रिश्तों और नबियों की आत्माओं को ठीक जागने की हालत में देखते हैं, उनकी बातें सुनते और उनसे लाभ प्राप्त करते हैं। अब सुनिए शेख अब्दुल क़ादिर जीलानी का चमत्कार, यह कहते हुए हाशिम ने अपने हैण्डबैग से फोटोकॉपी किए हुए पन्नों की एक फाईल निकाली। जिस पृष्ठ की आवश्यकता थी उसे खोला फिर मेरा ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करते हुए कहने लगे। देखिए روح المعانی रूहुल मआनी तो सुन्नियों की विश्वसनीय तफ्सीर है न? इसमें आयत 22/35 के अन्तर्गत लिखा हैः शेख अब्दुल क़ादिर जीलानी फ़रमाते हैं कि मैंने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) को एक दिन जुहर की नमाज़ से पहले देखा। आप (सल्ल०) ने फ़रमायाः बेटा तुम बोलते क्यों नहीं, प्रचार-प्रसार क्यों नहीं करते? मैंने कहा अब्बाजान मैं ग़ैर अरब आदमी हूँ। बग़दाद विद्वान अरबी बोलने वालों के सामने अपना मुँह कैसे खोलूँ, तो मुझसे अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने कहा कि अपना मुँह खोलो, मैंने मुँह खोला, आप (सल्ल०) ने सात बार अपने मुँह की लार मेरे मुँह में डाला फिर फ़रमाया अब लोगों से बात करो और उन्हें अपने पालनहार की ओर विवेक और अच्छी नसीहत से बुलाओ। आगे लिखा है कि शेख अब्दुल क़ादिर जीलानी जुहर की नमाज़ के बाद प्रचार-प्रसार करने के उद्देश्य से मस्जिद में बैठ तो गए लेकिन उनके ऊपर भय छा गया। तब देखा कि अली (अलै०) उनके सामने खड़े हैं, कह रहे हैं बेटा भाषण दे। लिखा हैः मैंने फिर कहा कि मुझ पर भय छा गया है। फ़रमाया, मुँह खोलो! मैंने मुँह खोला आप (रज़ि०) ने छः बार अपने मुँह की लार मेरे मुँह में डाला और फिर गायब हो गए। अल्लामा आलूसी की इसी रूहुल मआनी में शेख अबुल अब्बास मुर्सी के बारे में लिखा है कि एक व्यक्ति ने उनसे इस विचार से हाथ मिलाना चाहा कि उन्होंने बड़े बड़े अल्लाह वालों से मुलाकात की है, इस पर शेख ने फ़रमाया कि मैंने इस हाथ से कभी किसी से मुसाफहा नहीं किया जिस हाथ से मैंने अल्लाह के पैग़म्बर से मुसाफहा किया है। शेख ने यह भी फ़रमाया कि यदि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) एक क्षण के लिए भी मेरे सामने से ओझल हो जाएँ तो मैं अपने आप को मुसलमानों में न गिनूँ।

इन घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करके अल्लामा आलूसी यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) अपनी कब्र में शरीर और आत्मा के साथ जीवित हैं। जब अल्लाह तआला किसी व्यक्ति के पर्दे उठा लेने का इरादा करता है तो उसको अल्लाह के पैग़म्बर की ज़ियारत करने का सौभाग्य प्राप्त हो जाता है। अब थोड़ा भारत और पाकिस्तान के उलमा के कुछ हवाले भी सुनते जाइए जिसे मैंने अपनी डायरी में नोट कर रखा है। तज़किरतुल रशीद के लेखक ने रशीद अहमद गंगोही के बारे में लिखा है कि वह कभी कभी सुबह की नमाज़ हरम शरीफ (काबा की मस्जिद) में पढ़ते हुए देखे गए जबकि वह व्यावहारिक रूप से गंगोह में ही थे। नक्श-ए हयात में हुसैन अहमद मदनी ने एक नक्शबन्दी बुजुर्ग के बारे में लिखा है कि वह हज़रत नानौतवी के मज़ार पर उपस्थित होकर देर तक ध्यान लगाए रहे, बाद में यह रहस्योद्घाटन किया कि उन्होंने ध्यान लगाने के दौरान हज़रत नानौतवी से तहरीक-ए खिलाफत के कार्यकर्ताओं पर सरकारी अत्याचार का उल्लेख किया तो उन्होंने मौलाना महमूदुल हसन की ओर संकेत करके फ़रमाया, कि मौलवी महमुदूल हसन अल्लाह के अर्श को पकड़ कर हठ कर रहे हैं कि अंग्रेज़ों को जल्दी भारत से निकाल दिया जाए। अब एक घटना हज़रत मुजद्दिद साहब के पत्रों से भी सुन लीजिए। उनका कहना है कि अल्लाह के औलिया के रूपों का प्रतिरूप विभिन्न स्थानों पर प्रकट होता रहता है। हालाँकि जिसका रूप प्रकट होता है उसको इस बात का कदापि ज्ञान नहीं होता जैसा कि हज़रत मख्दूमी किब्लागाही ने फ़रमाया, कि कोई उन्हें मक्का में देखता है, कोई कहता है कि हमने उन्हें बग़दाद में देखा। हालाँकि वह उस दौरान अपने घर से निकले ही नहीं होते।

यह तो कुछ उदाहरण हैं अन्यथा ऐसे दावों का एक बड़ा लम्बा सिलसिला है। बात वहीं आकर रुक जाती है कि उन्हें स्वीकार करूँ तो ईमान जाता है और यदि इन्कार कर दूँ तो बुजुर्गों पर से विश्वास उठ जाता है। हम लोग इस परिस्थिति से बहुत परेशान हैं, सोचा कि आपके सामने प्रामाणिक हवालों के साथ अपनी बात रखेंगे, संभवतः आप कुछ मार्गदर्शन कर सकें। हाशिम ने डायरी बन्द की। एक पल के लिए मजलिस पर खामोशी छायी रही।

और वह फतहुल रब्बानी वाली बात भी तो बताओ, वलीद ने जैसे हाशिम को कोई भूला हुआ बिन्दु याद दिला दिया हो, उसने डायरी खोली। सम्बन्धित पृष्ठ उलटे, कहने लगे, अब दो एक वाक्य शेख अब्दुल क़ादिर जीलानी की फतहुल रब्बानी से भी सुनते जाइये। कहते हैं कि लोगों! मेरी बात सुनो, मेरा कहना मानो, मेरी हैसियत तुम्हारे लिए कसौटी की है। मैं तुम्हारे खोटे खरे को अच्छी तरह पहचानता हूँ। फिर आगे फ़रमाते हैं कि ऐ फ़क़ीहों! ऐ जाहिदों! ऐ इबादतगुजारों! मेरे पास तुम्हारी मौत और तुम्हारे जीवन की सूचनाएँ हैं। जब तुम्हारे मामलों का आरम्भ मुझ पर संदिग्ध हो जाता है तो इसके निष्कर्ष

में तुम्हारी मृत्यु के समय का ज्ञान हो जाता है। हाशिम ने फिर डायरी बन्द कर ली और मेरी ओर प्रश्नात्मक निगाहों से देखने लगे।

मैंने कहा कि सत्य का अवलोकन, ज़ियारत-ए रसूल या कब्रों और आत्माओं का कश्फ, आध्यात्मिक लोगों के दृष्टिकोण से यह सबकुछ अनुभव की बातें हैं। वह कहते हैं कि यह सब कुछ समझ कर करने का काम नहीं बल्कि करके समझने की चीज़ है। तुम लोगों ने ध्यान और चिल्लाकशी में काफी समय लगाया है। यदि कभी शेख का दामन छोड़ा है तो बहुत दिनों तक उसे थामे भी रहे हो। इन अभ्यासों से तुम्हें क्या लगता है? क्या कभी शेख की कल्पना कभी वास्तविकता बन सकी? तुम जिन सालिकों के साथ इस्माईल आग़ा में आध्यात्मिक अभ्यास करते रहे। उन्हें भी कभी टटोलने का प्रयास किया? क्या उनमें से कोई अल्लाह के पैग़म्बर की ज़ियारत की प्रतिष्ठा प्राप्त कर सका?

जिससे भी बात की, कोई खुलता नहीं। अधिकतर लोगों को मायूस पाया। लेकिन वह अपनी आध्यात्मिकता का भ्रम बाकी रखना चाहते हैं।

हाँ जब मैंने एक बार अल्लाह यार खान को यह कह दिया कि मैंने कल आपको सुल्तान अहमद में मगरिब की नमाज़ पढ़ते देखा था। वह इस बात को रद्‌द करने की बजाए मुस्कुराकर खामोश हो गए। साजिद ने मुश्किल से अपनी हँसी पर नियन्त्रण करते हुए कहा।

जी हाँ, मेरा भी यह एहसास है कि वह सालिक जिन्होंने अभी कुछ प्राप्त नहीं किया है, अपने बारे में अप्राकृतिक बातों को बढ़ावा देते हैं। कुछ लोग सपनों को बयान करके बुजुर्गी का एहसास दिलाते हैं। हाशिम ने साजिद का समर्थन किया।

लेकिन सपना तो आप भी देखते होंगे, बुजुर्गी वाले सपने न सही। मैंने हाशिम को छेड़ने की कोशिश की।

सपना नहीं, वह सब नाईटमेयर (डरावने सपने) होते हैं। मैं हर समय इस एहसास में घुलता रहता हूँ कि शायद मेरे अन्दर ही अध्यात्म को प्राप्त करने की क्षमता ही नहीं। 6–7 वर्षों से इस मार्ग में लगा हूँ। प्रसिद्ध शैखों की जूतियाँ सीधी की हैं लेकिन अब भी स्थिति यह है कि ध्यान का प्रत्येक जाल खाली जाता है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) की ज़ियारत तो दूर की बात जीवित शेख की कल्पना भी पासपोर्ट साइज़ से आगे नहीं बढ़ पाती। शैखों से जब भी शिकायत की, वह कहते हैं कि शेख की कल्पना की दौलत लाखों में एक को मिलती है। जब शेख की कल्पना इतनी दुर्लभ चीज़ है तो फिर नक्शबन्दी आत्माओं से मिलना और सम्बन्ध स्थापित करना कितनों के सौभाग्य में आता होगा और इसी पर पैग़म्बर की ज़ियारत का अनुमान लगाया जा सकता है।

हाशिम संभवतः अभी कुछ और बोलते लेकिन वलीद ने प्रश्न को एक दूसरे पहलू से सुसज्जित किया। कहने लगे यह बात समझ में नहीं आती कि जब यहाँ न कोई कश्फ होता है, न दुनिया के मामलों में अधिकार का नुस्खा हाथ लगता है, जीवन शेख की सेवा

में व्यतीत हो जाता है यहाँ तक कि सालिक अपने बुढ़ापे के कारण स्वयं शेख बन जाता है, तो फिर यह सिलसिला चल कैसे रहा है? इतने बड़े पैमाने पर बैअत और इरशाद के पीछे आखिर रहस्य क्या है ?

मैंने कहा कि तुम लोगों के प्रश्न में ही वास्तव में तुम्हारी बैचेनी का उत्तर छिपा हुआ है, बस इसे इम्पोर्ट करने की आवश्यकता है।

वास्तव में? साजिद और वलीद ने एक ही साथ आश्चर्य प्रकट किया।

मैंने कहाः हाँ बिल्कुल। प्रश्नों को लगातार सजाते रहने और उसे विभिन्न पहलू से उलट-पलट कर देखते रहने से स्वयं उन प्रश्नों के अन्दर से उत्तर मिल जाता है। अब सुनो! यह सब कुछ होता कैसे है। एक आदमी शेख कैसे बनता है, कश्फ की दौलत कब और कैसे हाथ आती है। दिलवाले इस बिन्दु से अच्छी तरह अवगत होते हैं कि 'पीराँ नमी परन्द मुरीदाँ मी परानन्द अर्थात पीर नहीं उड़ता है बल्कि मुरीद उसे उड़ाते हैं। मुरीदों का प्रचार जितना प्रबल होता है पीर का कद भी उसी के अनुसार बढ़ता चला जाता है। अब रहा बेचारा मुरीद तो उसकी समझदार लोगों ने परिभाषा ही यह की है المريد لا يريد अल मुरीद ला युरीद (मुरीद का कोई इरादा नहीं होता) यह बहुत निर्धन लोग होते हैं जो शेख के कदमों में अपनी जान माल, आत्मसम्मान, दीन ईमान सब कुछ न्यौछावर करने के बाद भी इसी ग़लतफहमी का शिकार रहते हैं कि वह जो कुछ भी हैं शेख की कृपा के कारण हैं। अब तुम पूछोगे कि यह निर्धन जीवधारी तैयार कैसे होते हैं। अच्छा भला आदमी अचानक अपना सबकुछ, यहाँ तक कि अपनी मुक्ति की गंभीर और संवेदनशील समस्या भी अपने ही जैसे किसी मनुष्य के हाथ में देकर कैसे सन्तुष्ट हो जाता है? यह रहस्य तुम्हें यदि मालूम हो गया तो संभवतः तुम मुरीद बनने की बजाए मुरीद बनाने में दिलचस्पी लेने लगो। बात यह है कि मनुष्य के अन्दर विचार और चिन्तन, विश्लेषण और अच्छाई-बुराई में अन्तर की एक प्राकृतिक योग्यता रखी गयी है। वह्य से यह योग्यता और अधिक विकसित होती और परिष्कृत होती है, जबकि अन्धविश्वासों के प्रभाव में यह योग्यताएँ मद्धिम हो जाती हैं। पीर कुछ और नहीं करता, वह विभिन्न बहानों से, अभ्यास और प्रशिक्षण के हवाले से आपके व्यक्तित्व की बुद्धि का स्विच ऑफ कर देता है। कुछ मुरीदों का यह स्विच जल्दी ऑफ हो जाता है। और कुछ को आत्मसम्मान का सौदा करने और बौद्धिक व्यवहार को छोड़ने में काफी समय लग जाता है। इसलिए तुम देखते हो कि शेख के कुछ चहेते मुरीद सूलुक की बहुत सी मंजिलें एक ही छलाँग में तय कर लेते हैं। वास्तव में यह वह लोग होते हैं जिनका स्विच ऑफ करना कुछ आसान होता है या फिर वह जो इस मार्ग में अपना कैरियर देखते हैं, जो इस बिन्दु को समझते हैं कि शेख की एक कृपा दृष्टि उन्हें खिलअत और इजाज़त प्रदान कर सकती है। अच्छे भले मनुष्य इस्लाम के धोखे में जब आध्यात्मिक लोगों के जाल में फँसते है तो उन्हें आरम्भ में इस बात का अनुमान ही नहीं हो पाता कि शेख का पूरा

ध्यान उसके व्यक्तित्व का स्विच ऑफ करने में लगा हुआ है। इस उद्देश्य के लिए विभिन्न मनोवैज्ञानिक तरीक़े अपनाये जाते हैं। कभी कहा जाता है कि सालिक का अहंकार बहुत बढ़ा हुआ है, उसे नियन्त्रित करने की आवश्यकता है, कभी कहा जाता है कि वह ज्ञान के भ्रम में गिरफ़्तार है, उसे यह घमण्ड है कि वह दीन की समझ रखता है। ज्ञान का यह पर्दा सुलूक की मंजिल में उसके मार्ग का रोड़ा बन गया है। मानो शेख हर तरह से इस बात पर सन्तुष्ट हो लेता है कि सालिक ने अपने आप को पूरी तरह मेरे कदमों में डाल दिया है। अब उसके विचार में भलाई और बुराई का पैमाना शेख का व्यक्तित्व है। कभी-कभी शेख इस बात की जाँच के लिए मुरीद की जुबान से ईमान के विरुद्ध शब्द कहलाना चाहता है और जब वह यह देखता है कि मुरीद को शेख के आज्ञापालन में दीन के विरुद्ध शब्द कहने में भी कुछ संकोच नहीं तो वह समझ लेता है कि अब उसका स्विच पूरी तरह ऑफ हो चुका है। यह जो आप देखते हैं कि मुईनुद्दीन चिश्ती परीक्षा लेने के लिए अपने मुरीद से ला इलाह इल्लल्लाह चिश्ती रसूलुल्लाह कहलवाना चाहते हैं तो इसके पीछे वास्तव में यही रहस्य है। और यदि कोई मुरीद अपने शेख अशरफ अली थानवी को यह पत्र लिख भेजता है कि जब वह ला इलाह इल्लल्लाह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह कहना चाहता है तो उसके मुँह से बिना किसी इरादे के अशरफ अली रसूलुल्लाह निकल जाता है तो यह समझ लीजिए कि वह चालाक मुरीद चापलूसी के माध्यम से शेख से निकट और उससे खिलाफत की प्राप्ति के लिए प्रयासरत है। कभी-कभी शेख अपने मुरीद के बुझे स्विच पर सन्तुष्ट होने के लिए उसकी तरफ अपना झूठा निवाला या बचा खुछा खाना बरकत के नाम पर बढ़ा देता है और यह देखना चाहता है कि मुरीद के अन्दर घृणा का कोई तत्व तो नहीं पाया जाता और कुछ मुरीद जिनका स्विच ऑफ हो चुका होता है वह इस ताक में भी लगे रहते हैं कि कब शेख की कोई छोड़ी हुई चीज़ बरकत के रूप में उनके हाथ आ जाए। कुछ लोगों ने तो शेख की सेवा में अपनी ऐसी घटनाएँ भी लिखी हैं कि वह किस तरह बरकत प्राप्त करने के विचार से शेख से नज़र बचाकर उनका उगलदान पी गए। नेक प्रकृति जिन बातों से घृणा करती है, उसे सूफीवाद की दुनिया में सालिक की परीक्षा समझा जाता है।

सामान्यतः शेख से इस स्तर की श्रद्धा के जायज़ होने के लिए सहाबा किराम की पैग़म्बर (सल्ल०) से मुहब्बत को प्रमाण बनाया जाता है। सूफी लोग कहते हैं कि प्रतिष्ठित सहाबा पैग़म्बर (सल्ल०) के वजू का पानी नहीं गिरने देते। आपके मुँह से निकला हुआ थूक अपने शरीर पर मल लेते, इस बारे में आप क्या कहते हैं। वलीद ने बातचीत के दौरान हस्तक्षेप किया।

देखिए पहले तो यह विचार ही ग़लत है कि अल्लाह के पैग़म्बर के व्यक्तित्व से इन सूफियों की कोई तुलना हो सकती है। दूसरी बात यह कि यह बात जो लोगों में प्रसिद्ध है कि सहाबा वजू का पानी ज़मीन पर नहीं गिरने देते या इस प्रतीक्षा में रहते कि कब उन्हें

मुँह की लार मिले और वह उसे चेहरे या शरीर पर मल लें और कब अल्लाह के पैग़म्बर बाल कटवायें और आपके मुबारक बाल उनके हिस्से में आ जाएँ, तो यह सभी रिवायतें रसूलुल्लाह की शरीफ प्रकृति और इस्लाम के व्यापक सन्देश के विपरीत हैं। यह रिवायतें वास्तव में इसीलिए गढ़ी गयी हैं कि बाद के शेख सामान्य लोगों की गर्दनों पर अपने आप को थोपने के लिए इन गढ़ी हुई रिवायतों में अपने कर्म के लिए प्रमाण ढूढें। अल्लाह के पैग़म्बर अपने बरकत वाले बाल बाँटने के लिए नहीं आए थे लेकिन अब इसका क्या किया जाए कि कुछ लोगों ने पैग़म्बर के बाल को अल्लाह की निशानियों में सम्मिलित किया और बाकायदा अल्लाह की निशानियों की इस मान्यता पर किताबें लिख डालीं।

तो मैं यह कह रहा था कि शेख अपने मुरीद की बन्ददिमाग़ी की परीक्षा लेने के लिए उसे विभिन्न परीक्षाओं से गुज़ारता है। कभी उसे शैखों की कब्रों पर चिल्ला करने का आदेश देता है और वह बेचारा ध्यान की स्थिति में हलूसे (मरीचिका) का शिकार हो जाता है, कहता है कब्र वाले से उसे लाभ प्राप्त हो रहा है। हालाँकि क़ुरआन इस बात का कठोरता से इन्कार करता है कि मुर्दे सुनते हैं लेकिन इन आध्यात्मिक लोगों का कहना है कि बड़े-बड़े सूफी अपनी अपनी कब्रों में जीवित हैं। क़ुरआन का दृष्टिकोण इस सवाल पर जो कुछ भी हो उनके बुज़ुर्गों की आत्माएँ अपनी कब्रों में ज़रूरतमंद की सहायता के लिए तैयार बैठी हैं। मुरीद को जब इन पौराणिक बातों पर पूरा विश्वास हो जाता है तो समझिए कि वह शेख के काम का आदमी बन गया है। अब उसे गर्वपूर्ण खिलअत प्रदान कर किसी महत्वपूर्ण मिशन पर नियुक्त किया जा सकता है।

क्षमा कीजिएगा! हाशिम ने आपत्ति जताई, क़ुरआन की यह आयत अपनी जगह पर कि फ इन्नक ला तुस्मिउल मौता (आप मरे हुए लोगों को नहीं सुना सकते) लेकिन सहीहैन (बुखारी व मुस्लिम) की इस रिवायत का क्या कीजिएगा जिसमें यह बताया गया है कि बद्र के युद्ध में मारे गये लोगों की ओर संकेत करते हुए अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने उनके नाम ले लेकर कहा कि ऐ फलाँ ऐ फलाँ क्या यह बेहतर न होता कि तुम अल्लाह और उसके पैग़म्बर का कहा मान लेते। हमने अपने पालनहार का वादा सच्चा पाया। तुम्हारे खुदाओं ने जो तुमसे वादा किया था, उसका क्या हुआ? रिवायत करने वालो ने लिखा है कि हज़रत उमर (रज़ि०) जो उस अवसर पर मौजूद थे, बोले ऐ अल्लाह के पैग़म्बर आप उन मरी हुई लाशों से क्या कह रहे हैं, क्या यह सुनने की क्षमता रखते हैं क्योंकि क़ुरआन में तो यह आया है कि فانک لا تسمع الموتیٰ फ इन्नक ला तुस्मिउल मौता, रिवायत करने वाला कहता है कि इस पर अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमायाः अल्लाह की क़सम जिसके हाथ में मुहम्मद की जान है मेरी यह बातें तुम उन (लाशों) से बेहतर नहीं सुनते।

इस सम्बन्ध में मेरा दृष्टिकोण सीधा और स्पष्ट है। मैंने हाशिम को समझाने का प्रयास किया। वह सभी रिवायतें जो कुरआन की स्पष्ट आयतों से टकराती हैं, चाहे कितनी ही ऊँची किताबों में क्यों न पायी जाती हों, कुरआन की तुलना में उनकी विश्वसनीयता इतनी भी नहीं हो सकती कि उनकी प्रामाणिकता के लिए रिवायत करने वालों के चरित्र की जाँच की जाए। जिस बात के विरुद्ध कुरआन की गवाही मौजूद हो, भला उसके बाद किसी बहस की गुजांइश ही कब शेष रह जाती है। देखिए इस तरह की सभी रिवायतें जो कुरआन के विवेकपूर्ण रवैये के विपरीत हैं उनके कारण केवल इस्लाम की छवि ही धूमिल नहीं हुई बल्कि शैखवाद की वैधता के लिए बहुत व्यापक मैदान हाथ आ गया। चमत्कारों के दावेदार इस बात से अच्छी तरह अवगत थे कि जब तक पैग़म्बर (सल्ल०) के सहाबा के हैरतनाक चमत्कारों पर गवाही न दे दी जाए, पीरों फकीरों की अप्राकृतिक घटनाओं के लिए कोई प्रमाण हाथ न आएगा। जिस तरह कुरआन के विपरीत समाए-ए मौता (मृतकों का सुनना) के सही होने के लिए रिवायत गढ़ी गयी उसी तरह सूफियों के चमत्कारों को प्रमाणित करने के लिए भी यह बताया गया कि, जैसा कि बुखारी में नक़ल हुआ है कि उसैद बिन हुज़ैर और इबाद बिन बशीर के हाथों में लाठी थी, घुप अंधेरी रात में उनकी लाठी चमक उठी और वह इस रौशनी में घर पहुँच गए। अबू बक्र सिद्दीक के चमत्कार के बारे में लिखा है कि एक बार अबू बक्र सिद्दीक और उनके मेहमानों ने खाना खाया। जितना खाना खाया गया उससे कहीं अधिक नीचे से उभर आया। कहते हैं कि खाना खाने के बाद वह पहले की तुलना में तीन गुना अधिक हो गया। पैग़म्बर के सहाबियों से जुड़ी इन अप्राकृतिक घटनाओं से बुजुर्गों के चमत्कारों को सैद्धान्तिक वैधता मिली। इन लोगों ने अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए केवल किस्से ही नहीं बनाए बल्कि इन किस्सों को आयतों के अवतरित होने के अवसर से जोड़ दिया। उदाहरण के लिए आयत-ए इसरा या हिजरत को इसरा वल मेराज बना दिया। पैग़म्बर को आसमानों में उड़ाया ताकि सूफियों की उड़ान और उनके तैउल अर्ज़ के लिए वैधता उपलब्ध की जाए। क्या बताऊँ पारिभाषिक शब्दों के अर्थ और भाव तक बदल डाले। हाव हू का नाम जिक्र या गुणगान हो गया। कर्म का सारा उपदेश कर्म करने वाले के हिस्से में गया और कर्म या अमल करने वाला वह ठहरा जो शैतान जिन्नों को नियन्त्रण में करने के लिए घटिया नुस्खों से अवगत हो। मुराकबा (ध्यान), एकान्तवास और इस तरह के दुनिया से अलग होने को भले कर्म का नाम दिया गया। वली के नाम से पीर, फ़कीर, मजजूब और मलंग की कल्पना निगाहों में उभरने लगी। औलिया की मसनद पर उन लोगों ने अधिकार कर लिया जिन्होंने अन्तिम दीन इस्लाम को स्थगित रखने की सारी व्यवस्था कर रखी थी, जो मुहम्मद (सल्ल०) की शरीअत के विपरीत अपनी गढ़ी हुई तरीकत पर गर्व करते थे। और उसे वास्तविकता तक पहुँचने का प्रामाणिक मार्ग बताते थे और सबसे बढ़कर यह कि जिनके बड़बोलेपन का यह हाल था कि वह मुखर होकर इस

बात की घोषणा करते थे कि यश और कीर्ति वाले नबियों की शरीअत का ज़माना एक हज़ार वर्ष होता है, जैसा कि दाऊद कैसरी जो फसूसुल हिकम के टीकाकार हैं, उन्होंने लिखा है, और हज़ार वर्ष के बाद शेख नक्शबन्द मुजद्दिद अल्फसानी की खुदाई योजना के अन्तर्गत आगमन पर प्रमाण प्रस्तुत किया है।

साजिद आश्चर्यचकित थे। उनके लिए मेरी बहुत सी बातें संभवतः नई खोज का दर्जा रखती थीं। वलीद समर्थन करते हुए कभी सिर हिलाते और कभी अपने साथियों के चेहरे के प्रभाव पढ़ने की कोशिश करते। हाशिम इस दौरान अपनी डायरी और क़लम में व्यस्त रहे। जी तो चाहता था कि दीवाने नौजवानों से बात-चीत का यह सिलसिला जारी रहे। लेकिन उलू दाग़ की शौक भरी यात्रा की तैयारी के लिए मैंने इन नौजवानों से अनुमति ली। विदाई लेते हुए इकबाल का यह शेअर पढ़ा :

मुहब्बत मुझे उन जवानों से है          सितारों पर जो डालते हैं कमन्द

# 27
# नज़र बूजक

मग़रिब की नमाज़ का समय हो चुका था और अब तक कोई खबर न आई थी। इस दौरान मुस्तफा ऊग्लू को कई बार फोन करने की कोशिश की लेकिन सम्पर्क न हो सका। मग़रिब की नमाज़ के बाद मुसल्ले पर बैठा कल की यात्रा के बारे में सोच रहा था। बार-बार दिल की गहराई से दुआ निकलती कि यह अद्‌भुत अवसर हाथ से निकल न जाए, चालीस वर्ष बाद उलूदाग की चोटियों पर आध्यात्मिक लोगों का विश्वस्तरीय सम्मेलन आयोजित हो रहा था। यह मात्र संयोग था कि मैं उस अवसर पर इस्ताम्बोल में मौजूद था और प्रकृति ने अन्दर-अन्दर आध्यात्मिक लोगों से कुछ ऐसे सम्पर्कों की व्यवस्था कर दी थी जिससे न केवल यह कि इस सम्मेलन की सूचना मिली बल्कि इसमें भाग लेने की संभावना भी पैदा हो गयी। आज दिन भर इसी आशा में व्यतीत हुआ। दिन समाप्त होने के निकट आ गया था। हर पल यह खटका लगा था कि कहीं यह यात्रा मात्र एक स्वप्न बनकर न रह जाए। मन ही मन में यात्रा की तैयारियों का अवलोकन करता। निर्देश था कि एक हल्के-फुल्के हैण्ड बैग के अतिरिक्त कोई और वस्तु साथ न ली जाए। कमरबन्द से बँधे पर्स में यात्रा के काग़ज़ात, कुछ स्थानीय और विदेशी मुद्रा और क्रेडिट कार्ड जैसी चीज़ें रख लीं। कुछ देर बाद अन्ततः मुस्तफा ऊग्लू का फोन आ ही गया। कहने लगे कि मैं रास्तें में हूँ। यात्रा की व्यवस्था हो गयी है। इस्माईल आग़ा से यात्रा के लिए कुछ आवश्यक वस्तुएँ खरीदनी हैं। थोड़ी देर में इन्शा अल्लाह भेंट होगी। लगभग देढ़-दो घण्टे बाद मुस्तफा ऊग्लू थके हारे, हाँफते काँपते होटल पहुँचे। आते ही कुर्सी पर आधा लेट गए। उनके हाथ में एक थैला था जिसे मेरी ओर बढ़ाते हुए बोलेः लीजिए यह रहा आपकी यात्रा का सामान। फिर जेब से लाल रंग का एक सुन्दर लिफाफा निकाला, बोलेः यह रहा आपका भाग लेने के लिए अनुमति पत्र, इसे सुरक्षित रखिएगा, इसके बिना प्रवेश संभव न होगा। खोल कर देखा कि संभवतः मेरे नाम का अनुमति पत्र बनवा लाये हों लेकिन यहाँ ऐसी कोई चीज़ न थी, यह तो प्लास्टिक का एक सुसज्जित प्लेट था जो बुरी नज़र से बचने के लिए इस्ताम्बोल में सामान्य रूप से दुकानों में बेचा जाता है। कहने लगे इसे उलट कर देखिए। इसके पीछे एक छोटी सी चिप लगी है। कॉन्फ्रेन्स के इलैक्ट्रानिक दरवाजें पर आपके प्रवेश पर बज़र बत्ती जल जाएगी। यह न हो तो लाल रोशनी जलती रहेगी और अलार्म बज उठेगा। मैंने उसे उलट-पुलट कर देखा, सावधानी से जेब में रख लिया।

और यह उस बैग में क्या है, मैंने मुस्तफा ऊग्लू से पूछा। बोले, खोलकर देखिए उसमें दरवेशों का लिबास है। बड़ी कठिनाई से यह चीज़ें जुटाई हैं। इस्माईल आग़ा के अतिरिक्त यह चीज़ें कहीं और नहीं मिलतीं।

और इस छड़ी का क्या काम है? अब मैं उनकी योजना समझा। अपने आप पर खूब हँसी आई। तो क्या कल मुझे दरवेशों के लिबास में वहाँ भाग लेना होगा ?

जी हाँ इसके बिना प्रवेश संभव नहीं।

कल सुबह सात बजे आने का वादा करके वह चले गए।

दूसरे दिन लगभग एक घण्टा पहले ही मैं यात्रा के लिए तैयार हो गया। जुब्बे की लम्बाई कुछ अधिक थी, फर्श तक आ रहा था। अचानक याद आया कि मेरे बैग में लगभग दस-पन्द्रह साल पुराना एक सूडानी जुब्बा मौजूद है जो उन दिनों की यादगार है जब मैं तीजानी सूफियों के साथ ज़िक्र की सभा में बैठा करता था। उसे पहना, नक्शबन्दी शैली की कब्र नुमा टोपी लगाई, सफेद साफे को आधे सूडानी ढंग से लपेटा, दो विभिन्न रंगों की हज़ार दाने वाली तस्बीह डाली। उसके ऊपर काँसे के छोटे-छोटे वफक़ और नुक़ूश और लकड़ी के दानों वाले हार डाले। फिर बड़ी सावधानी के साथ गले में बुरी नज़र की वह निशानी डाल ली जिसे मेरे पहचान पत्र की हैसियत प्राप्त थी। एक हाथ में छड़ी थामी और दूसरे हाथ में प्लास्टिक का यात्रा वाला बैग, तैयार होकर आइने के सामने आया। आइने में अपनी तस्वीर देखकर स्वयं अपने व्यक्तित्व से श्रद्धा महसूस होने लगी। बहुत आश्चर्य हुआ कि कब से मेरे अन्दर एक दरवेश छिपा बैठा था, उसे बस बाहर लाने की आवश्यकता थी। अब जो उसे उपयुक्त लिबास का ढाँचा मिला तो वह प्रकट हो गया। इसी दौरान होजा उस्मान का टेलीफोन भी आ गया। उन्होंने कुछ आवश्यक निर्देश दिए, सावधानी बरतने पर ज़ोर दिया और यह बताया कि इस कॉन्फ्रेन्स में तुम एक स्थानीय तुर्क दरवेश की हैसियत से भाग ले रहे हो, मैंने अपनी चिन्ता प्रकट की कि मैं तुर्की भाषा से नाम मात्र के लिए अवगत हूँ। शक्ल सूरत में भी तुर्कों से अलग दिखायी देता हूँ। कहने लगे इसकी चिन्ता मत करो, इस तरह के भाग लेने वाले वहाँ और भी होंगे जो विभिन्न क्षेत्रों और देशों से आए हुए होंगे। वहाँ बात-चीत और सवाल जबाब का कोई अवसर न मिलेगा और हाँ किसी तरह के इलेक्ट्रानिक गैजेट्स यहाँ तक कि कैमरा और मोबाइल भी वहाँ ले जाने की अनुमति न होगी। इन बातों का विशेष रूप से ध्यान रखना।

मुस्तफा ऊग्लू निर्धारित समय पर आए। उन्हें सामान्य दिनों के पहनावे में देखकर मुझे कुछ आश्चर्य हुआ। मैंने पूछा क्या दरवेशी का ध्यान केवल मुझे ही रखना होगा। कहने लगे हाँ पास भी तो केवल आपके पास है। क्या मतलब? मैंने पूछा। कहने लगे, एक ही पास की व्यवस्था हो सकी है और वह भी बड़ी कठिनाई से। न जाने किस

दरवेश ने अपनी बारी आपको दे दी है। यह होजा उस्मान की विशेष कृपा दृष्टि का कमाल है।

कहीं वह दरवेश स्वयं होजा उस्मान तो नहीं हैं, मैंने पूछा।

कोई आश्चर्य की बात नहीं, मुझे भी ऐसा ही लगता है, मुस्तफा ऊग्लू ने अपना सन्देह प्रकट किया।

लेकिन आपके बिना तो यात्रा का आनन्द अधूरा रहेगा।

कहने लगे चिन्ता मत कीजिए। मैं आपके साथ वहाँ तक चलूँगा, जहाँ तक संभव हो सकेगा।

लगभग आधे घण्टे के बाद हम लोग येनीकेपी फेरी टर्मिनल पहुँच गए। यहाँ से बुरसा की यात्रा लगभग एक घण्टे की है। और बुरसा से ऊलू दाग़ की दूरी लगभग 30—35 कि०मी० होगी। सौभाग्य से नाव पर अच्छी जगह मिल गयी। मौसम खुशगवार था। पानी की सतह को छूती हुई हवा की लहर जब निकट से गुज़रती तो ताज़गी और आनन्द का एहसास जगा देती। हमारी नाव बुरसा की ओर चल रही थी। हम लोग जहाज़ के अगले भाग में खुले स्थान पर बैठे थे। नाव के साथ-साथ एक पक्षी हमारे सिरों पर मंडला रहा था। वह लगातार मंडलाता ही रहा। यहाँ तक कि हमारे साथ गुजेलयाली तक आया। एक दरवेश की यात्रा में परिन्दे का साथ एक तरह की रहस्यमयता का वाहक था। मैंने मुस्तफा ऊग्लू से कहा, निश्चित रूप से इस पक्षी में किसी बुजुर्ग की आत्मा है अन्यथा वह इस तरह ऊलूदाग़ की यात्रा में मेरे साथ न चलता। मुस्तफा ऊग्लू मुस्कुराए, कहने लगे रहस्यमयता श्रद्धालुओं के दिल और दिमाग़ में होती है। यदि इस यात्रा में कुछ मुरीद आपके साथ होते तो पक्षी का साथ और उसके लगातार मंडलाते रहने को परोक्ष का इशारा समझते। वैसे पक्षी का रंग हरापन लिए हुए था। आश्चर्य की बात नहीं कि किसी अबदाल की आत्मा हो जो काशिउन पर्वत के समारोह के बाद अब उलूदाग़ की ओर यात्रा कर रहा हो। इसलिए कि कहा तो यही जाता है कि 14 सितम्बर की सुबह को काशिउन पर्वत पर अब्दालों का वार्षिक सम्मेलन होता है और इसी दिन शाम में किसी सुदूरवर्ती स्थान पर कुतुबों के कुतुब की सभा आयोजित होती है जिसमें अब्दाल और अक्ताब और अख्यिार और अवताद सभी भाग लेते हैं। काशिउन पर्वत से ऊलूदाग़ की यात्रा इतनी तेज़ी से या तो तैउल अर्ज़ के माध्यम से हो सकती है या तैरुल अर्ज़ के माध्यम से।

तैरुल अर्ज? मैंने आश्चर्यचकित होकर पूछा।

हाँ, मैंने अभी इस पक्षी के अनुकूल एक अस्पष्ट सा शब्द गढ़ लिया है।

तो क्या आज काशिउन पर्वत पर बहुत अधिक भीड़ रही होगी?

जी हाँ, बहुत से लोग आज के दिन काशिउन पर्वत पर हज़रत नूह के तूफान की वर्षगाँठ मनाते हैं। जूदीदाग़ इसी क्षेत्र में स्थित है जिसके बारे में यह कहा जाता है कि

वहाँ हज़रत नूह की नाव बाढ़ समाप्त होने के बाद आकर ठहरी थी। कुछ लोग अरारात पर्वत को नूह की नाव के ठहरने का स्थान बताते हैं। इधर कुछ वर्षों में अरारात की रहस्यमयता में काफी वृद्धि हुई है। कुछ सिद्धान्तवादी समूहों ने आरारात की चोटी पर नाव की खोज का काफी प्रचार-प्रसार किया है, फिल्में बनायी हैं, पर्यटकों को एक नयी ज़ियारतगाह हाथ आ गयी है।

तो क्या जूदी पर्वत और अरारात पर्वत दो अलग-अलग स्थान हैं? मैंने मुस्तफा ऊग्लू से पूछा।

हैं तो अलग-अलग, इन दोनों के बीच लगभग 200 मील की दूरी है। लेकिन चूँकि यह एक ही पर्वत शृंखला है इसलिए इन दोनों नामों में लोग अनुकूलता तलाश कर लेते हैं। वैसे काशिउन पर्वत स्वयं अपनी जगह कम रहस्यपूर्ण नहीं है। कहते हैं काशिउन की ऊँचाई पर दुआएँ स्वीकृत होती हैं। पुराने ज़माने में शासक वर्षा की दुआओं के लिए काशिउन पर जाया करते थे।

सुना है असहाब-ए कहफ (गुफा वालों) की गुफा भी वहीं कहीं स्थित है।

जी हाँ मैं वहाँ गया हूँ। अब तो उस क्षेत्र में भीड़-भाड़ और निर्माण कार्यों के कारण इस ऐतिहासिक रहस्यमयता का एहसास नहीं होता। हाँ 40 मेहराबों वाली मस्जिद के निशान देखकर बहुत से स्थानीय क़िस्से कहानियों में जान पड़ जाती है। वहीं निकट खूनी गुफा مغارات الدم (मगारातुद्दम) भी है जिसके बारे में प्रसिद्ध है कि यहाँ मानव इतिहास की पहली हत्या हुई और संभवतः क़ाबील की क्षमा याचना के कारण ही यहाँ दुआओं के स्वीकृत होने का प्रमाण लाया जाता है।

अच्छा कभी आपने इस सम्बन्ध में भी विचार किया कि आध्यात्मिक लोगों की अधिकतर खानकाहें और केन्द्र पहाड़ों पर ही क्यों स्थापित होते हैं?

इस प्रश्न पर मुस्तफा ऊग्लू ने पहलू बदला, सँभल कर बैठ गए, कहने लगे पहाड़ों से पैग़म्बरों को एक विशेष लगाव रहा है। जूदी पर हज़रत नूह (अलै०) की नाव रुकी, गुफा वाले लोगों ने पहाड़ की गुफा में शरण ली, मूसा तूर पर्वत पर अल्लाह के मिलने के शौक में गए, मुहम्मद (सल्ल०) पर हिरा की गुफा में पहली वह्य आयी, सौर पर्वत कठिन घड़ी में आप (सल्ल०) का आवास बना और उहुद पर्वत के बारे में यह कथन प्रसिद्ध है कि أحد جبل يحبنا و نحبه उहुद जबलिन युहिब्बुना व नुहिब्बुहू पहाड़ की इसी ऐतिहासिक रहस्यमयता के कारण सदैव आध्यात्मिक लोगों ने उसे अपना आवास बनाया है। अब इसी उलूदाग़ को लीजिए। इससे रहस्यमयता का एक लम्बा इतिहास जुड़ा है। इसका पुराना नाम मिसिओस ओलिम्पोस है। कहा जाता है कि यूनानी देवी-देवताओं ने यहीं से ट्रोज़न वार का अवलोकन किया था। उस्मानी ख़िलाफत के ज़माने तक यहाँ ईसाई राहिबों की खानकाहें स्थापित थीं। और इसी लिए इस पहाड़ का दूसरा नाम कशिश दाग़

अर्थात राहिबों का पहाड़ भी है। सन् 1935 ई० से पहले उलूदाग़ अपने इसी पुराने नाम से प्रसिद्ध था।

मानो मुस्तफा कमाल के सेक्यूलराइज़ेशन से राहिबों की पहाड़ियाँ भी न बच सकीं ?

जी हाँ इन पहाड़ियों के अधिकतर हिस्से अब विन्टर रिसोर्ट्स की हैसियत से प्रसिद्ध हैं। जाड़े के मौसम में तीन-चार मीटर गहरी बर्फ जम जाती है। दुनिया भर से स्केटिंग का शौक रखने वालों का मानो यहाँ मेला लग जाता है।

गोज़ी लियाली की बन्दरगाह अब निकट आ चुकी थी। तट की हरियाली, रौशन धूप की खुशगवार गर्मी, अठखेलियाँ करते हुए हवाओं के थपेड़े और दूर ढँकी हुई पहाड़ियों के दृश्य देखकर आनन्द और ताज़गी का एहसास होता था। थोड़ी देर में हम लोग बुरसा शहर के ठीक बीच में स्थित उलू जामे पहुँच गए। मस्जिद के मुख्य दरवाज़े पर एक सूफी शेख हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। मस्जिद में उनके व्यवहार और स्थिति को देखकर ऐसा लगता था जैसे वह मस्जिद के इमाम हों लेकिन बाद में पता चला कि वह मस्जिद के इमाम के पीर भाई हैं। इज्मीर से आए हैं और यहाँ बुरसा में उनका आना-जाना लगा रहता है। बड़ी गर्मजोशी से मिले। कोई 10 बजे का समय होगा। मस्जिद लगभग खाली थी। ठीक मस्जिद के अन्दर केन्द्रीय हॉल में एक फव्वारा लगा हुआ था जिसके पानी गिरने की आवाज़ से मस्जिद के खामोश वातावरण में एक प्राकृतिक संगीत का एहसास होता था। हम लोग वहीं फव्वारे के निकट फर्श पर दीवार से टेक लगाकर बैठ गए। शेख सऊद कुछ देर तक होजा उस्मान का कुशल क्षेम पूछते रहे। हर थोड़ी देर बाद मेरे आगमन और मुलाकात के लिए आभार प्रकट करते। कहा कि 17 वर्ष से शेख उबूद के मुरीद हैं, वही शेख उबूद काशिउन पर्वत वाले। लगभग 7 वर्ष हुए प्रतिदिन बिना नाग़ा 21 हजार बार नफी (ला इलाह) और इस्बात (इल्लल्लाह) का और सात हज़ार बार अल्लाह के खास नाम का गुणगान करता हूँ लेकिन एक कसक है जो आपसे बयान करना चाहता हूँ। होजा उस्मान आपके आध्यात्मिक और उच्च ज्ञान के स्तर को स्वीकार करते हैं।

शेख सऊद की यह बातें सुनकर मैं थोड़ा परेशान हुआ, कहीं यह सब कुछ मेरी दरवेशी की परीक्षा न हो। मैंने कहा, अवश्य कहिए। आप जैसे अल्लाह वालों का यह भरोसा मेरे लिए एक सम्मान है। वह कुछ पलों के लिए फव्वारे पर निगाहें जमाए रहे, फिर बोलेः पैग़म्बर (सल्ल०) के दीदार या दर्शन के लिए कोई सफल वज़ीफा बताइए। वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति का दिल एक अलग यन्त्र होता है जिसके अनुसार उसके लिए वज़ीफे निर्धारित किए जाते हैं। लेकिन आपने तुलनात्मक रूप से कम उम्र में ही सुलूक की ऊँची मंजिलें तय की हैं इसलिए आपसे बिना संकोच दिल का दर्द कह बैठा।

मेरे लिए यह एक उधेड़बुन की बात थी। एक तरफ दरवेशों के लिबास में उलूदाग़ की यात्रा करने वाले की हैसियत से सऊद की सहायता करना मेरा आध्यात्मिक कर्त्तव्य

बनता था। दूसरी तरफ मैं अपने विचारों से कोई समझौता भी नहीं करना चाहता था। मैंने कुछ पलों के लिए खामोशी साध ली। फिर कहा चिन्ता मत कीजिए, मैं आपको एक वज़ीफा बताऊँगा, वज़ीफा क्या दुआ कह लीजिए। मेरे पास एक कश्फ की दुआ है, एक ऐसी दुआ जो पैग़म्बर (सल्ल०) की पवित्र जुबान पर भी जारी रहती थी। आप बार-बार यह दुआ माँगा करें, इन्शा अल्लाह वास्तविकता आपके ऊपर प्रकट हो जाएगी। मैंने जेब से काग़ज़ का एक टुकड़ा निकाला और उस पर यह दुआ लिख दीः اللّٰهم أرنى الأشياء كما هي अल्लाहुम्म अरिनी अल अशियाउ कमा हेय।

कितनी बार इस दुआ को प्रतिदिन पढ़ना होगा? शेख ने पूछा।

संख्या की शर्त नहीं, केवल दिल की हजूरी चाहिए जैसा कि आप जानते हैं हर दिल अपने हिसाब से और हर हजूरी (उपस्थिति) अपने भाव के अनुपात में परिणाम देती है। इन्शा अल्लाह आप असफल नहीं होंगे।

शेख के चेहरे पर खुशी के चिन्ह उभर आए। उन्होंने अपने थैले से काले कपड़े में लिपटा हुआ काँसे का एक छोटा सा वफक़ निकाला और उसे बड़ी सावधानी से एक नीली डोरी के सहारे मेरी गर्दन में लटका दिया। फिर फ़रमायाः नज़र बूजक।

मैंने वफक़ को उलट-पलट कर देखने की कोशिश की। एक के ऊपर एक दो चौकोर खाने बने थे। बीच में जुल्फिकार की तस्वीर थी और उसके चारों कोनों पर वृत्तों में एक दूसरे के ऊपर विभिन्न अंक लिखे हुए थे। तलवार के ऊपर بسم اللّٰہ الرحمن الرحيم बिस्मिल्लाहिर्रहमान-निर्रहीम और नीचे نصر من اللّٰہ و فتح قريب नसरुन मिनल्लाह व फतहुन करीब खुदा हुआ था। चौकोर की अंदरुनी दीवार पर नादे अली या मज़हरुल अजाइब लिखा था और बाहरी हिस्से पर सूरः फ़ातिहा लिखी हुई थी। कहीं-कहीं सात नोक वाले और आठ नोक वाले तारे बने थे और एक जगह आराहुम लिखकर आसमान की ओर एक सीढ़ी बना दी गयी थी। वफक़ के ललाट पर लाल रंग से 132 लिखा था। पहले पहल तो मैं यह समझा कि शायद यह शेख का व्यक्तिगत उपहार है फिर जल्द ही रहस्य खुला कि शेख के इस उपहार के पीछे वास्तव में होजा उस्मान का इशारा काम कर रहा है।

बातों-बातों में 11 बज गए। समय की तंगी थी। अभी हमें उलूदाग़ के लिए टेलीफेरिक (केबल कार) लेनी थी। लेकिन शेख सऊद ज़ोर दे रहे थे कि रवाना होने से पहले इस्कन्दर कबाब का आनन्द अवश्य लें। इस्कन्दर कबाब बुरसा की विशेष डिश है जो स्वाद में शावरमा की तरह अलबत्ता बनावट में भिन्न होती है। जैसे-तैसे शेख के आतिथ्य से निवृत हुए। टेलीफेरिक स्टेशन पहुँचे जहाँ मुसाफिरों की भीड़ थी। अगली केबल ट्रेन का टिकट प्राप्त किया और दूर दूर तक फैले हरे-भरे दृश्यों का अवलोकन करने लगा। वहीं यैनी कैपलिका का विज्ञापन लगा हुआ था जिसमें बताया गया था कि 1555 ई० में बनने वाला रोमन शैली का यह तुर्की हम्माम उस समय से लगातार अपनी

सेवा उपलब्ध कराने में लीन है। विज्ञापन में यह भी बताया गया था कि बुरसा की ज़ियारत येनी कैपलिका के बिना अधूरी रहेगी, आइए ताज़ा दम होकर बल्कि जीवन की नयी उमंगों और नये अरमान के साथ वापस जाइए। मैंने मुस्तफा ऊग्लू से कहा, सौदा बुरा नहीं है यदि 15 यूरो में जीवन फिर से जी उठे। वह मेरे दरवेशी लिबास की ओर संकेत करते हुए कहने लगे, आपको इसकी कोई आवश्यकता नहीं। अब आप उन लोगों में हैं जो अपने चमत्कारों से मुर्दों को जीवित करते और पलक झपकते तैउल अर्ज के माध्यम से हज़ारों मील की यात्रा तय करते हैं।

............. और यहाँ बुरसा में केबिल कार की प्रतीक्षा में फँसे हैं, मैंने उनके बयान पर ये वृद्धि की।

टेलीफेरिक के ठहरे, शान्त स्टेशन में अचानक हलचल मची। ऐसा लगा जैसे सारा स्टेशन जाग उठा हो। एक तरफ कुछ लोग आने वाली टेलीफेरिक से उतर रहे थे और कुछ लोग जाने वाली टेलीफेरिक में जगह ले रहे थे। मुस्तफा ऊग्लू ने अपने पूर्व अनुभव के आधार पर पिछली सीटों पर हमारी जगह सुरक्षित की ताकि सफर के दौरान प्राकृतिक दृश्यों का पूरा-पूरा आनन्द लिया जा सके। खुदा की पनाह बुरसा और उसके आस-पास में हरी सुन्दरता की छतरी की डोर दूर-दूर तक खिंची थी। ज्यों-ज्यों उलू दाग़ की ओर बढ़ते गए, खुदा की महानता और ताकत और इस क़ायनात में अपनी वास्तविकता पर से पर्दा उठता गया। कुछ देर बाद कादियाला नामक स्थान पर हमारी केबल कार जाकर ठहर गयी। अब अगली मंजिल सारियालान की थी जहाँ से हमें टैक्सी के माध्यम से कारवाँ सराय उलूदाग़ सेन्टर जाना था। दो बजे तक हम लोग कारवाँ सराय पहुँच गए। अभी हमारे पास दो-तीन घण्टे थे। सोचा तब तक होटल में ही आराम किया जाए।

# 28
# कुतुबुल–अक़ताब (महाकुतुब) के कुतुब की मजलिस में

लगभग पाँच बजे एक तुर्क लड़की होटल आ गयी। पहनावे और रंग-ढ़ंग से ज़ाहिरी तौर पर वह होटल की कर्मचारी लग रही थी। लेकिन आयी बाहर से थी और स्वागत कक्ष पर मेरे बारे में पूछती थी। मुस्तफा ऊग्लू जो मेरे साथ थे, उन्होंने इशारा किया कि संभवतः तुम्हारे रवाना होने का समय आ गया है। मुझे देखते ही वह लड़की मेरी ओर लपकी, और एक आकर्षक मुस्कुराहट के साथ बोलीः नज़र बूजक। मैंने भी उत्तर में कहा, नज़र बूजक। उसके कन्धे पर भी नज़र बूजक की एक वैसी ही नीली पट्टी लगी हुई थी जैसी मैंने गले में लटका रखी थी। उसने मुझको ऊपर से नीचे देखा। फिर मुझे साथ चलने का इशारा किया। कभी पेड़ों के बीच, कभी वॉक वे और कभी पगडण्डियों पर कुछ दूर तक मैं उसके साथ चलता रहा। मौसम खुशगवार था। जगह-जगह पर्यटकों के समूह दिखायी दे जाते थे। वह बहुत तेज़ चल रही थी। उसकी चाल में हिरणी के तेवर थे और मैं ठहरा मासूम दरवेश। उलू दाग़ के खुदा शिनास (खुदा को पहचानने वाले) परिदृश्य में पश्चिमी लिबास पहने हुए एक तुर्क लड़की के पीछे दरवेश की भाग-दौड़ का भला क्या जोड़ था। लेकिन नज़र बूजक से नज़र बूजक मिल चुकी थी, भाग्य ने मदद की थी। कुतुबों के कुतुब की सभा में दरवेश की उपस्थिति को अब कुछ कदम रह गए थे। उसने मेरी परेशानी देखकर मुझे तसल्ली दी। कुछ दूर ऊपर जाकर पगडदण्डी नीचे की ओर उतरने लगी। अब जो पीछे मुड़कर देखा तो उलूदाग़ का सारा मैदानी क्षेत्र निगाहों से ओझल था।

नीचे एक बहुत बड़े खेमे का दरवाज़ा दिखायी दे रहा था जिसपर वही नज़र बूजक के चिन्ह लटके हुए थे। नीचे उतरने का रास्ता काफी सँकरा था और शायद सबसे सँकरे स्थान पर एक सुरक्षा गेट कुछ इस तरह लगाया गया था कि उससे गुज़रे बिना आगे बढ़ने की कोई गुजांइश न थी। दरवाज़ा बन्द था। उस लड़की ने मुझे आगे बढ़ने का संकेत किया। पहले तो कुछ समझ में नहीं आया। फिर नज़र बूजक के पीछे लगे इलैक्ट्रानिक चिप की बात याद आयी। निकट गया पिक की आवाज़ के साथ दरवाज़े में हरी रौशनी जली और दरवाज़ा खुल गया। अन्दर स्वागत कक्ष का एक बड़ा स्टॉल लगा था जहाँ उसी तरह की तुर्क लड़कियाँ नज़र बूजक का निशान लगाए व्यवस्था सँभालने में व्यस्त थीं। मुझे देखते ही एक लड़की मेरी ओर लपकी, वफक् के नीचे बटन को दबाकर उसे निकाल लिया, डोरी मेरे गले में लटकी रह गयी। काग़ज़ों का एक ढेर उसके साथ

था। सीरियल नम्बर 132 के खाने में वफक़ का वैसा ही नक्शा छपा था। उसने मेरा वफक़ लेकर एक बड़ी टोकरी में डाल दिया, काग़ज़ पर उपस्थिति का निशान बना दिया और मुझे खेमे की तरफ बढ़ने का संकेत किया। विभिन्न काउन्टरों पर मुझ जैसे कुछ और भी दरवेश नज़र आए, लेकिन इससे पहले कि किसी से दुआ सलाम की गुजांइश पैदा होती बहुत तेज़ी से मेरी मेज़बान ने मुझे खेमे के दरवाज़े तक पहुँचा दिया। यहाँ भी उसी तरह के सुरक्षा गेट से पाला पड़ा। मुझे अनुमान था कि नज़र बूजक की निशानी के सहारे यह दरवाज़ा भी खुल जाएगा। इसलिए इस बार बेधड़क अन्दर चला गया। दरवाज़ा खुलते ही दूसरी ओर एक मेज़बान महिला ने मुस्कुराते हुए नज़र बूजक कहा और बहुत तेजी से नज़र बूजक के पीछे हुक को दबाकर उसे निकाल लिया। डोरी फिर मेरे गले में लटकी रह गयी। फिर शायद पहले से निर्धारित योजना के अनुसार मुझे एक सीट पर बैठाकर चली गयी।

अब जो मैंने खेमे का अवलोकन किया तो पता चला कि इसकी बनावट एक तरह के ओपन एयर थियेटर की है। पहाड़ी के उतार-चढ़ाव ने कुछ इस तरह की स्थिति पैदा कर रखी थी कि थियेटर के अन्दाज़ से दर्शकों की कुर्सियाँ सेट की हुई थीं। नीचे खाली प्लेटफार्म था जिसके सामने कुछ ऊँची पहाड़ी पर एक मंच बनाया गया था। मंच के पीछे एक बहुत बड़ी सफेद स्क्रीन लगायी गयी थी और मंच के दोनों तरफ लगभग आधे भाग तक इसी तरह की स्क्रीन से उसे घेर दिया गया था। दोनों तरफ स्क्रीन के बाहर ओलम्पिक शैली की बड़ी-बड़ी विशालकाय मशअलें जल रही थीं जिससे शायद एक साथ रौशनी और गरमी दोनों का काम लिया जा रहा था। खुले आडिटोरियम में जगह-जगह विभिन्न किनारों पर छोटी-छोटी मशअलें लगी थीं। मानो वातावरण अर्ध प्रकाशित था। मंच के निकट बड़ी मशअलों से रौशनी की शानो-शौकत का माहौल था और इस पृष्ठभूमि में मंच पर बैठे लोग एक तरह के रहस्यमय प्रकाश के अंधेरे में घिरे दिखायी दे रहे थे। अनुमान हुआ कि कार्यक्रम अब शुरू होने ही वाला है कि मजलिस उपस्थित लोगों से नीचे से ऊपर तक भरी हुई थी। अचानक बाँसुरी की एक लय के साथ स्टेज पर लगे चौड़े स्क्रीन पर विभिन्न रंगों के वृत्ताकार दायरे उभरने लगे। दायरे घटते बढ़ते और फैलते सिकुड़ते रहे। फिर बिजली की कड़क के साथ तेज़ रौशनी का दृश्य दिखाया गया। फिर अन्धकार छा गया और उसी समय मंच पर बैठे एक व्यक्ति ने अल्लाहू का मस्ताना नारा लगाया। शब्द हू पुकारा जाना था कि चारों तरफ से हू हू की आवाज़ उठने लगी। इसी दौरान वाद्य यन्त्र भी हू की उस तरंग symphony में सम्मिलित हो गए। कुछ देर में यह गीत अल्लाहुम्म सल्ल-ए अला में बदल गयी। फिर कुरआन की आयत अला इन्न औलिया अल्लाह ला खौफुन अलैहिम वला हुम्म यहज़नून की तिलावत हुई, लगभग 8—10 मिनट तक विभिन्न आयतें इस तिलावत में जुड़ती रहीं। नूर वाली आयत परसमापन हुआ, जिसके बाद कुछ देर तक वातावरण या नूर या नूर के नारों से गूँजता रहा। फिर

खत्म ख्वाजगान की सी शैली में सूफ़ीवाद के मार्गों के 70 सिलसिलों पर दुरूद और सलाम का तारतम्य चलता रहा। इस प्रक्रिया में लगभग आधा घण्टा खर्च हुआ।

कार्यक्रम चूँकि मेरे बैठते ही आरम्भ हो गया था और उसके बाद कभी संगीत की तरंग और कभी या नूर के नारों ने पूरी तरह लीन कर लिया था। इसलिए आरम्भ में वातावरण का अच्छी तरह अवलोकन नहीं कर सका था। अब जो यह सिलसिला थमा तो मैंने अपने आस-पास का जायज़ा लेने की कोशिश की। अब तक आँखें अर्ध अंधकार माहौल की आदी हो चुकी थीं लेकिन फिर भी मंच पर बैठे लोगों के चेहरे मुहरे कुछ तो दूरी के कारण और कुछ विपरीत दिशा से मशअल की रौशनी और मंच के आधे भाग पर अर्ध अंधकार के कारण स्पष्ट दिखायी नहीं देता था। हाँ, इतना पता चल रहा था कि पहली पंक्ति में कुल सात कुर्सियाँ लगायी गयी हैं जिनपर विभिन्न सूफ़ी लिबासों में शायद सात भू-खंडों के विभिन्न कुतुब बैठे हैं। हाँ एक व्यक्ति जिसकी सीट कुतुबों के कुतुब के बायीं ओर थीं पश्चिमी शैली के सूट में दाढ़ी मूँछ साफ किए हुए था। कुतुबों के कुतुब की केन्द्रीय कुर्सी दूसरी कुर्सियों से कुछ स्पष्ट दिखायी दे रही थी। उनके सिर पर पगड़ी की बजाए ऊँची दीवार की टोपी थी। जिसपर दूर से विभिन्न कीमती पत्थरों के टँके ने का आभास होता था। उनकी छड़ी के हत्थे से उस समय प्रकाश सा फूटता जब वह उसे विशिष्ट कोण पर घुमाते, उसे देखकर बुजुर्गों के वह चमत्कार याद आ गए कि किस तरह वह अपनी छड़ी से अंधेरे में रौशनी का काम लिया करते थे।

कार्यक्रम का संचालन स्वयं कुतुबों के कुतुब के हाथ में था। अब मुख्य सम्बोधन की बारी थी। पश्चिमी सूट पहने हुए वही कुतुब जो अब तक कुतुबों के कुतुब के पास बैठा था, अपनी जगह से उठा, डाइस पर आया। एक हाथ से चश्मे को ठीक किया और दूसरे हाथ से सम्बोधन की लिखित प्रति अपने सामने रखी। फिर उपस्थित लोगों पर एक नज़र डालते हुए बोलाः या अली मदद। इसके उत्तर में विभिन्न तरह की आवाज़ें आयीं। कुछ कोनों से हैदरी नारा उठा और अगली पंक्तियों से कुछ लोग उछल-उछल कर अली दे दम दम अन्दर का धमाल डालने लगे। कुछ देर तक अफरा-तफरी का माहौल रहा। जब शोर रुका तो विद्वान सम्बोधनकर्त्ता ने अपना सम्बोधन नियमित रूप से आरम्भ किया। फ़रमायाः

बुजुर्गों और दोस्तों! यह मौला अली (रज़ि०) की कृपा है कि 40 वर्ष के बाद हम अपने वार्षिक सम्मेलन के लिए एक बार फिर लस्तम पोख की भूमि पर एकत्र हुए हैं। लस्तम पोख से हमें प्यार है और लस्तम पोख हमसे प्यार करता है। यह विचित्र संयोग है कि चालीस वर्ष पहले भी लस्तम पोख में मुख्य भाषण की बारी मेरे ही नाम की निकली थी। तब मैं नौजवान था और मेरे बहुत से प्रस्तावों को उस समय के बुजुर्गों ने आश्चर्य और चिन्ता के साथ देखा था। मैं आभारी हूँ उन बुजुर्गों का कि उन्होंने अपने आरक्षणों के बावजूद हमारे कुछ प्रस्तावों को स्वीकार किया। तब मैंने बहुत ज़ोर-शोर के साथ यह

बात रखी थी कि शैखवाद के भविष्य के लिए आवश्यक है कि उसे जनसेवा के कामों से जोड़ा जाए। आज मैं फिर इस बात को दुहराना चाहता हूँ कि वह दिन गए जब कब्र वाले की कृपा के भरोसे जनता हमारे पीछे चला करती थी। अब यदि हमें जीवित रहना है तो कृपा को एक जीवित और भौतिक रूप देना होगा। शैक्षिक और कल्याणकारी संस्थाओं का जाल बिछाना होगा, अस्पताल स्थापित करने होंगे। कला, शायरी और संगीत की सेवा और इस्लामी संस्कृति के विकास के पर्दे में पैग़म्बर के पवित्र घरवालों की श्रेष्ठता का नारा लगाना होगा। हमें खुशी है कि सूफ़ी आन्दोलन ने नये दौर की नयी आवश्यकताओं को समझा है और बहुत से सज्जादा नशीनों ने अपनी आय का एक निर्धारित भाग कल्याणकारी कार्यों पर खर्च करने की योजना बनायी है। कुछ देशों में शेख लोग सम्मेलनों के माध्यम से भी यह सन्देश फैला है कि हर दरगाह और मज़ार से जुड़ी कोई मदरसा या शिक्षण संस्थान अवश्य स्थापित किया जाए ताकि सूफ़ियों के दामन पर नज़रानों (उपहारों) और दान प्राप्त करने का दाग़ कुछ हल्का हो सके।

याद रखिए! दुनिया तेज़ी से बदल रही है। अब केवल जुब्बा और पगड़ी के दिखावे से या अपने आप को पैग़म्बर का घरवाला घोषित करके हम बहुत दिनों तक अपना भ्रम क़ायम नहीं रख सकते। एक ऐसी दुनिया में जहाँ नस्लवाद को बुराई समझा जाता हो। हम अपने आप को सैय्यद बताकर लोगों को अपने आज्ञापालन के लिए विवश नहीं कर सकते। हाँ जनसेवा के माध्यम से हम उनके अन्दर पलने वाले विद्रोह को नियन्त्रित कर सकते हैं।

लस्तम पोख के इस सम्मेलन में आप लोगों के लिए एक शुभ सूचना लाया हूँ। आने वाले दिनों में सूफ़ियों के सामाजिक और राजनैतिक कद काठी ऊँचा करने के लिए पैग़म्बर के घरवालों के कुछ राज्यों के सहयोग से हमने पश्चिम की कुछ यूनिवर्सिटियों में ऐसी सूची के जारी करने की व्यवस्था की है जो दुनिया की प्रभावशाली व्यक्तित्वों में हमारे सम्मिलित होने की विशेष तौर पर व्यवस्था करेंगे। दुनिया में इस समय केवल दो शासक आल-ए बैत के सिलसिले से अपना रिश्ता जोड़ते हैं। हमें इस सिलसिले को फैला देने की कोशिश जारी रखनी है। कुछ शासकों से हमारे शैखों का मिलना-जुलना बढ़ा है और कुछ जगहों पर बहुत सफलता की संभावनाएँ हैं। मैं चाहूँगा कि आगे के व्यावहारिक कार्यक्रमों में इसे वरीयता के आधार पर सम्मिलित किया जाए।

याद रखिए! पश्चिम हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है। न केवल इसलिए कि इसके प्रभाव इस ज़माने में पूरी दुनिया पर पड़ते हैं बल्कि इसलिए भी कि पश्चिम में अविवेकपूर्ण रवैये का जो सामान्य माहौल पाया जाता है, उसमें सूफ़ीवाद, कबाला या टैरट कार्ड और इस तरह की दूसरी चीज़ों के लिए काफ़ी गुंजाइश है। हमें खुशी है कि पिछले 40 वर्षों में पश्चिम के इस अनुकूल वातावरण से हमने उपयुक्त लाभ उठाया है लेकिन अब भी करने को बहुत कुछ शेष है। मैं प्रारम्भ से ही इस बात का समर्थक रहा हूँ कि

आधुनिक पश्चिमी शिक्षा हमारे उद्देश्यों के विपरीत नहीं है। बल्कि यह शिक्षा जो आध्यात्मिक शून्य पैदा करती है, उसमें हमारे लिए काम की बड़ी संभावना है। शर्त यह है कि हम इस संभावना से मनचाहा लाभ प्राप्त कर सकें।

आने वाले दिनों में पूर्वी देशों में उथल-पुथल के सन्देह हैं। हमें जानना चाहिए कि लोकतन्त्र और विचार स्वतन्त्रता के नारे हमारे उद्देश्यों के विपरीत हैं। हमें भूमिगत पनपते इन आन्दोलनों की गंभीरता से पड़ताल करनी चाहिए। आशा है कि व्यावहारिक कार्यक्रम की बैठक में इन मामलों पर खुलकर वार्ता होगी। एक और बात जिसकी ओर मैं आप लोगों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, वह सूफ़ीवाद के नये संगठनात्मक ढाँचे से सम्बन्धित है। कुछ सूफ़ी सिलसिलों ने बीसवीं सदी के आरम्भ में पश्चिमी शैली के संगठनात्मक फ्रण्ट स्थापित किए, इससे हमारे मानने वालों की संख्या में मनचाही वृद्धि हुई, धर्म की सूफ़ी व्याख्या सामान्य जनता की नस-नस में बैठ गयी। लेकिन यह भी एक वास्तविकता है कि दीन के इन मानने वालों पर यह बात पूरी तरह स्पष्ट नहीं कि इनकी वास्तविक हैसियत सूफ़ी आन्दोलन के विस्तार की है। सन्देह है कि कल कोई महत्वाकांक्षी या कोई सुधारवादी आन्दोलन अज्ञानियों की इस भीड़ को पूर्णतः अन्य कामों में लगा दे। इस सम्बन्ध में भी ठोस योजना बनाने की आवश्यकता है।

और हाँ अन्त में एक महत्वपूर्ण बिन्दु की ओर ध्यान दिलाना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ यद्यपि आप में से कुछ लोगों को मेरी इन बातों से मतभेद हो सकता है। इधर पिछले कुछ वर्षों में हमारे कुछ वर्गों ने महदी के आने का कुछ अधिक ही शोर मचा रखा है। स्थिति यह है कि कुछ लोग दिन और वर्ष के निर्धारण के साथ महदी के आगमन का बैचेनी से प्रतीक्षा कर रहे हैं। यह स्थिति एक सामान्य खिन्नता का कारण बन सकती है। मैं एक बार फिर यह कहना चाहता हूँ कि वह दिन गए जब आप केवल पौराणिक किस्से कहानियों और जुब्बा और पगड़ी के सहारे पैग़म्बर के परिवार का नाम लेकर सामान्य जनता के दिलों को अपनी मुठ्ठी में रखा करते थे। अब इस पुरानी रणनीति पर हठपूर्वक चलना विनाशकारी हो सकता है। यदि सूफ़ी आन्दोलन को जीवित रहना है और पैग़म्बर के घरवालों के नाम लेने वालों को अपना नियन्त्रण बनाए रखना है तो हमें नए ज़माने की नयी आवश्यकताओं को समझना होगा।

नूरानी कुतुब आका इस्माईल का मुख्य भाषण या अली मदद के शब्दों पर समाप्त हुआ लेकिन इस बार उपस्थित लोगों की ओर से पहले जैसी गर्मजोशी नहीं थी। न तो हैदरी नारे लगाए गए और न ही किसी ने धमाल डालने की आवश्यकता महसूस की। हाँ, सम्बोधन के दौरान कभी-कभी उपस्थित लोगों की पंक्तियों में से अल्लाह अल्लाह की आवाज़ सुनायी देती रही जो वास्तव में किसी समर्थन की बजाए मतभेद प्रकट करने का एक शरीफाना तरीका समझा जाता था ।

तीसरा भाषण अन्तिम जमाने के कुतुब आयतुल्लाह मुजतहिदी का था। उन्होंने बहुत स्पष्ट शब्दों में सूफी पहनावे के सम्बन्ध में आका इस्माईल के दृष्टिकोण से मतभेद प्रकट किया। फ़रमाया, लिबास के बारे में हमें किसी हीन भावना का शिकार नहीं होना चाहिए। हमारी आध्यात्मिकता के सारे करिश्मे जुब्बा और पगड़ी के सहारे ही क़ायम हैं। यह हमारे पूर्वजों की सुन्नत (परम्परा) है। इसे छोड़ना आध्यात्मिक लोगों के दृष्टिकोण से विचलन ही नहीं बल्कि गद्दारी भी होगी। इसके अतिरिक्त उन्होंने फ़रमायाः मैं विद्वान भाषणकर्ता को परामर्श दूँगा कि वह आध्यात्मिक लोगों के पहनावे में एक बार अपने नूरानी व्यक्तित्व को देखने का प्रयास करें और अपने पूर्वजों की तरह मुबारक दाढ़ी की परम्परा को अपनाएँ तो दर्पण में ही नहीं बल्कि दर्पण से हटकर भी उन्हें महसूस होगा कि पवित्रता का एक नूरानी कुंडल उनके चारों ओर कायम हो गया है। यह सच्चाई है कि हम आध्यात्मिक लोग हैं और हमारे लिए वाह्य चीज़ों का ध्यान रखना हमारी पहचान नहीं लेकिन सामान्य जनता को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए आध्यात्मिक लिबास और रहन-सहन का ध्यान रखना आवश्यक है। हमारे हज़ार वर्षीय इतिहास में लिबास ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है और आज भी हमारी शान-शौकत में लिबास को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

अन्तिम ज़माने के कुतुब की इस बात का मजलिस में सम्मिलित लोगों ने ज़ोरदार समर्थन किया। कुछ देर तक वातावरण या अली या अली के नारों से गूँजता रहा। शोर थमा तो अंतिम ज़माने के कुतुब ने फ़रमाया :

सम्मानित श्रोताओंः हमे इस बिन्दु को नहीं भूलना चाहिए कि इरफान (बोध) और सूफीवाद के बिना यह एक रुखा-सूखा धर्म था। हमने इरफान का तत्व डालकर इस धर्म को नज़रों के लिए आकर्षक बनाया। सामान्य लोगों में इसकी लोकप्रियता का साधन पैदा हुआ और हमारे इस प्रसार को हमारे आसमानी लिबास ने संभव कर दिखाया। कुछ यही हालत महदी की पौराणिक कहानी की भी है। जिसने सदियों से डूबते दिलों की मसीहाई की हैं। यह सच है कि अब इस लगातार प्रतीक्षा से और अतीत में कच्चे पक्के महदियों के प्रकट होने के कारण इस गुब्बारे से हवा निकलती जा रही है। लेकिन यह भी एक वास्तविकता है कि अतीत की तुलना में आज महदी के आगमन पर विश्वास करने वाले और उसकी प्रतीक्षा में आहें भरने वाले कहीं अधिक हैं। हाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि अब इस पौराणिक किस्से को आगे किस तरह बढ़ाया जाए। एक नये इज्तेहाद की आवश्यकता का मैं इन्कार नहीं करता लेकिन महदी की पौराणिक कहानी को पूरी तरह रद्द कर देना हमारे वैचारिक इतिहास से बग़ावत होगी। याद रखिए! यदि एक चीज़ भी सन्देह के घेरे में आ गयी तो फिर मुजाहिदा, कश्फ, तवस्सुल, तैउल अर्ज़, तरीक़त, हक़ीकत मानो हर चीज़ पर प्रश्न चिन्ह लग जायेगा। इसलिए इस सम्बन्ध में किसी बड़े रणनीतिक परिवर्तन से पहले बहुत कुछ विचार-विमर्श और चिन्तन करने की आवश्यकता

होगी, आशा है कि व्यावहारिक कार्यक्रम बनाने के लिए जो बैठक होगी उसमें हम इन बातों पर विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे। हमारे बुजुर्गों की पवित्र आत्माएँ हमारे साथ हैं, बल्कि निरन्तर हम पर ध्यान रखे हुए हैं। आशा है हम उनके सम्मान का हर संभव ध्यान रखेंगे।

चौथा भाषण आध्यात्मिक कुतुब सुल्तानुल औलिया शेख हाशिम का था। परेशानी यह थी कि उनका भाषण तुर्की भाषा में था और तुर्की भाषा के बारे में मेरी जानकारी काफी कम थी। इसके अतिरिक्त समस्या यह थी कि वह शायद बुढ़ापे के कारण शब्दों को अच्छी तरह बोलने और वाक्यों के क्रम को उपयुक्त रखने की क्षमता नहीं रखते थे। दो-तीन वाक्य बोलते, फिर कुछ रुक जाते, फिर कुछ इस तरह से बोलते जैसे यह बातें उन पर आकाशवाणी हो रही हों। भाषण के दौरान ही कई बार अहल-ए बैत अर्थात पैग़म्बर के घरवालों के उल्लेख करते हुए कई बार उनकी आँखें भर आईं। उन्होंने कई बार प्रतीक्षित महदी का उल्लेख किया और प्रत्येक उल्लेख पर आसमान की तरफ कुछ इस तरह आशा भरी निगाहों से देखा जैसे अब महदी के अवतरित होने की घड़ी निकट हो। उनके भाषण में तुर्क प्रधानमन्त्री के उल्लेख भी आए और एक बात जिस पर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ वह यह थी कि अलीगढ़ और तबलीग़ी जमाअत का शब्द भी कई बार उनकी जुबान पर आया। आधे घण्टे के लम्बे भाषण के दौरान मैं केवल दो ही बातें समझ सका। सर्वप्रथम एक ऐसे दौर में जब सरकार पर अन्दर-अन्दर नक्शबन्दियों को नियन्त्रण प्राप्त होता जा रहा है। महदी के प्रकट होने का शोर करना अत्यन्त अनुपयुक्त बल्कि विवेक के विरुद्ध है। सुल्तानुल औलिया ने इस बात को स्पष्ट किया कि महदी की पौराणिकता पर विश्वास एक चीज़ है और अनुपयुक्त समय पर उसका शोर करना पूर्णतः दूसरी चीज़ है। उन्होंने इस सम्बन्ध में रणनीति पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता पर बल दिया। दूसरी बात जो मेरे लिए विशेष रुचि और आश्चर्य का कारण थी वह बार-बार अलीगढ़ का उल्लेख था। पूरी बात तो समझ में न आयी, हाँ, इतना अनुमान हुआ कि आध्यात्मिक लोगों की अन्दरूनी राजनीति के कारण अलीगढ़ के कोई साहब जो कुतुब के पद पर विराजमान थे उन्हें नये संगठनात्मक ढाँचे में प्रतिनिधित्व से वंचित होना पड़ा है। सुल्तानुल औलिया को इस बात का बहुत दुख था। वह इसे नक्शबन्दी विचारधारा का हक मारना समझ रहे थे और इस बारे में ज़ोरदार विरोध प्रदर्शन कर रहे थे। एक तो भाषा का पर्दा दूसरे अलीगढ़ के उल्लेख से पैदा होने वाली उत्सुकता, मैंने सोचा क्यों न किसी से पूछूँ कि इस कहानी की पृष्ठभूमि क्या है? लेकिन परेशानी यह थी कि हम केबिन नुमा बालकोनी में बिठाए गए थे और इसलिए साथ में बैठे प्रतिनिधियों से भी विचार-विमर्श का कोई अवसर प्राप्त न था। कुछ वर्षों पहले वेनिस के एक ऐतिहासिक थियेटर में जब मुझे इसी तरह के एक केबिन में बैठने का अवसर मिला था तो उस समय वास्तव में यह विशेष सौभाग्य और सम्मान की बात लग रही थी। आज केबिन की

यह व्यवस्था मुझे एक तरह का एकान्त का कैदखाना लग रही थी। वह तो कहिए कि अगला भाषण पंजाबी प्रभावित उर्दू में था और भाषणकर्ता ने सुल्तानुल औलिया से इस सम्बन्ध में अपना मतभेद खुलकर प्रकट किया था इसलिए जो बातें मुझे तुर्की भाषा के कारण कम समझ में आयी थीं वह अल्लामा बहरुल उलूम के उर्दू भाषण के कारण पर्याप्त रूप से स्पष्ट हो गयीं।

सफेद ऊँची दीवार की टोपी और कंधों पर हरी दोशाला अल्लामा बहरुल उलूम के भारी-भरकम शरीर पर बहुत सुन्दर लग रही थी। दूसरे भाषणकर्ताओं की तरह हाथ में कोई कोमल छड़ी लेने की बजाए उन्होंने पूरे छह फीट की लाठी सँभाल रखी थी। अब जो उन्होंने या अली के नारे के साथ अपनी लाठी हवा में उठायी तो ऐसा लगा जैसे वह मंच पर नहीं बल्कि युद्ध के मैदान में दुश्मनों के विरुद्ध टक्कर ले रहे हैं। आरम्भ में तो उन्होंने शैखों की कॉन्फ्रेन्स के सन्दर्भ में अपनी महत्वपूर्ण सेवाओं का उल्लेख किया। फिर इस बात पर अपनी नाराज़गी प्रकट की कि नक्शबन्दी शेख कादरी सिलसिले के मुरीदों को अपनी बैअत में क्यों ले रहे हैं। एक दूसरे के प्रभाव क्षेत्र में हस्तक्षेप करने के कारण एक तरह की व्यावसायिक स्पर्धा ने जन्म लिया है इसकी कठोरता से नोटिस लेने की आवश्यकता है। उन्होंने इस मुकाबले का कारण सिलसिलों की उस धारणा को बताया जिसके अनुसार सूफियों ने एक व्यक्ति को एक ही समय में अनेक सिलसिलों में बैअत करने की अनुमति दे रखी है। उनका कहना था कि यदि लोग अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र में काम करें, एक दूसरे के प्रभाव क्षेत्र में सेंध न लगाएँ तो इससे सूफियों की सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। रही यह बात कि अलीगढ़ के जिन साहब के अपदस्त होने का सुल्तानुल औलिया को इतना अधिक दुख है तो इसकी वास्तविकता यह है कि उनकी नियुक्ति ही सरासर ग़लत थी। संगठनात्मक ढाँचे में किसी ऐसे समूह या ऐसे संगठन का प्रतिनिधित्व का कोई अधिकार नहीं बनता जहाँ जनता के स्तर पर बैअत की व्यवस्था नहीं की जाती हो। उन्होंने फ़रमाया कि हम उन्हें नक्शबन्दी सिलसिले से प्रशिक्षण प्राप्त तो अवश्य समझते हैं, उनके यहाँ विशेष लोगों की गर्दनें बैअत की व्यवस्था से जुड़ी भी हैं और यह भी सच्चाई है कि उन्होंने नक्शबन्दी धर्म को लोकप्रियता प्रदान करने, बुजुर्गों के कश्फ और चमत्कार के क़िस्से फैलाना, कब्रों का कश्फ, पैग़म्बर की ज़ियारत, सच्चाई का अवलोकन, तैउल अर्ज़ और पुण्य को पहुँचाने जैसे प्रश्नों को सामान्य जनता में प्रचलित कराने में मुख्य भूमिका निभायी है। हम उनकी महान सेवाओं को खुले दिल से स्वीकार करते हैं। यह भी सच है कि किसी बड़े से बड़े उर्स की तुलना में उनके वार्षिक सम्मेलन में अवाम की भीड़ कहीं अधिक होती है। बल्कि अब तो इस भीड़ की तुलना मिना में एकत्र होने वाली हाजियों की संख्या से की जाने लगी है। लेकिन जब तक सामान्य जनता नियमित रूप से बैअत के सिलसिले से नहीं जुड़ती हम उन्हें अपने संगठन के ढाँचे का

अंग समझने में मजबूरी महसूस करते हैं और इसलिए मैं यह समझता हूँ कि कम से कम कुतुब की कुर्सी पर इन लोगों का अधिकार नहीं बनता।

श्रोताओं की अगली पंक्तियों में निश्चित रूप से वैकल्पिक अनुवादों की व्यवस्था थी क्योंकि प्रतिभागियों की पंक्तियों में बहुत से लोगों ने हेडफोन लगा रखे थे। इसीलिए जब अल्लामा बहरुल उलूम का पंजाबी प्रभावित उर्दू में यह भाषण समाप्त हुआ तो इस पर मजलिस में मिली-जुली प्रतिक्रिया सामने आयी। किसी ओर से أحسنت أحسنت अहसन्त अहसन्त (अच्छा कहा, अच्छा कहा) की आवाज़ उठी, किसी ने या अली का नारा लगाया और एक कोने से ग़लत ग़लत की आवाज़ सुनायी दी।

अगले सम्बोधनकर्ता स्थानीय कुतुब सुल्तानुल मशायख सालिकुल अल्वी बलदुल अमीन से आए थे। उनके भाषण का अधिकतर भाग वहाबियों के विरुद्ध शिकायतों के लिए समर्पित था। नजदी उपद्रव के विरुद्ध उनके मुँह से ज़हर उगला जा रहा था। हाँ एक बात जो मुझे उल्लेखनीय मालूम हुई वह यह थी कि उन्हें सूफियों के प्रभाव क्षेत्र में महिलाओं के प्रवेश पर कठोर आपत्ति थी। उन्होंने फ़रमाया कि मौलवी नृत्य में औरतों का प्रवेश हमारी परम्परा के विरुद्ध है। हमारे यहाँ यदि रास्ते से हटा भी गया है तो अमरदपरस्ती (समलैंगिकता) के स्तर पर। इश्क़-ए मजाज़ी से इश्क़-ए हकीकी की यात्रा इसी सन्दर्भ में सम्पन्न होती रही है। औरतों का नृत्य और समाअ की महफिलों में प्रवेश वास्तव में उन लोगों के मन की पैदावार है जिनकी निगाहों को पश्चिमी संस्कृति की बनावटी चमक ने वशीभूत कर रखा है। उन्होंने आगे फ़रमाया कि मराकश से मलेशिया तक हमें इस समय एक बड़ा चैलेन्ज वहाबी गायकों की ओर से मिल रहा है। अबू शेअर का गीत

| | |
|---|---|
| جل الذی سواک | یا مصطفیٰ محلاک |
| انت حبیب الروح | روحی العزیزہ فداک |
| या मुस्तफा महल्लाक | जल्लल लज़ी सवाक |
| रुहिल अज़ीज़ फिदाक | अन्त हबीबुर्रुह |

जो अब तक श्रोताओं को बैचेन करके रुलाता, पैग़म्बर (सल्ल०) की ज़ियारत का शौक जगाता और जिसके प्रभाव में अल्लाह के पैग़म्बर की एक झलक देखने को समाअ की मजलिसों में लोग तड़पते, आज इस गीत को वहाबी गायकों जैसे आयदतुल अय्यूबी के लोकप्रिय गानों से खतरा है। शेअर और गीत हम सूफियों का विशेष मैदान रहा है। अरबी, फारसी, पंजाबी, उर्दू और इस्लामी दुनिया की विभिन्न भाषाओं में हमने पैग़म्बर से प्यार और पैग़म्बर के घरवालों से प्रेम का शोर शायरी और गानों के सहारे ही किया है। कव्वाली से कसीदा और ढोल से बाँसुरी की लय के माध्यम से हमने सामान्य जनता के दिल अपनी मुट्ठी में रखे हैं। लेकिन अब कुछ वहाबी गायिकाएँ शायरी और नअत का

वैकल्पिक संस्करण तैयार करने में लगी हुई हैं। उनमें से कुछ को बड़ी तेजी से लोकप्रियता मिल रही है। यह एक चिन्ता की बात है। इसका तुरन्त नोटिस लिया जाना चाहिए। यदि यह मैदान हमारे हाथों से निकल गया तो न मीलाद की मजलिसें शेष रह पायेंगी, न हुसैन की मुहब्बत में आँसू बहाने वाले रहेंगे और न ही समाअ की मजलिसों में पैग़म्बर से प्यार करने वाले दिवानों की भीड़ दिखायी देगी। दोस्तो! इससे पहले की काफिला आगे बढ़ जाए, जाग जाओ। पैग़म्बर के घरवालों की मुहब्बत तुम्हारे साथ है, नयी चुनौतियों का सामना करने की तैयारी करो।

अब बारी थी कुतुबों के कुतुब की। दुरूद और सलाम के बाद वह कुछ इस तरह बोलेः मेरे प्यारे दोस्तों! पैग़म्बर के घरवालों और सुन्नत का सेवक आपके सामने संबोधन कर रहा है।

उनके इस पहले ही वाक्य पर समर्थन और पुष्टि के लिए वह शोर उठा कि खुदा की पनाह। या ग़ौसाहू या गौसाहू, या कुतुबुल अकताब के नारों से देर तक मजलिस गूँजती रही। शोर थमा तो उन्होंने नियमित रूप से अपना अध्यक्षीय भाषण आरम्भ किया। फ़रमायाः लस्तम पोख के इस सम्मेलन में आप लोगों के भाग लेने पर मैं दिल की गहराइयों से आप सभी लोगों का आभार प्रकट करना अपने पद का कर्त्तव्य समझता हूँ। मैं अपने कुतुबों और सहयोगियों का भी आभार प्रकट करना चाहता हूँ कि उन्होंने बड़ी सफाई और बिना किसी संकोच के मुख्य भाषण पर समर्थन और आलोचना और विश्लेषण प्रकट किया। संगठन के एक बड़े ढाँचे में मतभेदों का पाया जाना एक स्वस्थ निशानी है। इससे हमें विभिन्न दृष्टिकोणों को समझने में मदद मिलती है। आशा है कि कल के व्यावहारिक कार्यक्रम तैयार करने वाली बैठकों में आज का यह भाषण मार्गदर्शन का काम करेगा। दिल छोटा मत कीजिए। पैग़म्बर के घरवालों के सेवकों को चुनौतियाँ तो हर ज़माने में मिलती रही हैं। काहिरा का पतन हो या अलमूत का पतन, अब्बासी बग़दाद का पतन हो या मुल्तान की विलायत का अन्त, हमने संकट के प्रत्येक क्षण में काम का नया मैदान ढूँढ निकाला है। थोड़ा विचार कीजिए! क्या किसी के मन में भी यह बात आती थी कि उमैय्या वंश की विशाल सत्ता का तख्ता उलटा जा सकता है। हमने इस काम के लिए एक तरफ तो अब्बासी वंश के झण्डा को उठाया और दूसरी तरफ उत्तर अफ्रीका से फातिमा वंश के चाहने वालों को संगठित करके काहिरा में ला बैठाया। अब्बासी सरपरस्ती में ही बवैह वंश के फलने-फूलने का अवसर उपलब्ध किया। इतिहास इस बात पर गवाह है कि अब्बासी, फातिमी और उमैय्या तीनों वैकल्पिक खिलाफतें अन्ततः हमारे विचारों और दृष्टिकोणों और उमंगों का विस्तार बन गयीं और जब राजनीतिक व्यवस्था को सँभालना हमारे लिए संभव न रहा तो हमने आध्यात्मिक ख़िलाफत के लिए ज़मीन तैयार की। देखते-देखते पर्दे के पीछे एक ऐसी न दिखायी देने वाले

संगठन की सत्ता स्थापित कर दी कि उसके प्रभाव से अब दुनिया का कोई भी भाग और पूरब और पश्चिम की कोई सरकार पूरी तरह मुक्त नहीं।

मेरे दोस्तों! क़ुरआन मजीद का आह्वान नस्लवाद का कठोर विरोधी है। यहाँ तक कि क़ुरआन मजीद अल्लाह के पैग़म्बर की नर सन्तान के अस्तित्व से भी इंकार करता है। इसका दृष्टिकोण है कि मुहम्मद (सल्ल०) तुम मर्दों में से किसी के बाप नहीं, लेकिन हमारे साहस को शाबासी दीजिए कि हमने न केवल यह कि पैग़म्बर के वंशज का दर्शन गढ़ा, पैग़म्बर की सन्तान की श्रेष्ठता का ज़ोरदार प्रचार किया बल्कि अली की फ़ातिमी सन्तान को अल्लाह के पैग़म्बर के नस्लीय उत्तराधिकारी की हैसियत से प्रस्तुत कर दिया। हमारा प्रचार-प्रसार इतना ज़ोरदार था कि सामान्य जनता ने अली की सन्तान को पैग़म्बर की सन्तान की हैसियत से स्वीकार कर लिया। अब पंजतन सभी मुसलमानों के साझा अक़ीदे का अंग है। हमारे शायरों और साहित्यकारों ने क़ुरआन के मुक़ाबले में बहुत से क़ुरआन बना कर रख दिए। राहतुल कुलूब से लेकर हिक्मत-ए इशराक, फ़ुसूसुल हिकम, कश्फ़ुल महजूब, अवारिफ़ुल मआरिफ़, इहयाउल उलूम और उम्मुल किताब तक और सबसे बढ़कर मसनवी मअनवी जिसे पहलवी भाषा का क़ुरआन के नाम से प्रसिद्धि मिली हुई हैं। हमने ऐसी किताबों, वज़ीफ़ों के संकलन का भंडार लगा दिया जिसने अन्ततः दीन के एक वैकल्पिक ढाँचे का आकार बना डाला।

प्यारे दोस्तों! हमने अल्लाह के मुकाबले में पैग़म्बर को पवित्रता के सर्वोच्च स्थान पर पहुँचाया, यहाँ तक कि मस्जिद के मेहराबों पर अल्लाह और मुहम्मद के नाम एक दूसरे के सामने लिखे जाने लगे और सबसे बढ़कर यह कि हमने इस उम्मत को दुरूद जैसा उपहार प्रदान किया और उसे पैग़म्बर से मदद माँगने और दुआओं के कबूल होने का नुस्खा बताया। इस उद्देश्य के लिए हमें पैग़म्बर को उनकी कब्र में जीवित करना पड़ा। हमारे प्रचार-प्रसार का कमाल देखिए कि आज सामान्य मुसलमानों की एक बड़ी संख्या इस बात को मानती है कि पैग़म्बर और वली अपनी अपनी कब्रों में जीवित हैं जिनसे हम आध्यात्मिक लोगों का एक विशेष आत्मिक सम्बन्ध है। हमने अल्लाह के पैग़म्बर की कब्र के अन्दर के जीवन के बारे में मुलाकातों और हदीसों पर गवाहियाँ स्थापित की और इस तरह पैग़म्बर की हदीसों को प्राप्त करने का सिलसिला जारी रखा। अल्लाह के पैग़म्बर से सीधे ज्ञान प्राप्त करने का चलता हुआ सिलसिला हमारी वह विशेषता है जिसके आगे ज़ाहिर के उलमा के सब प्रमाण फीके पड़ जाते हैं। हमारे हाथों में यह एक ऐसा हथियार है कि हम जब चाहें इसकी सहायता से एक नयी शरीअत का अविष्कार कर सकते हैं। धर्म की व्याख्या की नई दुनिया सजा सकते हैं।

हमने अपने आप को अल्लाह के औलिया की सूची में सम्मिलित किया और अपने बुज़ुर्गों की कब्रों को ज्ञान और बरकतों के कारखाने घोषित करके उन्हें फ़ातिहों और नज़रानों का माध्यम बना दिया। देखते-देखते क़ुरआन का सामाजिक परिवर्तन का

आन्दोलन कुब्बों और कब्रिस्तानों की संस्कृति बन गया। संसार के किसी भी संगठन के पास इतने बड़े पैमाने पर ऐसे प्रभावकारी संगठन के कार्यालय नहीं हैं, जिनपर आर्थिक रूप से भी आत्मनिर्भरता बल्कि खुशहाली का दौर दौरा हो। बल्कि मैं तो यह कहता हूँ कि कुल आय और सम्पत्तियों में जो कुछ हम दरवेशों के पास है, उसकी तुलना दुनिया की सबसे अमीर सरकारें, नामी गिरामी पूँजीपति और बिलियनेयर क्लब के सदस्य भी नहीं कर सकते।

प्यारे दोस्तों! हमारी गतिविधियों के प्रभाव पश्चिम की वर्चस्व वाली संस्कृति ने भी स्वीकार किया है। पिछले कुछ दशकों में अविवेकशील रवैये और अन्धविश्वासों का जो बोलबाला पश्चिम में हुआ है, उससे आप अनभिज्ञ नहीं। सूफी केन्द्रों, कबाला केन्द्रों, योगकर्मियों और भाग्य निकालने वालों को जो लोकप्रियता मिली है, उसमें हमारे लिए संभावनाओं की एक नयी दुनिया पैदा हुई है। हमें इन संभावनाओं से हर संभव लाभ उठाना है। आने वाले संकट के दिन और ख़तरनाक होंगे लेकिन हमें उन्हीं खतरों में अपने काम का मैदान तलाश करना है। आज के इस भाषण में केवल दो बातें आपको बताना चाहता हूँ; पहली यह कि आने वाले दिनों में पूरब से कहीं अधिक पश्चिम में हमारी सफलता की संभावनाएँ हैं। इतिहास के एक ऐसे चरण में जब आर्थिक और राजनैतिक पंडित पूरब के उत्थान की भविष्यवाणी कर रहे हैं, हमारा ध्यान पूरब से कहीं अधिक पश्चिम पर होना चाहिए। ऐसा इसलिए कि हर पतनशील समाज में प्रसार और सफलता की संभावनाएँ कई गुना बढ़ जाती हैं। इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि हम पूरब से अपना दामन समेटेंगे। पूरब हमारा परम्परागत किला है उसे तो हर हाल में मज़बूत रखना है।

पश्चिम की विजय के लिए और स्वयं पूरब के लोगों में अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए पिछले दिनों अन्तरधार्मिक वार्ताओं की जो योजना बनायी गयी थी उसके मनचाहे परिणाम सामने आ रहे हैं। आने वाले दिनों में वेदान्ती, सामी, मानवी, ईसाई और यहूदी रहबानियत का मिश्रण आध्यात्मिकता का एक नया लोकप्रिय संस्करण तैयार कर सकता है। यह बात आपसे छिपी नहीं कि हम सूफी लोग आध्यात्मिकता की धर्म से अलग धारणा रखते हैं। इसीलिए हमारे बुजुर्गों की कब्रें जनता की आशाओं का केन्द्र बनी हैं। हाँ यह बिन्दु निगाहों से ओझल न हो कि हम विभिन्न धर्मों के बीच बात-चीत के तो ज़ोरदार समर्थक हैं लेकिन स्वयं मुसलमानों के अन्दर किसी मसलकी बातचीत का समर्थन नहीं करते क्योंकि इण्टरफेथ हमारी परिधि को और व्यापक बनाने की संभावनाएँ रखता है जबकि इसके विपरीत कोई इन्ट्राफेथ वार्ता हमारे लिए घातक विष है। ऐसा कोई प्रयास हमें अन्दर से धराशायी कर देगा।

सम्मेलन में कुछ साथियों ने तबलीग़ी नक्शबन्दी सिलसिले पर आपत्ति प्रकट की है। उनका कहना है कि बैअत के संगठनात्मक ढाँचे के बिना हम उन्हें पूरी तरह अपना नहीं

समझ सकते। इस सम्बन्ध में मेरा व्यक्तिगत दृष्टिकोण यह है कि कोई व्यक्ति मुरीद केवल बैअत के कारण नहीं होता। बल्कि मुरीद होना तो एक मानसिक स्तर का नाम है, यदि किसी संगठन से सम्बन्ध रखने वाले मानसिक रूप से इस स्थिति को धारण करते हैं तो कोई कारण नहीं कि उन्हें मात्र नियमित कारवाई का बहाना बनाकर निरस्त कर दिया जाए। बल्कि हमारा काम तो दूसरे संगठनों को भी शेख परस्ती के इसी स्तर पर लाना है, उन्हें इस बात का भरोसा दिलाना है कि ज्ञान और विवेक की पराकाष्ठा उनके बड़े लोगों और संस्थापकों पर समाप्त हुईं। शेख परस्ती जहाँ भी हो, जिस रूप में भी हो, हमारे काम की चीज़ है और हाँ अन्त में बड़े दुख के साथ एक बात और प्रस्तुत करना चाहता हूँ। पिछले वर्ष भी मैंने आप लोगों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया था कि इन्टरनेट का प्रयोग जहाँ हमारे लिए नयी उम्र के लोगों में पहुँचने का एक माध्यम है वहीं बड़ी धैर्यपूर्ण परीक्षा भी। ऐसी साइटों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है जहाँ बैअत के सिलसिले में प्रवेश होने और कृपा और बरकतों की प्राप्ति के लिए पैसे माँगने की भूख बढ़ती जा रही है। यह चीज़ें सूफियों के बारे में कुछ अच्छी छवि नहीं बनातीं। अच्छा होता कि हम फ़ातिहा और नियाज़ के परम्परागत सिलसिले को परम्परागत ढंग से ही जारी रखते। लस्तम पोख का यह सम्मेलन सभी सूफीवाद के 70 सिलसिलों के संस्थापकों को श्रद्धाँजलि अर्पित करता है और यह इरादा प्रकट करता है कि वह अहल-ए बैत (पैग़म्बर के घरवाले) पवित्र लोगों का झण्डा सदैव ऊँचा रखेगा ।

कुतुबों के कुतुब ने अपने भाषण के बाद हवा में हाथ लहराकर या अली का नारा लगाया जिसके उत्तर में पूरी मजलिस या अली या अली के जोशीले नारों से गूँज उठी। इससे पहले कि वह मंच से अपनी सीट पर वापस जाते। मंच पर बैठे दूसरे सभी कुतुब उठ खड़े हुए और एक के बाद एक श्रद्धापूर्वक उनका हाथ चूमते रहे। सभा या ग़ौसाहू! या ग़ौसाहू! या कुतुबुल अकताब के नारों से गूँजती रही। इस दौरान उपस्थित लोगों की अगली पंक्तियों में से कुछ लोग मंच पर पहुँच चुके थे। चलत-फिरत से लग रहा था कि उद्घाटन सत्र समाप्त हो चुका है। इसी दौरान मंच के बायीं ओर से, जहाँ मैदानी क्षेत्र का एहसास होता था, एक काले रंग की कार प्रकट हुई। मैंने सोचा कि इससे पहले कि मजलिस से बड़े लोग सभा से बाहर निकलें, सलाम दुआ और हाथ मिलाने का सौभाग्य प्राप्त कर लिया जाए। इसलिए इस विचार से मैं तेज़ी से अपनी सीट से उठा और मंच की ओर उबड़-खाबड़ ढलान पर चलने लगा। लेकिन यह जानकर बहुत अफसोस हुआ कि सम्मेलन के स्थान के अगले भाग को हम दरवेशों के आगमन के लिए बन्द रखा गया था। ऊपर से अपनी सीट पर बैठे हुए, रंगहीन फाइबर के इस पार्टीशन का आभास नहीं हो सका था। मैं तेज़ी से ऊपर चढ़ता हुआ फिर अपनी सीट पर जा पहुँचा। मेरे मन पर कुतुब के आसपास आध्यात्मिक लोगों की भीड़ और वह काली कार छायी हुई थी जो कुछ ही पलों बाद वहाँ से निकलने वाली थी। मैं इससे वंचित होने से बचना चाहता था।

इसलिए तेज़ तेज़ कदम बढ़ाते हुए खेमे से बाहर आया और तेज़ी से बाहरी गेट की ओर लपका। मुझे देखकर वही तुर्क लड़की मेरी ओर तेज़ कदमों से चलती हुई आयी लेकिन मेरे पास अभी उससे बात करने के लिए समय न था और अब मेरी चाल उसकी रफ्तार से कहीं तेज़ थी। मैं जल्दी-जल्दी बाहरी दरवाज़े से बाहर निकला लेकिन निकलते ही अपनी ग़लती का एहसास हुआ कि यहाँ से नीचे उतरने या मंच तक पहुँचने का कोई रास्ता न था।

# 29
# ऊलू दाग़ से वापसी

उलूदाग़ के मैदानी क्षेत्र में वापस आकर मुझे ऐसा लगा जैसे मैं अब तक जागते में कोई सपना देख रहा था। रात के 10 बज चुके थे। मौसम कुछ शुष्क था। पर्यटकों के समूह, नौजवान जोड़े, हँसते-खेलते बच्चे, जिन्हें मैं आते समय उन पगडण्डियों पर छोड़ आया था, वह सब ग़ायब हो चुके थे। बिजली की रौशनी की एक हरी लकीर उन पगडण्डियों से होती हुई वॉक वे को जा रही थी। वॉक वे पर चलते हुए यद्यपि मैं आसानी से अपने ठहरने की जगह पहुँच गया लेकिन पगडण्डियों के विपरीत यह रास्ता काफी लम्बा था। मुस्तफा ऊग्लू बड़ी बैचेनी से मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने मुझे देखते ही गले लगा लिया, पीठ थपथपाते हुए बोले :

Mission Accomplished (मिशन सफल रहा)

रात देर तक हम लोग इस सत्र के बारे में विभिन्न पहलूओं से विचार करते रहे। मैं चाहता था कि सुबह एक बार फिर उस स्थान पर चला जाए ताकि व्यावहारिक सत्र के स्थान का कुछ पता चल सके लेकिन मुस्तफा ऊग्लू का कहना था कि 'अब वहाँ कुछ भी न होगा'। टूरिस्ट एजेन्सियाँ कार्यक्रम के तुरन्त बाद बड़ी तेज़ी से रातों-रात कार्यक्रम स्थलों को समेटने में महारथ रखती हैं।

अगली सुबह हम लोगों ने ऊलूदाग़ को अलविदा कहा। आज शाम इस्ताम्बोल से मेरी वापसी थी। मैं चाहता था कि जल्द से जल्द इस्ताम्बोल वापस पहुँचू लेकिन टेलीफेरिक की पहली सेवा सुबह आठ बजे से आरम्भ होती थी। बुरसा वापसी पर शेख सऊद की याद आयी। इस्कन्दर कबाब के आतिथ्य का फिर जी चाहा। इच्छा थी कि कुछ देर रुककर उस्मानी तुर्कों की पुरानी राजधानी के कुछ निशानात का अवलोकन करें लेकिन समय की कमी के कारण केवल इस्कन्दर कबाब पर सब्र करना पड़ा।

गोज़ी लियाली से इस्ताम्बोल के समुद्री सफर पर अब हमारे सिरों से वह हरे रंग का पक्षी ग़ायब हो चुका था। यात्रा की रहस्यमयता समाप्त हो चुकी थी। जीवन सामान्य मानव दिननचर्या में लौट आया था। तट का दृश्य आर्कीपलेगो का सौन्दर्य, सूरज की गर्मी में पानी की सतह को छूती हुई ठंडी हवा के थपेड़े आनन्द का वही भाव जगा रहे थे। यहाँ तक कि कभी-कभी आसमान पर पक्षियों का आना भी दिखायी दे जाता था। लेकिन अब यह सब कुछ किसी सूफीपन की रहस्यमयता से रिक्त था। जब अब्दाल और अवताद के सम्मेलन में और कुतुबुल अक्ताब के वार्षिक जलसे में इन आँखों ने सामान्य

मानवीय ढाँचे देखे जो हर तरह से युक्ति और योजना बनाने वाले लोग थे, कश्फ और करामात वाले लोग न थे तो भला हरे पक्षी की रहस्यमयता क्यों शेष रह पाती। आध्यात्मिक लोगों की आन्तरिक राजनीति, उनके आपसी मतभेद और उनके दृढ़ संकल्प के आँखों देखे हाल ने रहस्यमयता की वह नकाब उतार फेंकी थी, वह एहसास मिट गए थे जो बचपन से किसी मजज़ूब के बारे में यह सुनकर पैदा हुए थे कि इन साहब का सम्बन्ध कुतुब और अबदाल के अन्दरूनी हल्के से है। हाँ, यह बात कल रात से मुझे निरन्तर परेशान कर रही थी कि कुतुबुल अकताब का यह दावा कैसे सही हो सकता है कि दुरूद उनका आविष्कार है। हम बचपन से ही दुरूद-ए इब्राहीमी पढ़ते आए हैं, यहाँ तक कि यह नमाज़ में सम्मिलित है। आध्यात्मिक लोगों की यह सभा इसके आविष्कार का श्रेय अपने ऊपर कैसे ले सकती है?

मुस्तफा ऊग्लू कॉफी का प्याला ले आए थे। मुझे खामोश और चिन्तित देखकर कहने लगेः लगता है आप अभी सम्मेलन के माहौल से निकल नहीं पाए हैं। मैंने उनसे अपनी उलझन का उल्लेख किया। कहने लगे मुझे उनके इस दावे पर बिल्कुल आश्चर्य नहीं हुआ। मैं बहुत दिनों से इस सवाल पर सोचता रहा हूँ। इस सम्बन्ध में इतिहास और साहित्य और कुरआन की व्याख्या की सारी किताबें देख डालीं। लेकिन कोई निश्चित बात कहने में उधेड़बुन का शिकार था। अब जो आपने यह बात बतायी कि दुरूद के आविष्कार पर इन लोगों का दावा है तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ, बल्कि इस दावे से मेरे शोध परिणामों की पुष्टि हुई। यह जो आप विभिन्न किस्म के दुरूद सामान्य लोगों के मुँह से निकलते हुए सुनते हैं, कोई दुरूद ताज पढ़ रहा है, कोई दुरूद लखी के जाप में व्यस्त है, किसी ने दुरूद सूर्यानी और किसी ने दुरूद हिज़्यानी लिख रखी है और किसी का दावा है कि उसने दुरूद का सबसे बड़ा संग्रह संकिलत किया है या इसी तरह की दुआ-ए गंजुल अर्श, दुआ-ए जमीला और न जाने कैसे कैसे दुआ और दुरूद के अनगिनत संग्रह उम्मत में प्रकाशित और लोकप्रिय हैं। यह सब कुछ इजाद-ए बन्दा की किस्म ही से तो हैं।

लेकिन इन संग्रहों को तो प्रामाणिक उलमा प्रामाणिक नहीं मानते मैंने मुस्तफा को लगाम देने का प्रयास किया।

बोलेः पहले तो प्रामाणिक उलमा का रवैया इस सम्बन्ध में स्पष्ट नहीं है। उदाहरण के लिए कुछ लोग दुरूद ताज को शिर्क वाले शब्दों के कारण अप्रामाणिक मानते। लेकिन कुछ कहते हैं कि यदि इसका कोई अच्छा सा अर्थ निकाल लिया जाए तो कोई हानि नहीं। दूसरी बात यह कि जो लोग इन गढ़ी हुई दुआ और दुरूद को नहीं मानते वह लोग भी इब्राहीमी दुरूद को प्रामाणिक मानते हैं न? वह इसे अपनी नमाज़ों में सम्मिलित करते हैं।

तो क्या आप इब्राहीमी दुरूद को आध्यात्मिक लोगों का आविष्कार समझते हैं? मैंने मुस्तफा ऊग्लू से पूछा।

जी हाँ, मैं तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ, उन्होंने कहा। फिर फ़रमायाः देखिए इब्राहीमी दुरूद दो कारणों से इतिहास और वह्य के मानक पर पूरा नहीं उतरता। कुरआन में इब्राहीमी दुआ पढ़िए। हज़रत इब्राहीम ने अपनी सन्तान पर कृपा और उपकार की वर्षा की दुआ की। लेकिन अल्लाह के यहाँ से स्पष्ट उत्तर आ गया कि मात्र नस्ल का हवाला कृपा और पुरस्कार की ज़मानत नहीं बन सकता :

قال لا ينال عهدى الظالمين काल ला यनालो अहदी अज़्ज़ालिमीन। अब दूसरा प्रश्न आल से सम्बन्धित है। इब्राहीम की आल पर इतिहास और वह्य दोनों से प्रमाण मिलता है। जबकि मुहम्मद (सल्ल०) की आल के सम्बन्ध में कुरआन और इतिहास की गवाही यह है कि अल्लाह तआला की योजना के कारण आपका नस्लीय सिलसिला आप ही पर समाप्त हो गया। कुरआन घोषणा करता है कि मुहम्मद (सल्ल०) तुम मर्दों में से किसी के बाप नहीं: ما كان محمد آباء أحد من رجالكم मा कान मुहम्मदुन अबा अहदिन मिन रिजालिकुम। जब मुहम्मद की आल ही संसार में मौजूद न हो तो उन पर दुरूद और सलाम का क्या अर्थ है?

फिर आप कुरआन की इस आयत का क्या करेंगे जिसमें ईमानवालों से कहा गया है कि अल्लाह और उसके फ़रिश्ते पैग़म्बर पर दुरूद और सलाम भेजते हैं इसलिए तुम भी उन पर दुरूद और सलाम भेजो।

मेरी यह आपत्ति सुनकर मुस्तफा ऊग्लू मुस्कुराए। बोले सारी समस्या तो इसी आयत की ग़लत व्याख्या से पैदा हुई है। अब देखिए कुरआन ने सीधी सी बात कही थी: إن الله وملائكته يصلون على النبى इन्नल्लाह व मलाइकतेहि युसल्लून अलन नबी कि अल्लाह और उसके फ़रिश्ते पैग़म्बर की सलात करते है इसलिए ऐ मोमिनों तुम भी उनकी सलात और आज्ञापालन करो। अब देखिए पानी मरता कहाँ हैं। कुरआन मजीद में सलात का शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। एक तो यही नमाज़ वाली इबादत के अर्थ में: जैसे फ़रमाया اذا نودى للصلوة فى يوم الجمعة فاسعوا إلى ذكر الله इज़ा नूदिय लिस्सलाति फी यौमिल जुमअते फसऔ इला ज़िक्रिल्लाह अर्थात जब तुम्हें जुमे की नमाज़ के लिए पुकारा जाए तो अल्लाह के ज़िक्र के लिए दौड़ पड़ो। सलात का दूसरा अर्थ समर्थन सहयोग और मदद के हैं। यहाँ इस आयत में यही दूसरा अर्थ निहित है। अर्थात अल्लाह और उसके फ़रिश्ते पैग़म्बर का समर्थन करते हैं, मोमिनों से माँग की गयी है कि वह भी पैग़म्बर का समर्थन और उसके आज्ञापालन का काम जारी रखें। अब देखिए अल्लाह और उसके फ़रिश्तों का समर्थन केवल يصلون यूसल्लून अर्थात सहायता और समर्थन तक है। जबकि मोमिनों से मदद और समर्थन صلوا عليه सल्लू अलैहि के अतिरिक्त سلموا تسليما सल्लिमू तसलीमा अर्थात पूर्ण रूप से आज्ञापालन की भी माँग

की जा रही है। अब कुरआन के इस सीधे-सादे अर्थ पर रिवायत ने कुछ इस तरह पर्दा डाला कि इसका भाव बिल्कुल बदल गया है बल्कि निरर्थक होकर रह गया है।

इस आयत के अवतरण का अवसर यह बताया गया कि जब यह आयत अवतरित हुई तो कुछ सहाबा ने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) से पूछाः ऐ अल्लाह के पैग़म्बर हमें अल्लाह ने आप पर सलात व सलाम भेजने का आदेश दिया है। बताइए कि हम यह कैसे किया करें। रिवायत करने वाला कहता है कि आप (सल्ल०) इस प्रश्न पर कुछ देर खामोश रहे फिर उन्होंने हमें इब्राहीमी दुआ पढ़ने की शिक्षा दी। अब यदि आप इस कहानी पर विश्वास करें तो इसे आयत का मौलिक सन्देश और मुसलमानों से अल्लाह की यह माँग विलुप्त हो जाती है। दूसरे यह कि इस आयत के समझने में बड़ी पेचीदगियाँ पैदा हो जाती हैं। यदि अल्लाह की ओर से माँग मोमिनों से मात्र ज़ुबानी सलात व सलाम का पढ़ना है तो कोई बताए कि अल्लाह की सलात का क्या अर्थ है? क्या अल्लाह भी अपने पैग़म्बर पर اللهم صل علىٰ محمد अल्लाहुम्म सल्ले अला मुहम्मदिन पढ़ता है। है न यह एक बेकार सी बात! लेकिन अधिकतर लोग पैग़म्बर की मुहब्बत के जोश में इन बातों पर विचार नहीं करते और उन क़िस्से कहानियों पर विश्वास कर लेते हैं। जिनका उद्देश्य अल्लाह के पैग़म्बर और उनके मिशन का व्यावहारिक समर्थन और मदद की बजाए लोगों को ज़ुबानी जमा खर्च के काम में व्यस्त रखना है। अब आप लाख दुरूद लखी पढ़ते रहें, इस काम में आपको अपनी मुक्ति या दुनिया में माल दौलत समेटने की युक्ति तो दिखायी दे सकती है, अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) और आपके मिशन की सहायता और समर्थन का कोई सामान पैदा नहीं होता।

मुस्तफा ऊग्लू की यह बातें मेरे लिए रहस्योद्घाटन का दर्जा रखती थीं। उनकी बातों में वज़न था, मैंने सोचा कि जब बात छिड़ ही गयी है तो क्यों न उनकी ऐतिहासिक जानकारी से लाभ उठाया जाए। क्योंकि प्रारम्भिक सदियों की मुस्लिम मेधा पर उनकी गहरी नज़र है। मैंने उनके शोध को तुरन्त स्वीकार करने की बजाए उनसे पूछा कि अच्छा यह बताइए क्या प्रारम्भिक सदियों में इब्राहीमी दुरूद हमारी नमाज़ का अंग नहीं था?

बोलेः ऐतिहासिक स्रोत इस बात की गवाही देते हैं कि कम से कम प्रारम्भिक दो सदियों में मुसलमान तशह्हुद के बाद कोई और दुआ पढ़ते या केवल यूँ ही उठ जाते। रिवायतों और साहित्य की प्रमुख किताबों में भी अब्दुल्लाह बिन मसऊद के हवाले से नक़ल किया गया है कि अल्लाह के पैग़म्बर ने उन्हें शिक्षा दी कि यदि नमाज़ के बीच में हो तो तशह्हुद पढ़ने के बाद तुरन्त खड़े हो जाओ और यदि नमाज़ के अन्त में हो तो तशह्हुद के बाद जो दुआ चाहो माँगो फिर सलाम फेर दो :

إن كان فی وسط الصلوة فانهض □ین تفرغ من تشهدک
وان کنت فی آخرها □ع بعد تشهد بما شاء اللّٰہ ان تدعو ثم سلم

इन कान फ़ी वस्तिस्सलात नहिज़ हीन यफरिग़ मिन तशह्हुद व इन कान फी आखिरहा दआ बाद तशह्हुद बिमा शा अल्लाह इन यदउ सुम्म युसलिम कुछ अन्य रिवायतों में शब्द इस तरह आए हैं

و يستخير أحدكم من الدعاء ماأعجبہ اللہ ثم ليدع اللّٰہ عزو جل

व यस्तखीर अहदकुम मिन दुआ अअजबहू इलैहि फल यदअ अल्लाह इज़्ज़ जल्ल अर्थात फिर अपना चुन लो कोई दुआ जो तुम्हें पसन्द हो और ज़बरदस्त शान वाले अल्लाह से माँगो।

आल-ए मुहम्मद (सल्ल०) एक सुनियोजित विचारधारा की हैसियत से फातिमी दावत की सफलता के बाद सामने आया। वहाँ भी सारा ज़ोर फातिमा की सन्तान पर था। हाँ, अल्लाह के पैग़म्बर के वह करीबी लोग जो निकट सम्बन्ध के हवाले से ख़िलाफत पर अपना अधिकार समझते वह अपने आप को अहल-ए बैत की व्यापक शब्दावली से सुसज्जित करते। इसमें अब्बासी भी थे और अल्वी भी, हज़रत अली की फातिमी सन्तान भी थी और ग़ैर फातिमी भी। इस्लाम की प्रारम्भिक ढाई सदियों में मौलूद-ए नबी और ईद-ए फातिमा जैसी चीज़ें आकार नहीं ले सकी थीं। फातिमी ख़िलाफत की स्थापना के बाद सरकारी स्तर पर आल-ए बैत-ए अतहार की श्रेष्ठता के ज़ोरदार चर्चे हुए। आने वाले दिनों में आल-ए मुहम्मद और अहल-ए बैत की धारणा को धार्मिक और पवित्र हैसियत मिल गयी, और जब मुहम्मद (सल्ल०) की आल पर सलात और सलाम भेजना धर्म का अंग बन गया तो फिर उनके आध्यात्मिक नेतृत्व को कौन चुनौती दे सकता था। इसलिए इस्लामी दुनिया के विभिन्न भागों में सैय्यदों की वह सुलभता हुई कि मत पूछिए। सलात और सलाम का यह सिलसिला इतना फैला कि प्रत्येक व्यक्ति ने दुरूद और वजीफों का एक संग्रह तैयार कर डाला। पीरों ने अपने मुरीदों को क़ुरआन मजीद की बजाए कसीदतुल बुर्दा, दलायलुल ख़ैरात और हिज़्बुल बहर जैसी किताबों की तिलावत का निर्देश दिया। ये सभी कसीदे वास्तव में दुरूद ही का विस्तार थे, हर दुरूद हर क़सीदे और हर दुआ से अधिक लाभों की प्राप्ति निश्चित बतायी जाती थी। इन दुआओं और क़सीदों में अल्लाह के पैग़म्बर से मदद माँगी जाती। कुछ समझदार लोग इस पर नाक भौं चढ़ाते। लेकिन सिक्काबन्द उलमा ने इन किताबों को प्रामाणिकता प्रदान कर रखी थी, उनका कहना था कि उन्होंने अपने बुजुर्गों को इन किताबों को पढ़ते हुए देखा। दुरूदों के ये संग्रह और क़सीदे और वज़ीफों के ये भण्डार आज भी उम्मत में विशिष्ट और सामान्य सभी लोगों में समान रूप से लोकप्रिय हैं। इसलिए यह जो उनका दावा है कि हमने दुरूद ईजाद किया, अल्लाह के पैग़म्बर को अल्लाह के बराबर रख दिया, यह दावा सच्चाई से परे नहीं।

तो क्या आप दुरूद और वजीफों के संग्रहों के पीछे भी किसी सुनियोजित योजना का दखल पाते हैं? मैंने अपना हस्तक्षेप जारी रखा।

बोलेः फातिमी आन्दोलन से लेकर आज तक जब आल-ए बैत के हवाले से उम्मत के वैचारिक और दर्शन की पूँजी पर आक्रमण करने का सिलसिला जारी हो तो इस संभावना की अनदेखी नहीं की जा सकती। वज़ीफों और जाप और शेअर और कसीदे का यह सारा भण्डार मेरे विचार में इसी दुरूदी इस्लाम का विस्तार है जिसमें मदद माँगने के लिए अल्लाह के साथ-साथ पैग़म्बर के व्यक्तित्व को भी सम्मिलित किया गया। पैग़म्बर (सल्ल०) को इस विचार से सम्मिलित किया गया ताकि पैग़म्बर की सन्तान के हवाले से सैय्यदों की आध्यात्मिक सत्ता मज़बूत हो सके। कसीदतुल बर्दा, दलायलुल खैरात और हिज़बुल बहर जैसी किताबें अनगिनत कृपाओं की वाहक बतायी गयीं। मानो यह किताबें न हों बल्कि पुण्य तैयार करने के तीव्र गति वाले कारखाने हों जहाँ मोमिनों को एक ही छलाँग में अनगिनत आर्थिक लाभ और परलोक की मुक्ति की शुभ सूचना दी गयी। उदाहरण के लिए बुसैरी को लीजिए, कहा जाता है कि इस कसीदे से खुश होकर अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने सपने में उनके लकवा मारे हुए शरीर को चादर से ढक दिया। सुबह जब वह उठे तो उनकी बीमारी चली गयी। जुज़वली के बारे में कहा जाता है कि वह एक बार एक कूँए की मुड़ेर पर वजू के लिए गए। पानी का स्तर काफी नीचे था। निराश हो लौटने लगे तो एक नयी उम्र की लड़की ने उन्हें यह ताना दिया कि जिस व्यक्ति की ईश परायणता की इतनी ख्याति हो उसे कूँए से पानी न मिले और यह कहते हुए उसने कूँए में थूक दिया। उस लड़की का थूकना था कि कूँए का पानी उबलता हुआ मुड़ेर तक आ गया। जुज़वली ने वजू किया और पूछा कि तेरे इस चमत्कार का रहस्य क्या है? बोलीः इसका कारण इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कि मैं अल्लाह के पैग़म्बर पर अनगिनत दुरूद भेजती हूँ। उसी समय जुज़वली ने तय किया कि वह दुरूद का एक अनोखा संग्रह तैयार करेंगे। दलायलुल खैरात जो मराकश के एक छोटे से गाँव में एक अप्रसिद्ध सूफी के हाथों संकलित हुआ, भूमिगत सूफी संगठन के माध्यम से देखते-देखते बड़े पैमाने पर प्रसारित और लोकप्रिय हो गया। शासकों ने इसकी बहुमूल्य नक्शदार प्रतियाँ तैयार करायीं और उसे अपने पास रखना भलाई और बरकत का माध्यम समझा। जनता और विशेष वर्ग का अधिकतर समय इन जैसी किताबों की पढ़ाई की भेंट चढ़ गया और अल्लाह की अवतरित की हुई वह्य भूले-बिसरे ताक़ की जीनत बन गयी।

मुस्तफा ऊग्लू का बयान जारी था और मैं आश्चर्यचकित था कि बात कहाँ से कहाँ जा पहुँची। मुझे पूरी तरह खामोशी से ध्यान लगाए सुनते देखकर बोलेः क्षमा कीजिएगा मैं तो भाषण देने लगा था।

मैंने कहाः आपने बड़े महत्वपूर्ण प्रश्न छेड़ दिए हैं। हमारी पूरी धार्मिक संस्कृति पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। देखिए बहुत गंभीर और संवेदनशील मामला है। अल्लाह के पैग़म्बर से प्रेम हमारे ईमान का अंग है। उसे आध्यात्मिक लोगों ने जिस तरह पेटेन्ट कर

रखा है और उस पर अपने धोखे और उमंगों का जिस तरह पर्दा डाल रखा है उसे हटाना बहुत सावधानी चाहता है।

उन्होंने मेरी इस बात से सहमति जतायी। बोलेः आपका सन्देह उचित है। आज सामान्य मुसलमान तो दूर, बड़े-बड़े चिन्तकों के लिए भी इस बात का अनुमान लगाना कठिन है कि पैग़म्बर से प्यार के ये सामाजिक प्रदर्शन, जिन्हें हम धार्मिक गतिविधियाँ समझते हैं, अल्लाह के पैग़म्बर के मिशन के प्रतिकूल बल्कि उसको स्थगित करने का प्रमाण हैं। प्रत्यक्ष रूप से तो ऐसा लगता है कि मुसलमानों का धार्मिक जीवन विकास के मार्ग पर अग्रसर है। मीलाद की मजलिसें, उर्स के हंगामें, चिल्ले, गश्त, नअत, मनकबत, कव्वाली, नौहे और सम्मेलन मानो धार्मिक जीवन अपने सौन्दर्य के साथ जारी है। शेअर और गीत की प्रभावशीलता का यह हाल है कि समाअ की महफिलें अब पश्चिमी देशों के वासियों को भी अपनी ओर आकर्षित कर रही हैं। कुछ धार्मिक संगठनों के सम्मेलनों में भीड़ का यह हाल है कि अब यह हज का विश्व सम्मेलन महसूस होता है। लेकिन यह सारे प्रदर्शन नज़र के धोखे के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। यह दुरूदी इस्लाम के प्रदर्शन हैं। रूहानियों का गढ़ा हुआ इस्लाम......... जिसके पैदा किए हुए घोटाले की धुंध में वास्तविक इस्लाम की खोज अब कोई आसान काम नहीं।

मुस्तफा ऊग्लू आज मूड में थे। उनका बयान एक झरने की तरह जारी था। जी तो चाहता था कि वह इसी तरह बोलते रहें और मैं सुनता रहूँ। लेकिन हमारी नाव अब येनीकैपी पहुँच चुकी थी। हमें होटल पहुँचने की जल्दी थी, वापसी के लिए यात्रा का सामान ठीक करना था। मुस्तफा ऊग्लू को यह चिन्ता सता रही थी कि प्राचीन अरबी किताबों का वह उपहार जो अल हकीकः प्रकाशन की ओर से मेरे लिए प्राप्त हुआ था वह यहीं इस्ताम्बोल में न रह जाए। Yenikapi से मैं सीधे होटल पहुँचा और वह किताबों के साथ एयरपोर्ट पर मिलने का वादा करके चले गए। एयरपोर्ट जाते हुए रास्ते में विचार मेरे मन में गूँज रहे थे। इस्ताम्बोल में व्यतीत किए गए वह ग्यारह दिन, जिनमें पिछली ग्यारह सदियों के जीते-जागते साँस्कृतिक और दार्शनिक परिदृश्य की झलक दिखायी दे रही थी, अब ऐसा लग रहा था जैसे इनकी वास्तविकता ग्यारह पलों से अधिक न रही हो। किसे मालूम था कि पलक झपकते ग्यारह दिन इस तरह व्यतीत हो जायेंगे।

# 30
# अन्तिम घोषणा

टर्किश एयरलाइन्स के काउन्टर पर मुस्तफा ऊग्लू को किताबों के पैकेट के साथ अपनी प्रतीक्षा में पाया। जैसे-तैसे चेक-इन की औपचारिक कार्यवाही से निवृत्त हुए। बोझल दिल और नम आँखों के साथ अपने मेज़बान से विदाई ली। इमीग्रेशन की कारवाई से निवृत्त होकर सम्बन्धित जहाज़ के वेंटिग रूम में आया। जल्दी जल्दी किताबों का पैकेट खोला। कुछ अनोखी अरबी किताबों के नये संस्करण पाकर बहुत खुशी हुई। किताब مواقيت الصلوة मवाकीतुस्सलात उलट-पलट कर देखने लगा। इस किताब में गणित के कुछ कठिन प्रश्न, गोलीय त्रिभुज के हल और विभिन्न पेचीदा वृत्तों के रेखांकन को देखकर बहुत आश्चर्य हुआ। नमाज़ के समय निर्धारण का यह बारीक और जटिल चार्ट जो आज हमारी मस्जिदों में कीड़े खाए हुए दफ्ती पर प्राचीनता की निशानी के रूप में लटका रहता है, मुसलमान गणितज्ञों ने इसके संकलन और तैयारी में कितनी कठिनाइयाँ झेलीं, कितने इक्वेशन ईजाद किए, तब कहीं जाकर कुतुब (ध्रुव तारे) के चारों ओर सूर्य की कक्षा का सही अनुमान हुआ और इस तरह विभिन्न स्थानों से किब्ले का निर्धारण संभव हो सका। एक प्राचीन अरबी किताब जिसे कभी हमारी मस्जिदों के समय निर्धारण करने वाले पढ़ा करते, बल्कि अपनी कलात्मक महारथ के कारण उसे सुन्दर बनाने की कोशिश जारी रखते, मुसलमानों की यह बौद्धिक विरासत स्वयं उनके लिए आज कितनी अजनबी बन गयी है? मैं ज्यों-ज्यों इस किताब के पन्ने उलटता गया, अपनी प्राचीन बौद्धिक विरासत की शान पर मेरा आश्चर्य बढ़ता गया। कभी वह दिन थे जब हम ध्रुव तारे से सूरज की कक्षा का कोण मालूम करते। तब रात और दिन की हर गतिविधि पर हमें अपनी पकड़ महसूस होती। आज हम कुतुब और अबदाल के जाल में फँसे अपने आप को परिस्थितियों के उथल-पुथल की दया पर पाते हैं। आध्यात्मिक लोगों ने धीरे-धीरे हमारे खोजी मस्तिष्क को कुछ इस तरह प्रभावित किया कि हमने क़ुरआन की ‘खोज की दावत’ देने से मुँह मोड़कर कश्फ और मुजाहिदे को अपना उद्देश्य घोषित कर डाला। धर्म के नाम पर एक मृग-मरीचिका हमारा पीछा करती रही। परिणाम यह हुआ कि वास्तविक दुनिया में हम दुनिया की क़ौमों पर अपनी अगुआई जारी न रख पाए। नेतृत्व करने वाली उम्मत के पद से हम अपदस्थ हो गए। आध्यात्मिक लोगों की सत्ता अपनी पूरी शानो-शौकत के साथ आज भी कायम है बल्कि इसकी विजय गाथा लगातार व्यापक होती जा रही है। हाँ इस्लाम की व्यापक दावत और मुसलमानों का खोजी मस्तिष्क सदियों से जड़ बना हुआ और निलम्बित है।

जब तक सामान्य मुसलमानों पर यह वास्तविकता नहीं खुलती कि धार्मिक जीवन के प्रचलित प्रदर्शन, आध्यात्मिक लोगों की बैअत और चमत्कार के सिलसिले वास्तव में इस्लाम नहीं बल्कि इस्लाम के इन्कार की पक्की व्यवस्थाएँ हैं, जब तक मुहम्मदी मिशन की प्राप्ति के लिए एक सामान्य बेचैनी पैदा नहीं होती, एक नयी शुरुआत की व्यवस्था कैसे हो सकती है? वास्तविकता पर प्रदूषण की धुंध लगातार गहरी होती जा रही है। लम्बे समय से वह्य के पन्ने बंद हैं बुद्धि कश्फ के निशाने पर है, और इतिहास के परम्परागत अध्ययन में यह दमखम नहीं कि वह इस्लाम पर आध्यात्मिक लोगों के आक्रमण से पर्दा उठा सके।

लोकप्रिय इतिहास जब यह न बता सकता हो कि सूफियों की पूरी दौड़-धूप बल्कि उनका उदय वास्तव में राजनैतिक सत्ता को मज़बूत करने के लिए हुआ तो फिर इतिहास के एक सामान्य छात्र को यह कैसे पता चलेगा कि शम्स के पर्दे में रूमी वास्तव में अपने इस्माईली इमाम शमसुद्दीन के आज्ञापालन का दम भरते हैं जो सुकूतुल मौत के बाद अपने वास्तविक व्यक्तित्व पर पर्दा डालने पर विवश थे। लोकप्रिय इतिहास हमें यह बताता है कि सूफी लोग सदैव राजनीतिक सत्ता से विमुख रहे, समय के शासक से उन्होंने दूरी बनाये रखी। लेकिन इतिहास का गहरा अध्ययन और ऐतिहासिक प्रमाणों का विश्लेषण हमें इस वास्तविकता की सूचना देता है कि मौलविया सम्प्रदाय के सूफियों के तुर्क ख़लीफाओं से निकट सम्बन्ध रहे हैं बल्कि कुछ लोगों ने उनसे निकट सम्बन्ध के लिए रिश्तेदारियाँ भी की हैं। उनके इशारे पर संवदेनशील पदों पर नियुक्तियाँ भी होती रहीं। यहाँ तक कि ख़िलाफत के अन्तिम दिनों में मौलवी बटालियन ने सशस्त्र संघर्ष की अपनी सी कोशिश भी कर डाली। हल्लाज से शहाबुद्दीन मक्तूल तक बड़े सूफियों के क़त्ल के पीछे वैचारिक से कहीं अधिक राजनीतिक कारण काम कर रहे थे। सरमद, विरोधी राजनीतिक कैम्प में होने के कारण फाँसी के फन्दे तक पहुँचे और दिल्ली के सुल्तानों को निज़ामुद्दीन औलिया से जो नफ़रत थी उसके पीछे भी राजनीतिक कारण थे। कहा तो यह जाता है कि ग़ज़ाली पर जब संसार की असारता प्रकट हो गयी तो उन्होंने निज़ामिया बग़दाद की कुर्सी छोड़कर सूफीवाद के दामन में शरण ली। ग़ज़ाली ने المنقد من الضلال अल मुनकज़ मिनज़ ज़लाल में यही आभास देने का प्रयास किया है। हाँ उस ज़माने के विभिन्न राजनीतिक प्रमाणों पर जिन लोगों की गहरी नजर है वह इस बात से अवगत हैं कि ग़ज़ाली का संसार से विमुखता और निज़ामिया बग़दाद से उनका किनारा कश होना वास्तव में अचानक बदलते हुए राजनैतिक परिदृश्य के कारण था। ग़ज़ाली فضائح الباطنية फजायेहुल बातिनीया के लेखक थे, इस्माईलियों के विरुद्ध उनके क़लम ने बड़े जौहर दिखाए थे। जब उनके मुरब्बी (शिक्षा देने वाले) निज़ामुल मुल्क इस्माईली फिदाईन के हाथों अपनी जान गवाँ बैठे तो ग़ज़ाली के लिए ऐसी स्थिति में बग़दाद से फरार होने

के अतिरिक्त और कोई चारा न था। वह हज के बहाने संसार त्याग का प्रचार करते हुए बग़दाद से निकल गए। इस यात्रा में वह मक्का तक तो न पहुँचे हाँ, उनके ज़ुहद और तक्वा और दुनिया छोड़ने का वह चर्चा हुआ कि विरोधी पक्ष के लिए उनके व्यक्तित्व में कोई रुचि नहीं रह गयी। वास्तविकता क्या कुछ होती है और दिखायी क्या कुछ देती है। ऐ अल्लाह! यह कैसा रहस्य है।

अभी मैं इन्हीं विचारों में खोया था कि माइक्रोफोन पर लास्ट कॉल की घोषणा हुई। एयरलाइन्स के एक कर्मचारी ने मेरा कंधा थपथपायाः बोर्डिंग पूरी हो चुकी है, आप अन्तिम यात्री हैं।

मैं चौंक कर उठा तेज़-तेज़ चलते हुए जहाज़ तक आया। इस्ताम्बोल छोड़ते हुए मेरी निगाह में वह ग्यारह दिन और उनसे जुड़ी ग्यारह सदियाँ झिलमिलाने लगीं। लास्ट कॉल की घोषणा पर यदि मैं समय से न जाग जाता और कोई मेरा कंधा न थपथपाता तो शायद मेरा जहाज़ छूट जाता। क्या ही अच्छा होता यह सोई हुई उम्मत भी लास्ट कॉल की घोषणा समय पर सुन सके। कोई उसका कंधा थपथपाए और कहे कि ध्यान और कश्फ में सदियाँ गुज़र गयीं, यदि अब भी न जागे तो एक बार फिर नेतृत्व और इमामत का जहाज छूट जाएगा।